परिप्रेक्ष्य

शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक-आर्थिक संदर्भ

वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

500 प्रतियां

© राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय, 2010
(भारत सरकार द्वारा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम 1956 की धारा 3 के अंतर्गत घोषित)

इस पत्रिका का प्रकाशन प्रति वर्ष अप्रैल, अगस्त और दिसंबर माह में किया जाता है। इसकी प्रतियां चुनिंदा और इच्छुक व्यक्तियों तथा संस्थानों को नि:शुल्क भेजी जाती हैं। यह न्यूपा की वेबसाइट: www.nuepa.org पर नि:शुल्क उपलब्ध है। इसे प्राप्त करने के इच्छुक व्यक्ति और संस्थान निम्निलिखित पते पर आवेदन करें :

अकादमिक संपादक

परिप्रेक्ष्य

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (न्यूपा)
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (न्यूपा) के लिए कुलसचिव, न्यूपा द्वारा प्रकाशित तथा बच्चन सिंह, बी-275, अवन्तिका, रोहिणी सेक्टर 1, नई दिल्ली द्वारा लेजर टाइपसेट होकर मे. अनिल आफसेट एंड पैकेजिंग प्रा. लि., दिल्ली-110007 में न्यूपा के प्रकाशन विभाग द्वारा मुद्रित।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

विषय सूची

आलेख

अश्विनी
अध्यापक शिक्षा का समालोचनात्मक अध्ययन 1

वीणा ठावरे और **एन.जी. पेन्डसे**
भारत में शिक्षा एवं आर्थिक विकास की काल मालिका में दीर्घकालीन स्थावरता का विश्लेषण 31

कुसुम यदुलाल
अनुसूचित जाति एवं जनजति की स्कूली छात्राओं की मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याएं 63

शोध टिप्पणी / संवाद

युनुस हुसैन और **इरशाद हुसैन**
मध्याह्न भोजन योजना के प्रति शिक्षकों की मनोवृत्ति 89

सरिता केसरवानी और **उमा रानी शर्मा**
विद्यार्थियों का व्यक्तित्व विकास और व्यावसायिक परिपक्वता 99

राजकुमारी कालरा और **रेनू**
शैक्षिक एवं आर्थिक स्तरानुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति 111

रंजना वर्मा और **सुबोध कुमार**
उच्च प्राथमिक स्तर की हिन्दी पाठ्यपुस्तकों में निहित जीवन कौशल 119

कमलेश कुमार चौधरी
माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता और अधिगम क्षमता 127

चिंतक और चिंतन

देवेन्द्र सिंह
एवरेट रेमर का शैक्षिक चिन्तन 135

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

अध्यापक शिक्षा का समालोचनात्मक अध्ययन

अश्वनी*

सारांश

शिक्षा के तीन महत्वपूर्ण घटक हैं – अध्यापक, छात्र व पाठ्यक्रम। इस तरह राष्ट्र निर्माण में अध्यापक की भूमिका स्वत: ही महत्वपूर्ण बन जाती है। आज शिक्षक–शिक्षा को प्रजातंत्र में शिक्षा की बदली हुई भूमिका को पहचानना और विद्यालयीन अनुभवों के माध्यम से स्कूली छात्रों में नये मूल्यों, उभरती हुई चुनौतियों तथा व्यक्ति एवं देश के उज्ज्वल भविष्य के लिए आवश्यक राष्ट्रीय परिवर्तन वर्तमान वैश्विक संदर्भ को ध्यान में रखकर करना एक चुनौती बन गया है। बदलते हुए राष्ट्रीय परिदृश्य के संदर्भ में आज शिक्षक–शिक्षा की मुख्य चिंताएं– उसकी गुणवत्ता, समुचित ज्ञानाधार का सृजन और उत्तरदायित्व की वृद्धि है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 ने माना है कि शिक्षा की गुणवत्ता और राष्ट्रीय विकास में इसके योगदान को निर्धारित करने वाले कारकों में नि:संदेह शिक्षकों का सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान है। शिक्षण में सूचना व संप्रेषण साधनों का प्रयोग, इंटरनेट क्रांति, बच्चों पर पढ़ाई का मानसिक दबाव, अध्यापक शिक्षा का निजीकरण, शांति की शिक्षा कुछ इसी तरह के अन्य सवालों ने आज भारत में अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता पर ध्यान देने के लिए दबाव डाला है।

राष्ट्र विकास की प्रक्रिया में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। शिक्षा को हम सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक रूपांतरण का साधन भी मानते हैं। शिक्षा का संबंध प्रत्यक्षत: उत्पादन से होगा, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से निर्देशित होगा और चरित्र निर्माण की ओर उन्मुख होगा। समाज बदलता रहता है और आने वाला युग शिक्षा के द्वारा

* सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विज्ञान, मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय, हैदराबाद, आंध्रप्रदेश

ही बदलता है। हम जैसी शिक्षा देंगे, वैसा ही मनुष्य बनेगा और मनुष्य के विकास से राष्ट्र का विकास होता है। इसलिए आवश्यक है कि शिक्षा का संबंध राष्ट्र के जीवन, आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं से हो, वैश्विक स्तर पर हमारे मानक हों एवं जनशक्ति की आवश्यकता के अनुसार शिक्षा के समान अवसर प्रदान किए जाएं।

भारत में अध्यापक-शिक्षा के कार्यक्रम

- प्रारंभिक अध्यापक शिक्षा जिसमें कि डाईट के माध्यम से दो वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम है। जे.बी.टी., डी.एड., बी.टी.सी. इत्यादि नाम इस कार्यक्रम के हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा बी.एल.एड. चार वर्षीय स्नातक कार्यक्रम है, जो कि प्रारंभिक अध्यापक शिक्षा का डिग्री पाठ्यक्रम है। विशिष्ट शिक्षा में डिप्लोमा, शारीरिक शिक्षा में डिप्लोमा, ड्राईंग अध्यापक शिक्षा इत्यादि कार्यक्रम भी इसी श्रेणी के हैं। इग्नू द्वारा संचालित डी.पी.ई. पाठ्यक्रम भी इसी स्तर पर है।
- माध्यमिक अध्यापक शिक्षा जिसमें बी.एड. पाठ्यक्रम मुख्य है ज्यादातर अध्यापक प्रशिक्षण संस्थान मुखाभिमुख शिक्षा द्वारा एक साल का नियमित कार्यक्रम करवाते हैं। दो साल का मुखाभिमुख कोर्स भी एन.सी.ई.आर.टी. के क्षेत्रीय शिक्षा केन्द्रों द्वारा करवाया जाता है। गुजरात विद्यापीठ में भी दो साल का यह कार्यक्रम है। दूरस्थ मा ध्यम द्वारा भी बी.एड. दो वर्षीय पाठ्यक्रम करवाया जाता है जो कि सेवारत अध्यापकों के लिए बनाया गया है। बी.एस.सी.,बी.एड. का चार वर्षीय कार्यक्रम भी एन.सी.ई.आर.टी. के क्षेत्रीय शिक्षा संस्थानों द्वारा चलाया जा रहा है और भी विभिन्न संस्थानों द्वारा शिक्षा स्नातक के लिए नवाचारी पाठ्यक्रम गुजरात विद्यापीठ, एकलव्य, वनस्थली विद्यापीठ, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय द्वारा चलाये गये हैं। विशिष्ट शिक्षा में बी.एड., शारीरिक शिक्षा में (बी.पी.एड.), शिक्षा शास्त्री इत्यादि कार्यक्रम भी इसी श्रेणी में आते हैं।
- शिक्षा में स्नातकोत्तर कार्यक्रम एम.एड. विश्वविद्यालयों द्वारा करवाया जा रहा है। मुखाभिमुख रूप में यह एक वर्षीय पाठ्यक्रम है। दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा यह संध्याकालीन (अंशकालिक) तौर पर दो वर्षीय पाठ्यक्रम भी चलाया जा रहा है। दूरस्थ माध्यम में भी विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा दो वर्षीय एम.एड. पाठ्यक्रम चलाया जा रहा है। प्रारंभिक शिक्षा में एम.एड. जामिया विश्वविद्यालय और एन.सी. ई.आर.टी. के क्षेत्रीय शिक्षा केन्द्रों द्वारा चलाये जा रहे हैं। एम.एड. -पूर्व प्राथमिक

शिक्षा, एम.एड. प्रारंभिक शिक्षा, एम.एड. विशिष्ट शिक्षा, एम.एड.दूर शिक्षा इत्यादि कार्यक्रम भी स्नातकोत्तर स्तर पर विशेषीकरण के साथ चल रहे हैं। शारीरिक शिक्षा में एम.पी.एड. और विशिष्ट शिक्षा में दूरस्थ माध्यम द्वारा एम.एड. कार्यक्रम भी इसी श्रेणी में आते हैं। एम.एड. करने के बाद अध्यापक-शिक्षक के लिए प्रारंभिक तैयारी हो जाती है।

- शिक्षा में विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा एम.फिल. पाठ्यक्रम भी कराया जाता है। शिक्षा में एम.फिल. सामान्यत: एक साल का कोर्स है। कुछ विश्वविद्यालयों में 1½ वर्ष की अवधि भी है। एम.फिल. दूरस्थ माध्यम द्वारा भी समय-समय पर विभिन्न मानदंडों से कराया जाता है। दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षा में एम.फिल. अंशकालिक पाठ्यक्रम के तौर पर भी कराया जाता है।
- शिक्षा में विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा पी.एच.डी. कार्यक्रम नियमित व दूरस्थ माध्यम से चलाया जा रहा है।

भारतीय शैक्षिक नीतियों व कार्यक्रमों के संदर्भ में अध्यापक शिक्षा

आजादी के बाद शिक्षा को सामाजिक पुनर्रचना के लिए एक सशक्त बल के रूप में देखा जाने लगा। आज शिक्षक-शिक्षा के क्षेत्र में भी काफी विकास हो चुका है। शिक्षक-प्रशिक्षण विद्यालयीन शिक्षकों के लिए एक प्रासंगिक प्रशिक्षण से बढ़कर शिक्षा व्यवस्था का आवश्यक अंग बन गयी और इसका स्थान अनुशासन के एक विशेष क्षेत्र के रूप में स्थापित हो गया। स्वतंत्रता के पूर्व से अप्रशिक्षित शिक्षकों की भारी संख्या का होना बहुत बड़ी समस्या थी और यह समस्या आज़ादी के बाद भी बनी रही क्योंकि शिक्षक प्रशिक्षण की पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी। लेकिन फिर भी शिक्षकों को भारी संख्या में नियुक्त करने की विवशता थी ताकि स्कूली शिक्षा को अधिक से अधिक सुलभ बनाया जा सके।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) की मुख्य अनुशंसाएं थीं कि परीक्षाओं का स्तर तब तक नहीं बढ़ेगा जब तक कि पहले शिक्षण की गुणवत्ता नहीं सुधारी जाती इसलिए शिक्षण के स्तर में काफी सुधार की जरूरत है। माध्यमिक शिक्षा के स्तर में सुधार के लिए हमारे स्कूलों के लिए उच्च योग्यता प्राप्त व्यक्तियों को आकर्षित करने के लिए उन्हें पर्याप्त वेतन व पदोन्नति की संभावनाओं का प्रस्ताव देने की जरूरत है। हाई स्कूल व इंटरमीडिएट कॉलेज के शिक्षकों के लिए छुट्टियों में रिफ्रेशर पाठ्यक्रम शुरू करना जरूरी है। मुदालियर कमीशन (1952) की रिपोर्ट में कहा गया है कि शिक्षा के

क्षेत्र में किसी भी प्रकार के सुधार की कुंजी अध्यापक है। इसलिए शिक्षक प्रशिक्षण का सुधार बहुत महत्वपूर्ण है। कमीशन ने प्रशिक्षण कॉलेजों में सुधार की संस्तुति की है शिक्षक-प्रशिक्षुओं को एकाधिक पाठ्यक्रमोत्तर गतिविधियों का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। प्रशिक्षण महाविद्यालयों को रिफ्रेशर पाठ्यक्रम भी चलाने चाहिए।

शिक्षा पर पुनरावलोकन समिति (1960) ने शिक्षा विभागों में शिक्षण व अनुसंधान के संबंध में सुझाव दिया कि शिक्षा विभाग शिक्षा में स्नातकोत्तर अध्ययन द्वारा प्रशिक्षण महाविद्यालयों के लिए योग्य शिक्षक उपलब्ध करवाये, शैक्षिक प्रशासकों को प्रशिक्षित करें, शिक्षा की समस्याओं पर उच्चतर अध्ययन व शोध का प्रशिक्षण देना, राष्ट्रीय विकास में आयोजना व शिक्षा की भूमिका की गहरी समझदारी वाले योग्य शैक्षिक कार्यकर्ता उपलब्ध करवायें। भावात्मक एकीकरण (1961) समिति ने सिफारिश की थी कि शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम में सुधार जरूरी है और इसके द्वारा एक स्पष्ट राष्ट्रीय दृष्टिकोण, नागरिकता की भावना और एकता को बढ़ावा मिले। शिक्षण-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में समूह गतिशीलता व संस्कृति के पाठ्यक्रम, छात्र-शिक्षकों के पाठ्यक्रम में यात्राओं, अंतर-विद्यालयीन पारस्परिक भेंट, सामुदायिक कार्य व सांस्कृतिक गतिविधियों व भूगोल विषयों को शामिल करना चाहिए। शिक्षा व शिक्षण कौशल के क्षेत्र की नयी प्रवृत्तियों की जानकारी देने के लिए सेवारत शिक्षकों को पाँच साल में एक बार प्रशिक्षण दिया जाना जरूरी है। चयनित शैक्षिक योजनाओं के लिए अध्ययन दल (1961) का मानना था कि आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य संपूर्ण व्यक्तित्व की शिक्षा है, इसलिए प्रत्येक शिक्षक में ज्ञान व बच्चों के बारे में समझ व उसके उपयोग का कौशल होना चाहिए। प्रशिक्षण कार्यक्रम सैद्धांतिक ज्ञान व व्यवहार की ठोस बुनियाद पर खड़े होने चाहिए। प्रशिक्षुओं के चयन के लिए आकलन करने की एक उपयुक्त व वस्तुनिष्ठ प्रणाली विकसित करना अत्यंत आवश्यक है। शिक्षण अभ्यास में अध्यापन पाठों का अवलोकन, सहायक सामग्री का निर्माण, समालोचनात्मक पाठों का अध्यापन आदि को भी व्यावहारिक प्रशिक्षण में शामिल करना चाहिए। प्रशिक्षण विद्यालयों में आधुनिक शिक्षण साधनों को बढ़ावा देना जरूरी है।

शिक्षा आयोग (1964-66) ने भारत में शिक्षा व्यवस्था पर अपनी व्यापक रिपोर्ट दी। कोठारी कमीशन ने पाया कि अध्यापक शिक्षा शैक्षिक जीवन की मुख्य धारा से अलग है। शिक्षक-शिक्षा के पाठ्यक्रम में यथार्थवाद की कमी है। प्रशिक्षण कॉलेजों में दक्ष स्टाफ नहीं है और रूढ़ प्रविधियाँ ही शिक्षण अभ्यास में दोहरायी जाती हैं। आयोग

ने इन संदर्भों में सिफारिश दी कि शिक्षक-शिक्षा के अलगाव को दूर करना चाहिए। अध्यापक-शिक्षा को विश्वविद्यालयों के अकादमिक जीवन और दूसरी तरफ विद्यालयीन जीवन व शैक्षिक विकास की मुख्य धारा में शामिल करना चाहिए। शिक्षा को एक स्वतंत्र अकादमिक विषय के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए और अन्य विषयों के साथ शिक्षा के विद्यालयों की स्थापना की जानी चाहिए। शिक्षक-शिक्षा के किसी भी कार्यक्रम का मूल आधार गुणवत्ता होती है और इसके अभाव में शैक्षिक स्तर में गिरावट हो सकती है। शिक्षण की उन्नत प्रणाली का प्रयोग किया जाए जिसमें स्वाध्याय व विचार-विमर्श की काफी गुंजाइश हो। मूल्यांकन की उन्नत प्रणाली अपनायी जाए जिसमें व्यावहारिक व सक्रिय कार्य के साथ-साथ अध्यापन-अभ्यास का सतत आंतरिक मूल्यांकन शामिल हो। अध्यापन-अभ्यास में सुधार किया जाए। मौजूदा समय में अधिकांश संस्थानों में पुस्तकालयों, प्रयोगशालाओं, कार्यशालाओं आदि की व्यवस्था अपर्याप्त है। इनमें सुधार की जरूरत है। पत्राचार पाठ्यक्रम उपलब्ध करवाये जाने चाहिए, लेकिन पूर्णकालिक संस्थानों का स्तर गिरने न पाए। सेवारत शिक्षकों का समन्वित कार्यक्रम संचालित किया जाना चाहिए। प्रत्येक शिक्षक अपने पाँच साल के कार्यकाल में कम से कम दो या तीन महीने का सेवारत शिक्षण प्राप्त कर सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) में शिक्षकों की सामाजिक स्थिति पर ध्यान देते हुए कहा है कि शिक्षा की गुणवत्ता और राष्ट्रीय विकास में निस्संदेह शिक्षकों का सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान है। अतएव, समाज में शिक्षक को सम्मानित स्थान दिया जाए और उनकी योग्यताओं व जिम्मेदारियों के अनुसार उनकी परिलब्धियाँ व अन्य सेवा शर्तें उपयुक्त व संतोषजनक होनी चाहिए। शिक्षक-शिक्षा में विशेषकर सेवारत शिक्षा पर यथोचित ध्यान देना चाहिए। शालापूर्व बच्चों के विकास पर अध्ययन दल (1970) के अनुसार प्राथमिक विद्यालय शिक्षक-शिक्षा के पाठ्यक्रम में फेरबदल किया जाए ताकि प्राथमिक और विद्यालय पूर्व शिक्षा, एक-दूसरे के निकट आ जाएं। शहरी, ग्रामीण व जनजातीय वातावरण के अनुसार उन्मुखीकरण और सभी प्रशिक्षण इकाइयों में विस्तार, प्रशिक्षण और अनुसंधान की गतिविधियों का एकीकरण किया जाए। 10+2+3 शैक्षिक ढाँचे पर राष्ट्रीय समिति (1972) ने शिक्षकों के सेवाकालीन प्रशिक्षण के संबंध में कहा कि ज्ञान, पद्धति और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आये क्रांतिकारी परिवर्तनों के साथ यह जरूरी है कि प्रत्येक शिक्षक को तीन या पाँच साल की अवधि में एक बार सेवारत प्रशिक्षण दिया जाए। रिफ्रेशर कोर्स में शिक्षक को उसके शिक्षण विषय/विषयों में अद्यतन जानकारी

देने पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। इसमें सतत मूल्यांकन, उपचारात्मक शिक्षण, शारीरिक शिक्षा और नैतिक शिक्षा को भी शामिल करना चाहिए। दस वर्षीय विद्यालय के लिए पाठ्यचर्या : एक प्रारूप (1975) में सुझाव दिया है कि सेवारत शिक्षकों के लिए रिफ्रेशर पाठ्यक्रमों में विद्यालयीन कार्यक्रमों में प्रस्तावित परिवर्तनों से परिचित कराएं।। उन्हें उपलब्ध सामुदायिक संसाधनों के द्वारा इन परिवर्तनों को लागू करने की विभिन्न रणनीतियों की भी जानकारी दी जानी चाहिए। सेवापूर्व शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों को भी संशोधित करना जरूरी है। शिक्षक-शिक्षा पाठ्यक्रम में विद्यालयों को कार्योन्मुखी बनाना, उचित मूल्यों और दृष्टिकोणों को विकसित करना, सहायक सामग्री की आपूर्ति, उप लब्ध साधनों का अधिकतम उपयोग और सतत मूल्यांकन होना जरूरी है। विद्यालयीन पाठ्यक्रम में सामुदायिक जरूरतों के अनुसार प्रस्तावित परिवर्तन और विद्यालय व कार्य अनुभव के बीच की खाई को पाटना जरूरी है। प्रो. डी.पी. चट्टोपाध्याय की अध्यक्षता में विद्यालयीन स्तर के शिक्षकों का राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-1, (1983) में बनाया गया जिसने व्यापक स्तर पर सिफारिशें दीं। मुख्य रूप से शिक्षकों के शिक्षण पर बहुत अधिक ध्यान देने की जरूरत है। किसी शिक्षण कार्यक्रम की न्यूनतम जरूरत भिन्न-भिन्न योग्यताओं वाले विद्यार्थियों की कक्षा को सम्भालने की क्षमता, स्पष्ट व तार्किक ढंग से विचारों का संप्रेषण, तकनीक का प्रयोग, कक्षा के बाहर शैक्षिक अनुभवों का संचालन, समुदाय के साथ काम करने की कला की दक्षताओं से प्रशिक्षुओं को तैयार करना चाहिए। एकीकृत पाठ्यक्रम व वर्तमान एकवर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम को प्रभावी बनाने के लिए इसकी अवधि और इसके पाठ्यक्रम में सुधार करना जरूरी है। प्राथमिक शिक्षकों को भारत की मिश्रित संस्कृति व राष्ट्रीय उद्देश्यों का सही परिप्रेक्ष्य में गहरा ज्ञान होना चाहिए। शैक्षिक तकनीक में शिक्षक-शिक्षकों की एक श्रेणी बनायी जा सकती है। कक्षा में प्रशिक्षु शिक्षक के प्रदर्शन का मूल्यांकन करने के लिए विभाग को सही पद्धति विकसित करनी चाहिए। स्व मूल्यांकन और अध्यापन पूर्व व अध्यापन बाद की चर्चा को प्रोत्साहन देना चाहिए। शिक्षक प्रशिक्षकों को स्वयं उन कौशलों में प्रवीणता होनी चाहिए, जिनका विकास वे अपने प्रशिक्षुओं में करना चाहते हैं। पाठ्य-सहगामी गतिविधियों के योजना निर्माण व संगठनात्मक कौशल शिक्षक प्रशिक्षकों में होने चाहिए।

शिक्षा की चुनौती : एक नीतिगत परिदृश्य (1985) में शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक का प्रदर्शन सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है। हम नयी तकनीकों के विकास की दहलीज पर खड़े हैं, जिससे शिक्षण के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव आने की संभावना है।

शिक्षक से बहुत अधिक उम्मीदें हैं, लेकिन इसे अंतिम विकल्प के रूप में देखा जाता है। शिक्षा के महत्व और इसमें शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए कड़ी जाँच के बाद ही शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में नियुक्ति की जाए। आज सेवारत शिक्षण या शिक्षक समुदाय की सतत शिक्षा की सख्त जरूरत महसूस की जा रही है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की शिक्षक-शिक्षा की अनुशंसाओं में है कि शिक्षक-शिक्षा एक सतत प्रक्रिया है और इसे सेवारत व सेवापूर्व के रूप में बाँट कर नहीं देखा जाना चाहिए। शिक्षक-शिक्षा के नये कार्यक्रम में सतत शिक्षा पर जोर दिया जाएगा। इसके लिए जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना की जाएगी। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा पाठ्यचर्या (1988) ने शिक्षक-शिक्षा के आधारभूत सिद्धांतों में जोर दिया है कि शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम शिक्षकों की व्यावसायिक तैयारी के लिए होते हैं न कि सामान्य, अकादमिक अध्ययन के लिए। यह कार्यक्रम कठोर व उपदेशात्मक नहीं होना चाहिए बल्कि इसमें स्थानीय व क्षेत्रीय जरूरतों, व्यक्तिगत मतभेदों और सृजनात्मक व नये विचारों और व्यवहारों को समायोजित करने के लिए लचीलापन होना चाहिए। शिक्षक-शिक्षा के पाठ्यक्रम को सैद्धांतिक समझ और उनके व्यावहारिक प्रयोग में एकीकरण पर बल देना चाहिए। शिक्षक के विकास पर प्रभाव और विद्यार्थी के अधिगम, सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण के साथ उसका संबंध, उसकी शिक्षण पद्धति सेवारत शिक्षा में शामिल कर दिए जाएं तो यह सार्थक होगा। आचार्य राममूर्ति (1990) ने 'प्रबुद्ध एवं मानवतावादी समाज की ओर' नाम से अपना प्रतिवेदन पेश किया। नई चुनौतियों के लिए शिक्षक की तैयारी में सुझाव दिए हैं कि शिक्षक प्रशिक्षण में आमूल परिवर्तन लाने होंगे। प्रशिक्षु विद्यार्थियों के चयन के लिए अभिवृत्ति व योग्यता परीक्षा के कड़े मानदंड अपनाये जाने चाहिए। सिर्फ प्राप्त अंकों या श्रेणियों को चयन का आधार नहीं बनाया जाना चाहिए। सेवारत कार्यक्रमों को शिक्षक की प्रगति की भावी जरूरतों का पूरा ध्यान रखना चाहिए। शिक्षक प्रशिक्षण में समाज के शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों से आये हुए बच्चों की विभिन्न जरूरतों की सामाजिक अनुभूति, नए व सृजनात्मक कार्यों के प्रति रुचि, शैक्षिक प्रबंधन की विकेन्द्रीकृत और भागीदारी प्रणाली में शिक्षक/शिक्षिका को भूमिका की संवेदनशील समझ होनी चाहिए। प्राथमिक शिक्षा से जुड़े शिक्षकों को- बाल केन्द्रित शैक्षिक दृष्टिकोण अपनाते हुए उन्नत कक्षा-कक्ष, व्यक्तिगत और सतत मूल्यांकन तथा बच्चे के व्यवहार की गहरी समझ होनी चाहिए। खेलकूद व गतिविधि आधारित दृष्टिकोणों को अपनाना, विद्यालयों को सामुदायिक शिक्षा केन्द्र के रूप में विकसित करना। सरल रूप में समुदाय के लोगों

को पढ़ाई के नतीजों की जानकारी देना। न्यूनतम अधिगम स्तर के आधार पर विषय वस्तु का विकास करना। विभिन्न विषयों की एकीकृत रूप में प्रस्तुत करने की क्षमता उत्पन्न करना इत्यादि अवधारणाओं, पद्धतियों व कौशलों में प्राथमिक शिक्षक को प्रशिक्षित करना होगा।

यशपाल समिति (1992) ने उल्लेख किया है कि शिक्षक की अध्यापकीय अपर्याप्त तैयारी की वजह से शिक्षण का स्तर गिरा है। शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम को विद्यालयीन शिक्षा की बदलती जरूरतों के अनुसार प्रासंगिक और व्यावहारिक बनाने के लिए इनकी विषय-वस्तु का पुनर्गठन किया जाना चाहिए। इन कार्यक्रमों का मुख्य जोर प्रशिक्षुओं में स्व-अधिगम व स्वतंत्र चिंतन की क्षमता का विकास करने पर होना चाहिए। शिक्षकों की सतत शिक्षा को संस्थागत स्वरूप दिया जाना चाहिए। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् अधिनियम (1993) – परिषद् शिक्षक शिक्षा का नियोजित व समन्वित विकास सुनिश्चित करने, मानदंडों का निर्धारण व रखरखाव संबंधी कार्य करेगी।

- शिक्षक-शिक्षा के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन व सर्वेक्षण संचालित करना
- अध्यापक-शिक्षा के क्षेत्र में योजनाओं व कार्यक्रमों को तैयार करने में केन्द्र, राज्य सरकारों, यू.जी.सी. इत्यादि को सुझाव देना
- शिक्षक-शिक्षा और इसके विकास को समन्वित करना और इस पर निगरानी रखना
- शिक्षकों की नियुक्ति के न्यूनतम योग्यता के दिशा-निर्देश बनाना और पाठ्यक्रमों या प्रशिक्षणों के लिए दिशा-निर्देश बनाना
- परिषद् द्वारा बनाये गये मानदंडों व दिशा-निर्देशों के क्रियान्वयन की समय-समय पर समीक्षा करना
- केन्द्र सरकार द्वारा सौंपे गए ऐसे अन्य कार्यों को पूरा करना
- मान्यता प्राप्त संस्थानों पर इस अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए परिषद् ऐसे संस्थानों का निरीक्षण कर सकती है।
- शिक्षक-शिक्षा में पाठ्यक्रम या प्रशिक्षण उपलब्ध कराने वाले संस्थानों को नियमानुसार मान्यता देना और मान्यता प्राप्त संस्थानों को नये पाठ्यक्रम की अनुमति देना।

पत्राचार द्वारा बी.एड. के प्रशिक्षण हेतु निर्देश, 1993 – दूर शिक्षा द्वारा बी.एड. कार्यक्रम संचालित करने वाले विश्वविद्यालय NCERT/NCTE के सुझावों के अनुरूप उत्तम श्रेणी का स्व-शिक्षण 'पैकेज' और स्वीकार्य गुणवत्ता वाली तकनीकी सहायता सेवा विकसित करनी चाहिए। न्यूनतम 30 दिनों का प्रत्यक्ष संपर्क कार्यक्रम विकसित किया जाए। प्रत्येक विद्यार्थी के लिए 60 दिनों का इंटर्नशिप का प्रावधान किया जाए। इंटर्नशिप में उसे अवलोकन दृश्य–श्रव्य माध्यमों के उपयोग, पाठों की तकनीकी तैयारी, मूल्यांकन प्रणाली, अभिलेखों का रख-रखाव जैसे अध्यापन अभ्यास के सहायक पक्षों में प्रशिक्षण लेना चाहिए। बी.एड. सुदूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रम पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग समिति (1994) ने प्रवेश की पात्रता रखी कि – स्नातक योग्यता, किसी विद्यालय में लगातार दो वर्षों का शिक्षण-अनुभव और ग्रामीण क्षेत्रों में सेवारत शिक्षकों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। 40 पाठों के अध्यापन-अभ्यास का आयोजन व प्रबोधन किया जाए। इसकी शिक्षण सामग्री श्रेष्ठ कोटि की होनी चाहिए ताकि उन्हें पढ़कर या देख-सुनकर विद्यार्थी स्वयं बिना किसी की सहायता से समझ सके।

गुणात्मक अध्यापक शिक्षा का पाठ्यचर्या प्रारूप (1998) हेतु समिति राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा प्रो. जे.एस. राजपूत की अध्यक्षता में स्थापित की गई। इस समिति ने एक वर्षीय बी.एड. कार्यक्रम को दो वर्ष की अवधि करने का सुझाव दिया है। अध्यापक प्रशिक्षकों के लिए विशिष्ट कार्यक्रमों की रूपरेखा भी प्रस्तुत की है। विश्वविद्यालय तथा एन.सी.टी.ई. जैसे अन्य अभिकरणों द्वारा अध्यापक शिक्षा के एकाधिक मॉडल विकसित करने होंगे जो कि नवाचारी मॉडल अन्त:शास्त्रीयता, व्यापक दृष्टिकोण, लक्ष्य चेतना तथा प्रतिबद्धता से युक्त हो। अध्यापक शिक्षा संस्थानों की आवश्यकताओं तथा इन संस्थानों में कार्यरत अध्यापक शिक्षक की व्यावसायिक तैयारी के बीच बेमेल स्थिति का निराकरण किया जाए। सेवाकालीन प्रशिक्षण में हम मुखाभिमुख संस्थागत मॉडल, सोपान मॉडल, संचार माध्यम आधारित दूरस्थ शिक्षा मॉडल को अपना सकते हैं। सेवाकालीन कार्यक्रमों की विषय वस्तु विद्यालय विषय, शिक्षण शास्त्र तथा कार्यप्रणाली, उभरते हुए मुद्दे तथा अध्यापक की नई भूमिका ही सेवाकालीन कार्यक्रमों का लक्ष्य होना चाहिए। सेवाकालीन कार्यक्रम वर्तमान शैक्षिक संदर्भ में सार्थक होना चाहिए। अध्यापक शिक्षा संस्थाओं की विशिष्ट समस्याओं पर ध्यान देने तथा अध्यापक शिक्षा को अधिक उत्तरदायी तथा अनुक्रियात्मक बनाने की भी आवश्यकता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में शिक्षक शिक्षा पर विस्तार से चर्चा की गई है और विचार किया है कि शिक्षक की शिक्षा को स्कूली व्यवस्था की उभरती मांगों के प्रति अधिक संवेदनशील होना चाहिए। अध्यापकों को उत्साहवर्द्धक, सहयोगी और मानवीय होना चाहिए। ज्ञान को अनुभव के रूप में समझे न कि पाठ्यपुस्तकों की सामग्री के रूप में सीखने के लिए अनुकूल माहौल बनाए। भाषा की गहरी समझ और दक्षता हासिल करें। अपनी आकांक्षाओं, स्व-समझ, क्षमताओं और रुझानों को पहचानें। शिक्षक के रूप में पेशेवर उन्मुखीकरण का प्रयास करें। कार्य को शिक्षण का माध्यम बनाएं। समाज के प्रति अपना दायित्व समझें और बेहतर विश्व के लिए काम करें। पाठ्यचर्चा की रूपरेखा, उसके नीतिगत निहितार्थ एवं पाठों का विश्लेषण करें। सेवाकालीन शिक्षक-शिक्षा का भी कुछ खास प्रभाव नजर नहीं आता है। प्रशिक्षण की गुणवत्ता का एक बड़ा मानक है शिक्षक के लिए उसकी प्रासंगिकता। लेकिन ज्यादातर कार्यक्रम वास्तविक जरूरत को ध्यान में रखकर नहीं बनाए जाते। सेवाकालीन प्रशिक्षण विशेष रूप से शिक्षकों के कक्षानुभव के संदर्भ में होना चाहिए। ऐसी क्षमता का विकास हो कि वे पाठ्यचर्या रूपरेखा की चुनौतियों को समझे तथा उनका सामना कर सके।

नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार, 2009 में भी शिक्षा के अधिकार के कार्यान्वयन में अध्यापक की भूमिका को सबसे महत्वपूर्ण माना गया है। विद्यालय प्रबंध समिति में एक-तिहाई सदस्य अध्यापक होंगे। विद्यालय प्रबंध समिति के सभी कार्य व उत्तरदायित्वों की जिम्मेदारी प्रमुखतया अध्यापकों की ही है। विद्यालय विकास योजना तैयार करते समय अतिरिक्त अध्यापकों की अपेक्षा व विशेष प्रशिक्षण सुविधा को भी ध्यान में रखा गया है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 में विद्यालयों और अध्यापकों के उत्तरदायित्व का स्पष्ट तौर पर विवरण किया गया है। इसमें अध्यापकों की न्यूनतम अर्हताएं के बारे में स्पष्ट विवरण मिलता है। अधिनियम में विशेष तौर पर बताया गया है कि केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार या संघ राज्य क्षेत्र या स्थानीय प्राधिकारी के स्वामित्वाधीन और उनके प्रबंधित विद्यालयों में सभी अध्यापकों द्वारा यदि न्यूनतम अर्हताएं नहीं हैं, अधिनियम के प्रारंभ से पांच वर्ष की अवधि के भीतर ऐसी न्यूनतम अर्हताएं अर्जित करने के लिए पर्याप्त अध्यापक शिक्षण प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध कराएंगे। अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेना, पाठ्यचर्या निर्माण और पाठ्यक्रम विकास, प्रशिक्षण मॉड्यूल तथा पाठ्य पुस्तक विकास में भाग लेना

अध्यापकों का कर्त्तव्य होगा। इस तरह शिक्षा का अधिकार 2009 भी अध्यापकों की योग्यता व प्रशिक्षण को भी महत्वपूर्ण मानता है।

अध्यापक शिक्षा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2009 (NCFTE)

अध्यापक शिक्षा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2009 में अध्यापक शिक्षा और स्कूल शिक्षा के दृष्टिकोण, संदर्भ व दृष्टि में आपसी संबंध है। दोनों का विकास एक दूसरे को पुनर्बलित करता है। जिससे शिक्षा के पूरे दायरे में आवश्यक गुणात्मक सुधार होंगे। समसामयिक संदर्भों में अध्यापक शिक्षा में समावेशित शिक्षा (इनक्लूसिव शिक्षा), समता और स्थायित्व आधारित विकास का दृष्टिकोण, शिक्षा में सामुदायिक ज्ञान की भूमिका, स्कूलों में ICT और ई-लर्निंग को शामिल करना चाहिए। NCFTE 2009 में कहा गया है कि हमें ऐसे अध्यापक चाहिए जो:

- बच्चों की परवाह करे और उन्हें प्यार दे, बच्चों को सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भ में समझे, उनकी समस्याओं और आवश्यकताओं की संवेदिता विकसित करे, सभी बच्चों से समान व्यवहार करे।
- बच्चों को केवल ज्ञान प्राप्त करने वाला नहीं समझे बल्कि स्वाभाविक तौर पर बच्चों को सिखाये, अधिगम को आनंददायक, सहभागितापूर्ण और अर्थपूर्ण बनाए।
- पाठ्यपुस्तकों और पाठ्यचर्या का आलोचनात्मक मूल्यांकन करे, स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यचर्या संदर्भ बनाये।
- ज्ञान को केवल प्रदान करने के लिए नहीं समझे।
- अधिगमकर्ता केन्द्रित, गतिविधि आधारित, सहभागिता आधारित अधिगम अनुभव, खेल, प्रोजेक्ट, परिचर्चा, संवाद, पर्यवेक्षण, भ्रमण इत्यादि के द्वारा बच्चे सीखें इन सभी को संगठित व आयोजित करे।
- अधिगमकर्ता की सामाजिक और व्यक्तिगत वास्तविकताओं को अकादमिक अधिगम के साथ अंतर्निहित करे।
- शांति का मूल्य, जीवन का लोकतांत्रिक रास्ता, समानता, न्याय, स्वतंत्रता, बंधुता, धर्मनिरपेक्षता के महत्व को सामाजिक पुनर्रचना में शामिल करे।

उपरलिखित अध्यापकों की अंतर्निहित गुण व जरूरतें केवल अध्यापक शिक्षा पाठ्यचर्या द्वारा छात्र-अध्यापक को निम्न पहलुओं से मिल सकती है–

- बच्चों का पर्यवेक्षण व उसके साथ जुड़े रहना, बच्चों के साथ संप्रेषण व संबंध जोड़ना।
- अपनी व दूसरों की समझ, अपने विश्वास, कल्पनाएं, संवेग और इच्छाएं, आत्मचिंतन की क्षमता विकसित करना, स्वीकारना, लचीलापन, सृजनात्मकता और नवाचारी।
- स्वयं निर्देशित अधिगम की क्षमता की आदत विकसित करना, स्वयं सोचने की समझ, अपनी दृष्टि, नये विचारों का आत्मसात्करण विकसित करना, स्वयं की आलोचना व समूह में कार्य करना।
- विषय की विषय वस्तु के साथ जुड़े रहना, अनुशासित ज्ञान और सामाजिक वास्तविकताओं का ज्ञान, विषय की विषय वस्तु को विद्यार्थियों की सामाजिक समझ से जोड़ना और आलोचनात्मक चिंतन विकसित करना।
- पैडॉगॉजी में व्यावसायिक कौशल विकसित करना, पर्यवेक्षण, प्रलेखीकरण, विश्लेषण और निर्वचन, ड्रामा, ड्राफ्ट कहानी कथन, दृष्टिकोणात्मक जाँच करना।

NCFTE- 2009 ने अध्यापक शिक्षा की पाठ्यचर्या के तीन महत्वपूर्ण क्षेत्रों का अभिविन्यास किया है:

क. शिक्षा के आधार, जिसमें तीन महत्वपूर्ण उप-क्षेत्र हैं- अधिगमकर्ता अध्ययन, समसामयिक अध्ययन, शैक्षिक अध्ययन।

ख. पाठ्यचर्या और पैडॉगॉजी, जिसमें दो महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं– पाठ्यचर्या अध्ययन और पैडॉगॉजिक अध्ययन।

ग. स्कूल अंत:शिक्षुता (इंटर्नशिप) में दृष्टिकोण, व्यावसायिक क्षमता, अध्यापक संवेदनशीलता और कौशल में संपूर्ण निपुणता विकसित हो।

ये तीनों वृहत क्षेत्रों को मिलाकर सामान्य कोर पाठ्यचर्या अध्यापक शिक्षा के हर क्षेत्र – पूर्व स्कूल, प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर पर अंतर्निहित कर सकते हैं।

NCFTE - 2009 में सेवारत शिक्षा पर भी व्यापक रूप से विचार-विमर्श किया गया है। अध्यापकों के निरंतर व्यावसायिक विकास के मुख्य उद्देश्य माने हैं कि-

- खोज करना, प्रतिबिंबित करना और अपने अनुभवों से विकास करना।
- अपने ज्ञान में गहरी सोच, अपने अकादमिक अनुशासन और स्कूल के अन्य पाठ्यचर्या पत्रों को अद्यतन करना।

- शोध और अधिगमकर्ताओं की शिक्षा पर प्रतिबिंब करना।
- शैक्षिक और सामाजिक समस्याओं के प्रति समझ विकसित करना और उसे अद्यतन बनाना।
- शिक्षा को अन्य व्यावसायिक गतिविधियों से जोड़ना जैसे शिक्षण, अध्यापक शिक्षा, पाठ्यचर्या विकास और परामर्श।
- बुद्धिमत्तापूर्ण अलगाव को तोड़कर अपने अनुभव व दृष्टि पर दूसरों के साथ विचार-विमर्श करना।

सेवारत कार्यक्रम में सहभागिता, स्पष्ट उद्देश्य, इलेक्ट्रानिक मीडिया का उपयोग इत्यादि को शामिल करना चाहिए। ज्यादा प्रशिक्षण, अनियमित्ता, उपरी आदर्शों पर प्रशिक्षण से बचना चाहिए। इस तरह के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर सेवारत अध्यापक शिक्षा के हर स्तर के लिए पाठ्यचर्या बनाई जाए।

अध्यापक शिक्षा का वैश्विक संदर्भ

भारत में शिक्षक-शिक्षा के विकास की प्रक्रिया पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि अलग-अलग रूपों और संरचनाओं के द्वारा यह न सिर्फ सत्त् विकास की ओर अग्रसर होती रही, बल्कि बदलते समय के साथ इसने अपने आपको ढालने की कोशिश भी की है। भारत में शिक्षण के क्षेत्र की बढ़ती हुई आवश्यकता, शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम से प्राप्त अनुभव और त्तसंबंधी जरूरतों का आधार, इन सभी ने मिलकर शिक्षक-शिक्षा की पद्धति, स्वरूप, विषय वस्तु और संरचना को प्रभावी ढंग से संचालित करने वाले मुद्दों पर विचार करने की आवश्यकता को और पैना कर दिया है। भारत के संविधान में एक ऐसे न्यायपूर्ण, समानता और भाईचारे की भावना से युक्त समाज की परिकल्पना की गई है, जिसमें व्यक्ति की गरिमा तथा राष्ट्र की एकता और अखंडता के प्रति आश्वस्त हुआ जा सके।

आज विश्व में घटी किसी भी घटना का हर व्यक्ति पर प्रभाव नजर आता है। आज मानव एक वैश्विक मानव बन गया है। शिक्षा के उद्देश्य राष्ट्रीय उद्देश्यों के साथ वैश्विक संदर्भ को भी ध्यान में रखकर बनाने चाहिए। आज सूचना तकनीकी व संप्रेषण साधनों से ज्ञान का विस्तार चारों ओर हो गया है। भारत में शिक्षक-शिक्षा में आजादी के बाद कोई बड़ा परिवर्तन नजर नहीं आता है। आज शिक्षक-शिक्षा अपने पुराने परिपाटी नियमों पर नहीं चल सकती है। आज विश्व में आतंकवाद की समस्या चारों ओर घर कर

गई है। पर्यावरण प्रदूषण, आर्थिक असमानता, अमीरी–गरीबी का बढ़ता दायरा, आर्थिक असंतोष, ग्लोबल वार्मिंग, शहरीकरण की बढ़ती समस्याएं, सांप्रदायिकता के बदलते स्वरूप, बढ़ती जनसंख्या इत्यादि ऐसी समस्याएं हैं जिनका स्वरूप वैश्विक है। अध्यापक शिक्षा केवल राष्ट्रीय समस्याओं को ही नहीं बल्कि वैश्विक समस्याओं को भी ध्यान में रखकर अपने उद्देश्य निर्धारित करे तो विद्यार्थी की एक वैश्विक संचेतना बन सकेगी। समय के साथ शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले विकास के कारण और विश्व समाज में हो रहे बदलाव का शिक्षक–शिक्षा पर भारत में गहरा प्रभाव पड़ रहा है। शिक्षक की भूमिका व उसकी अपेक्षाओं तथा शालेय शिक्षा में आये बदलाव के मद्देनजर शिक्षक–शिक्षा की प्रासंगिकता बढ़ गई है।

आज विश्व में शिक्षा व शिक्षक–शिक्षा के क्षेत्र में हुए बदलावों और दूसरी तरफ सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक क्षेत्र के दबावों से इसके स्वरूप में परिवर्तन जरूरी है। इंटरनेट क्रांति व कंप्यूटरीकरण से शिक्षण में तीव्र परिवर्तन आ रहे हैं। शिक्षण के तरीकों में सूचना व संप्रेषण तकनीकी से बदलाव आया है। आज किसी भी देश के विकास में सूचना तकनीकी का अहम स्थान है इसलिए अध्यापक शिक्षा को भी अपने आपको बदलते सांचे में ढालना होगा। आज शिक्षा को वैश्विक संदर्भ में केवल ज्ञान प्रदान करने या केवल गढ़ी–गढ़ाई वस्तु उत्पन्न कर देने से संबंधित नहीं माना जाता बल्कि उसे जिज्ञासा उत्पन्न करने, उचित रुचि, प्रवृत्तियों और मूल्यों को विकसित करने तथा स्वतंत्र अध्ययन एवं चिंतन करने के लिए आवश्यक कौशल निर्मित करने एवं स्वयं निर्णय लेने से संबंधित माना जाता है। अध्यापक शिक्षा को इस पूरे संदर्भ को ध्यान में रखकर शिक्षण प्रक्रिया अपनानी जरूरी है।

अध्यापक शिक्षा में गुणात्मकता का प्रश्न

विह्यटी (1991) ने अध्यापक शिक्षा में गुणात्मकता के लिए निम्न बिंदुओं पर जोर दिया है :

- योग्य अध्यापक के स्तर पर विभिन्न सहभागियों (प्रशिक्षण संस्थान, स्कूल) की उच्च स्तरीय सहभागिता होनी चाहिए।
- अध्यापक के लिए भावी क्षमताओं, दक्षताओं व योग्यताओं का स्पष्टीकरण तौर पर परिभाषित हो जो कि अभ्यास के आधार पर दृष्टिकोण रखता हो।
- अच्छी गुणवत्ता वाली व्यवस्था के अकादमिक वैधता का अनुवीक्षण हो।

- व्यावसायिक प्रत्यायन का प्रशासन अध्यापक शिक्षा प्रत्यायन परिषद द्वारा हो जिससे सार्वजनिक उत्तरदायित्व निश्चित हो।
- राष्ट्रीय फ्रेमवक्र में स्थानीय व अनुभागीय आवश्यकताओं की सोच-समझ के साथ गंभीरता हो।

भोपाल में 1995 में यूनेस्को–एन.सी.टी.ई. की ''अध्यापकों का व्यावसायिक स्तर पर'' आयोजित कांफ्रेंस में अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक संबंधी निम्न सुझाव दिये गये:

- सभी सेवा पूर्व अध्यापक शिक्षा को व्यापक, गहन, श्रमसाध्य बनाना चाहिए और उसकी अवधि सही होनी चाहिए, जिससे वास्तव में व्यावसायिक निपुणता छात्र अध्यापकों में आ सके।
- सेवा पूर्व शिक्षा के विभिन्न स्तरों के कार्यक्रमों को वृहत रूप में पुनर्संरचित करना चाहिए जिसमें कि विषय, पैडॉगॉजी, दक्षता व दृष्टिकोण की, भूमिका व कार्यों में प्रभावी रूप से उपयोग दिखे।
- समय व क्रेडिट के अनुसार सेवापूर्ण शिक्षा कार्यक्रमों में अभ्यास कार्य, विशेषकर शिक्षण-अभ्यास और अन्य दत्त कार्य को ज्यादा महत्व दिया जाना चाहिए।
- सेवापूर्व अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों के सैद्धांतिक घटकों को शिक्षा पाठ्यचर्या में आधुनिक व प्रभावी अंतर्निहित रूप में संप्रेषण कौशल, आधुनिक तकनीकी, व्यावसायिक नजरिये व उत्तरदायित्व को शामिल करना चाहिए।

गुणात्मक अध्यापक शिक्षा का पाठ्यचर्या प्रारूप 1998 ने सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम में गुणवत्ता के लिए निम्न बिंदुओं की ओर इंगित किया है :

- कार्यक्रम किस प्रकार कार्यान्वित किया गया है?
- इसका संदर्भ क्या है? क्या कार्यक्रम वर्तमान शैक्षिक संदर्भ में सार्थक है?
- उद्देश्य, अवधि तथा संसाधनों की दृष्टि से क्या कार्यक्रम का नियोजन यथोचित ढंग से किया गया है?
- क्या कार्यक्रम के द्वारा सभी या अधिकतर प्रतिभागियों की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है?
- क्या कार्यक्रम में लागत प्रभावशीलता है?

पाठ्यचर्या प्रारूप 1998 ने भविष्य के लिए दिशानिर्देश में कुछ सुझाव दिये हैं कि

सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम की जरूरत ज़मीनी स्तर से उभरनी चाहिए और कार्यक्रम नियोजन में सहभागी तथा कार्य संपादन रणनीतियाँ क्रियात्मक होनी चाहिए। सेवाकालीन शिक्षा के लिए आधार सामग्री का विकास बहुत आवश्यक है। मुद्रण, वीडियो कैसेट तथा कम्प्यूटर कार्यक्रम के रूप में अच्छे किस्म की आधार सामग्री विकसित की जा सकती है। चलती-फिरती प्रशिक्षण टीम पर भी विचार किया जा सकता है। अल्पयोग्यता वाले अध्यापकों को शीघ्रातिशीघ्र प्रशिक्षण देना चाहिए।

Dave (1999) ने प्रभावी शिक्षक शिक्षा के पाँच प्रदर्शन क्षेत्र माने हैं। (1) कक्षा-कक्ष में निष्पादन (2) स्कूल स्तर पर निष्पादन (3) स्कूल से इतर बाहरी गतिविधियों में निष्पादन (4) अभिभावकों से संबंध व सहयोग से संबंधी निष्पादन (5) समुदाय से सहयोग संबंधी निष्पादन।

NAAC (2004) ने अध्यापक शिक्षा संस्थानों की गुणवत्ता के निम्न पहलू व संकेतक बताये हैं :

- पाठ्यचर्या योजना व निर्माण जिसमें उद्देश्य आधारित, पाठ्यक्रम विकास, वैकल्पिक कार्यक्रम, अकादमिक लचीलापन और पृष्ठपोषण यंत्र-प्रबंध आधारित हो।
- पाठ्यचर्या लागू करने की प्रक्रिया व मूल्यांकन जिसमें दाखिला प्रक्रिया, विभिन्न गुणों वाला, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया, अध्यापक गुणवत्ता, शिक्षण का मूल्यांकन, अधिगम का मूल्यांकन और परीक्षा सुधार कार्य है।
- शोध कार्य, विकास और विस्तार जिसमें शोध कार्य की प्रगति, शोधों की प्राप्ति, पब्लिकेशन, परामर्श प्रक्रिया, विस्तार गतिविधियां, विस्तार और संबंधों में सहभागिता।
- अवसंरचनात्मक और अधिगम संसाधन जिसमें भौतिक सुविधाएं, अवसंरचनात्मक मरम्मत, पुस्तकालय अधिगम स्रोत, कम्प्यूटर अधिगम स्रोत के तौर पर और अन्य सुविधाएं।
- विद्यार्थी सहायता और प्रगति जिसमें विद्यार्थी प्रोफाईल, विद्यार्थी प्रगति, विद्यार्थी विकास, विद्यार्थी गतिविधियां हैं।
- संगठन और प्रबंध जिसमें–उद्देश्य आधारित निर्णय निर्माण, संगठनात्मक संरचना, कार्यकारिणी की शक्तियां व कार्य, दृष्टिकोणात्मक योजना, मानव शक्ति योजना और भर्ती, प्रगति मूल्यांकन, स्टाफ विकास कार्यक्रम, संसाधन गत्यात्मकता और वित्तीय प्रबंध।

- स्वस्थ अभ्यास जिसमें संपूर्ण गुणवत्ता प्रबंधन, नवीनीकरण, मूल्य आधारित शिक्षा, सामाजिक उत्तरदायित्व और नागरिक भूमिका, संपूर्ण विकास और संस्थान की पहलें।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 (5.2.3 पृष्ठ 122–124) में शिक्षक शिक्षा के कार्यक्रम में बदलाव के कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं पर ध्यान दिया गया है।

शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम में शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं की समझ को प्राथमिकता दी जाए और ज्ञान को अनुभव आधारित समझा जाए। अधिगमकर्ता की अधिगम में सहभागिता होनी चाहिए। शैक्षिक चिंतकों के विचारों को शिक्षक–प्रशिक्षक प्रयोग में लायें। अब शिक्षक की भूमिका ज्ञान के स्रोत के बदले एक सहायक की होगी जो सूचना को ज्ञान/बोध में बदलने की प्रक्रिया में विविध उपायों से शैक्षणिक लक्ष्यों की पूर्ति में मदद करे। ज्ञान को एक सत्त प्रक्रिया माने जाने लगा है। शिक्षक–प्रशिक्षण के अवयवों का आधार विस्तृत होना चाहिए इसलिए शिक्षा की दृष्टि से सजग प्रयास किया जाए। शिक्षक–शिक्षा में ज्ञान शिक्षा के संदर्भ में बहु–अनुशासनिक होता है। शिक्षक–प्रशिक्षक कार्यक्रम से सिद्धांत और व्यवहार को समन्वित रूप में होना चाहिए। विद्यार्थी की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक संदर्भों की ओर अधिक बल देने की भी आवश्यकता है। विविध प्रकार के संदर्भों के कारण शिक्षण में विविधता लाने की जरूरत है। शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रमों में समकालीन भारतीय समाज के मुद्दों और चिंताओं, उसके बहुलतावादी स्वभाव और पहचान, लिंग, समता, जीविका और गरीबी के मुद्दों के लिए स्थान होना चाहिए जिससे शिक्षा व समाज के संबंधों की अधिक गहरी समझ होगी। शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रमों में मूल्यांकन एक सत्त प्रक्रिया होनी चाहिए। मूल्यांकन ज्यादातर अंक आधारित (संख्यात्मक) न होकर एक पैमाने (गुणात्मक) पर किया जाएगा। इस तरह शिक्षक–शिक्षण संबंधी नयी दृष्टि स्कूल व्यवस्था में बदलावों के प्रति अधिक संवेदनशील होगी।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षक–शिक्षा की चुनौतियाँ व समस्याएं

अध्यापक शिक्षा का निजीकरण – पिछले 10–15 सालों में अध्यापक शिक्षा का निजीकरण ने इसे विभिन्न आयामों में प्रभावित किया है। आज शिक्षक–शिक्षा में जिस तरह स्ववित्त पोषित संस्थाओं को बढ़ावा दिया जा रहा है, उससे शिक्षक शिक्षा पूरी तरह व्यवसाय बनकर रह गई है। स्ववित्त पोषित संस्थाओं में शिक्षक शिक्षा को लेकर किसी

भी तरह का अनुशासन नजर नहीं आता है। इस संबंध में स्पष्ट मानक व मानदंड भी नहीं हैं। अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों व कोर्सों को सामान्य बी.ए., बी.काम की तरह कराया जा रहा है। किसी भी तरह की निश्चित योजना किसी भी स्तर पर नहीं है। अकादमिक सत्र भी बहुत से विश्वविद्यालयों में नियमित नहीं है। विद्यार्थी और कार्यकारी संस्थाएं दोनों ही अध्यापक शिक्षक को लेकर गंभीर नहीं हैं। विद्यार्थी का दाखिला, प्रयोगात्मक परीक्षा, शिक्षण-अभ्यास, दत्त कार्य, परीक्षा परिणाम, संकाय सदस्यों का चुनाव इत्यादि सभी में किसी भी तरह के मानक व अनुशासन नहीं है। सभी तरह का सामान्य मापदंड व मानक भी बरकरार नहीं रहे हैं। समाज में भी अध्यापक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों को लेकर भ्रांति व संदेह है। अब इसे केवल पैसे का भी खेल समझा जाने लगा है। यह शिक्षा अनुशासन के सामने बहुत बड़ी चुनौती है। पूरे भारतवर्ष में बी.एड. करने के लिए स्ववित्त पोषित संस्थानों की बाढ़ सी विगत 10-15 साल से आई हुई है। यह आश्चर्यजनक है कि क्या हजारों शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थानों को शिक्षक-प्रशिक्षक मिल पाएंगे। एन.सी.टी.ई. ने समय-समय पर अध्यापक-प्रशिक्षण कॉलेजों में नियुक्ति की योग्यताओं को कम किया है। साफ तौर पर जगजाहिर है कि बहुत ही कम योग्यताओं वाले अप्रशिक्षित शिक्षक प्रशिक्षक इन संस्थानों में नियुक्त किये जाते हैं और इस तरह क्या गुणवत्ता के स्तर की बात इन अध्यापक शिक्षण संस्थानों में की जा सकती है। यह बहुत बड़ी चुनौती हैं

अध्यापक शिक्षा और स्कूल पाठ्यचर्या दोनों अलगाव में कार्य करते हैं। दोनों में किसी भी तरह का संबंध नहीं है। सेवापूर्व अध्यापक पाठ़यचर्या अध्यापकों व विद्यार्थियों की जरूरत व माँगों को नहीं दर्शाता है। अब इसे पुनर्संशोधित व पुनर्रचना की जरूरत है। अध्यापक शिक्षा की पाठ्यचर्या का निर्माण राष्ट्रीय स्तर पर तीन एजेंसियां प्रमुख तौर पर करती हैं एन.सी.टी.ई., यू.जी.सी. और एन.सी.ई.आर.टी.। इससे इस क्षेत्र में काफी भ्रम पैदा हुआ है। इसलिए तीनों में प्रभावी समन्वय और संबंध होना चाहिए।

सेवारत शिक्षा कार्यक्रम का कोई भी स्थायी प्रबंध नहीं है। प्रशिक्षण कार्यक्रम तदर्थ आधार पर आयोजित किए जाते हैं। यह जरूरी है कि व्यवस्थित और व्यापक नीति के आधार पर इसे राष्ट्रीय स्तर पर मजबूत और समन्वित किया जाए जिसमें यू.जी.सी., एन.सी.ई.आर.टी., एन.सी.टी.ई., न्यूपा, एस.सी.ई.आर.टी., विश्वविद्यालय विभाग, अध्यापक शिक्षा कॉलेज की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा की पाठ्यचर्या व पाठ्यक्रम पर किसी भी तरह का विचार-विमर्श नहीं होता है। अधिकांश कार्यक्रमों में भाषण आधारित अधिगम अपनाया जाता है, जिसमें प्रशिक्षुओं

को भागीदारी करने का मौका नहीं मिलता। इसमें केवल विशेषज्ञों से ज्ञान प्राप्त करने पर ही जोर दिया जाता है। नयी तकनीकों पर आधारित प्रशिक्षण नहीं होता है। प्रशिक्षण संस्थानों में कम्प्यूटर तथा अन्य तकनीकी सुविधाओं की उपलब्धता अपर्याप्त है। इसी वजह से सूचना व तकनीकी की संभावनाएं प्रशिक्षण संस्थानों व विद्यालयों का माहौल नहीं बदल सकी।

अध्यापक शिक्षा को आज की जरूरतों के हिसाब से नहीं बनाया गया है। आज ICT का युग है। इसी वजह से लैपटॉप संस्कृति भी जोर पकड़ रही है। अध्यापक शिक्षा में अभी भी परंपरागत शिक्षण विधियों, अभ्यास विधियों, प्रयोगात्मक कार्यों, दत्त कार्यों, शिक्षण अभ्यास, कार्यानुभव को अपनाया जा रहा है। अध्यापक शिक्षा के संपूर्ण कार्यक्रम में नवीनीकरण व नवाचारी ढंगों की जरूरत हैं। अभी भी बहुत से विश्वविद्यालयों में शैक्षिक तकनीकी आवश्यक विषय नहीं है। शिक्षक-प्रशिक्षक भी आधुनिक ICT से पारंगत नहीं हैं। बहुत से शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में शैक्षिक तकनीकी उपकरणों की भारी कमी रहती है। प्रत्येक विषय में अंतर्निहित्ता के साथ सब कुछ पढ़ना होगा ताकि शैक्षिक तकनीकी का सहज रूप बन सके।

अध्यापक शिक्षा का कोर पाठ्यचर्या नहीं है। कुछ विषय वस्तु ऐसी होनी चाहिए जो सभी विद्यार्थियों तक पहुंचे। अध्यापक शिक्षा में मानव अधिकार शिक्षा, शांति की शिक्षा, आतंकवाद की समस्या, पर्यावरण प्रदूषण, बढ़ती जनसंख्या, आपदा प्रबंधन, भारतीय संविधान के मुख्य पहलू, समसामयिक सामाजिक समस्याएं इत्यादि की बहुत कमी प्रकट हो रही है। इस पर शैक्षिक प्रशिक्षण समुदाय को ध्यान देना जरूरी है।

बी.एड. कार्यक्रम बहुत अल्प समय के लिए होता है। इसकी अवधि सामान्यतया 8-9 महीने है। इतने कम समय में क्या प्रशिक्षु अध्यापक शिक्षण अभ्यास, सांस्कृतिक कार्यक्रम, अध्यापक व्यक्तिव विकास, दत्त कार्य, सैद्धांतिक विषयों की पढ़ाई, कम्प्यूटर शिक्षा, शैक्षिक भ्रमण इत्यादि में दक्ष व प्रशिक्षित हो पाएगा। बहुत से आयोग व योजनाओं ने बी.एड. की अवधि दो साल करने की सिफारिश की है लेकिन इसे अभी तक अमल में नहीं लाया गया है। इसलिए शिक्षा के प्रति अध्यापक का दृष्टिकोण में सूक्ष्म परिवर्तन के लिए अधिक समय चाहिए।

अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षक वर्ग की भी कमी है। सेवा पूर्व व सेवारत कार्यक्रमों के लिए गुणवत्ता आधारित शिक्षा की उपलब्धता शिक्षक-प्रशिक्षक पर निर्भर है। शिक्षक प्रशिक्षकों में विषय के अनुरूप भी विशेषज्ञता की कमी रहती है। प्राथमिक शिक्षा,

माध्यमिक शिक्षा, विशिष्ट शिक्षा, विज्ञान शिक्षा, शैक्षिक तकनीकी, दूर शिक्षा में अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम के विशेषीकरण के अनुसार विशेषज्ञता होनी चाहिए।

वर्तमान समय में अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों में छात्र-अध्यापकों की चयन प्रणाली संतोषजनक नहीं है। चयन मेधा अंक, साक्षात्कार, प्रवेश परीक्षा, विषय में प्राप्त अंकों के आधार पर होता है। बी.एड., एम.एड., जे.बी.टी., बी.एड. विशिष्ट, बी.एल.एड., एम. एड. में विशेषीकरण इत्यादि में चयन के लिए वैध, परीक्षण आधारित व विश्वसनीय प्रक्रिया की जरूरत है जिससे शिक्षण व्यवसाय के प्रति धनात्मक दृष्टिकोण रखने वाले अभ्यर्थियों का चयन हो जो कि विद्यालयों में गुणात्मक विकास तथा वृद्धि कर सकें।

आज भारत में दूरस्थ माध्यम व पत्राचार द्वारा व्यापक स्तर पर शिक्षक-शिक्षा दी जा रही है, जिसमें मुक्त विश्वविद्यालय प्रमुख है। नियमित विश्वविद्यालयों द्वारा भी दूरस्थ माध्यम से शिक्षक शिक्षा दी जा रही है। आज पत्राचार पाठ्यक्रम में अभ्यास सामग्री, संपर्क कार्यक्रम तथा अध्यापन अभ्यास की गुणात्मक की कमी है। प्रवेश तथा संचालन की परिसीमा सही नहीं है। बी.एड. पत्राचार पाठ्यक्रमों को विश्वविद्यालयों के लिए धन संग्रह का साधन मात्र नहीं समझा जाना चाहिए। इग्नू ने स्वयं अधिगम सामग्री बनाने के अच्छे प्रयास किये हैं, लेकिन ज्यादातर विश्वविद्यालयों में पत्राचार द्वारा अच्छी अधिगम सामग्री उपलब्ध नहीं करवाई जा रही है। दूरस्थ माध्यम से शिक्षण सामग्री, मीडिया और तकनीकी प्रयोग, अच्छी गुणवत्ता आदि की चुनौतियां भी हैं। ई-लर्निंग के युग की समस्याएं भी विद्यमान हैं। अध्यापक शिक्षा के उद्देश्यों के संदर्भ में शिक्षण अभ्यास, पाठ्यचर्या, प्रायोगिक कार्य, अभ्यासात्मक कार्य, दत्त कार्य की भी अच्छी गुणवत्ता नहीं है। दूर शिक्षा की विधि वह समस्त गतिविधियों का एक समुच्चय है जिसमें शिक्षक और शिक्षार्थी एक-दूसरे के आमने-सामने न होकर अपना-अपना कार्य करते हैं तथा इन्हें एक तीसरे माध्यम की आवश्यकता होती है। इस तीसरे माध्यम में सेटेलाईट दूरदर्शन या टेली कांफ्रेंसिंग उल्लेखनीय है। परंतु अभी भी भारतीय ग्रामीण व सुदूरवर्ती इलाकों में सूचना तकनीकी की भारी कमी है जो कि इस पूरी व्यवस्था पर सवाल उठाती है। पाठ्यचर्या व स्कूल अनुभवों का भी कोई संबंध नजर नहीं आता है। सैद्धांतिक व निजी अभ्यास, कक्षागत अभ्यास, स्कूल सुधार इत्यादि की भी कमी है। इसलिए दूरस्थ माध्यम में इन सभी कमियों को दूर करना जरूरी है।

अध्यापक शिक्षा की पाठ्यचर्या व पाठ्यक्रम में समग्र दृष्टिकोण नहीं है। ग्रामीण

पृष्ठभूमि के विद्यार्थी, शहरी क्षेत्रों के विद्यार्थी, विकसित-अविकसित क्षेत्र, पब्लिक स्कूल, सरकारी स्कूल, नवोदय स्कूल, सैनिक स्कूल इत्यादि क्या सभी संदर्भों में एक ही प्रशिक्षण छात्र अध्यापक को दिया जाए इस समस्या पर आज विचार-विमर्श जरूरी है। अध्यापक शिक्षा का पाठ्यक्रम सामान्य प्रशिक्षण दे रहा है लेकिन आज इसमें विशेषीकरण की माँग बढ़ती जा रही है। सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक, प्रशासनिक, संगठनात्मक, परिदृश्य भी अलग-अलग है तो आज हमें एक समग्र दृष्टिकोण के पाठ्यचर्या की जरूरत है। पाठ्यचर्या अध्ययन और नौकरी की आवश्यकताओं के संबंध भी बहुत कम है।

वर्तमान प्रशिक्षण पाठ्यक्रम छात्र अध्यापक को इतना अवसर प्रदान नहीं करता कि वह शिक्षण स्तर की विभिन्न समस्याओं की समझ बना सके। पाठ्यचर्या का विद्यालयी वातावरण से अधिक संपर्क नहीं होता और वह विभिन्न विद्यालयों की प्रकृति के अनुसार भी नहीं है। छात्र-अध्यापकों को अनुभव द्वारा सीखने (करके सीखना) का मौका बहुत कम दिया जाता है। नये अध्यापक विद्यालयों में उन समस्याओं का सामना करते हैं, जिनका हल मात्र अनुभव द्वारा ही किया जा सकता है। प्रशिक्षण कार्यक्रम केवल व्याख्यानों से भरे होते हैं। विद्यालयों के कठोर एवं परंपरागत कार्यक्रम के अंतर्गत अध्यापक प्रशिक्षण से प्राप्त उपयोगों को भुला दिया जाता है और बाद में पुस्तकीय ज्ञान पर निर्भर रहकर अधिगम के सिद्धांतों का कक्षा-कक्ष स्थिति में कोई उपयोग नहीं होगा। अधिकांश अध्यापक-शिक्षा संस्थाओं में अंकों व समय के संदर्भ में सैद्धांतिक पाठ्यक्रम पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है।

शिक्षक-शिक्षा की पाठ्यचर्या में अभ्यास तथा सत्र-प्रयोगात्मक कार्य पर बल दिया जाता है। प्रयोगात्मक कार्यों में शिक्षण अभ्यास, प्रोजेक्ट, मनोवैज्ञानिक प्रयोग, श्रव्य-दृश्य सामग्री, सामुदायिक सेवाएं, सहगामी क्रियाएं आती हैं। इस तरह के प्रयोगात्मक कार्यों के प्रशिक्षण के बाद भी विद्यालयी जीवन में इनका बहुत कम प्रभाव देखा जा रहा है, इसलिए इन कार्यों के संचालन, संगठन व शिक्षण को प्रशिक्षण कार्यक्रम में पुनर्संशोधित व लक्ष्यों के आधार पर बनाना होगा। शिक्षण अभ्यास भी कक्षाओं की प्राप्ति पर निर्भर करता है। स्कूल से संबंधित कुछ साधारण समस्याएं होती हैं जो कि अभ्यास-शिक्षण में आती हैं। छात्रों के पढ़ने में विभिन्नता, स्कूल प्रशासन का सहयोग न मिलना, ये सब बातें शिक्षण अभ्यास को प्रभावरहित बना देते हैं। यह समस्या भी बड़ी है कि सामुदायिक जीवन द्वारा सही प्रजातांत्रिक अभिवृत्ति निर्मित करने का प्रयास नष्ट हो गया है।

शिक्षक–शिक्षा कार्यक्रम का सारत्तव वह विधि है जिसके द्वारा इसका कार्यान्वयन किया जाता है। कार्यान्वयन करते समय प्रशिक्षण के इच्छुक छात्र–शिक्षकों के गुण, विषयवस्तु की प्रकृति, शैक्षणिक गतिविधियाँ, उपलब्ध बुनियादी प्रबंध तथा सांगठनिक आवश्यकताओं को मद्देनजर नहीं रखा जाता है। शिक्षक–शिक्षा के मामले में खास करके प्रत्यक्ष शिक्षण वाली विधि को छोड़कर कई अन्य विधि अपनाने के मामले में बड़ा संकोच रहा है। अध्यापन–अभ्यास की जो विधियां प्रशिक्षुओं को सिखाई जाती हैं, सीखी गई शिक्षण विधियों का शिक्षण में प्रयोग करना उन्हें आवश्यक नहीं लगता है। शिक्षक–शिक्षा में अच्छी मूल्यांकन व्यवस्था का होना जरूरी है। व्यावहारिक स्तर पर शिक्षक–शिक्षा में मूल्यांकन के मामले में कई समस्याएं उत्पन्न होती हैं। वर्तमान नीतियों व शिक्षक–प्रशिक्षण के कार्यक्रमों में मूल्यांकन विधियों के प्रति कोई उत्साह व सोच नजर नहीं आती है। सामान्यत: वर्ष के अंत में मूल्यांकन सबसे महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है। बाह्य परीक्षकों द्वारा मात्र पांच से पन्द्रह मिनट तक छात्र अध्यापकों के कार्य का अवलोकन करना भी इस प्रशिक्षण कार्य में मूल्यांकन को सही नहीं ठहराता है।

वर्तमान संदर्भ में शिक्षक–शिक्षा संस्थाओं में कार्यरत शिक्षक–प्रशिक्षकों की समस्या पर ध्यान देने की जरूरत है। आज प्रशिक्षकों की क्षमता का स्तर, उनकी जानकारी को अद्यतन बनाने के तरीके तथा उनके शिक्षण के तौर–तरीकों की समीक्षा जरूरी हो गयी है। शिक्षक–प्रशिक्षक को आज विभिन्न शैक्षिक तकनीकी ज्ञान और शिक्षण शैलियों का ज्ञान और प्रशिक्षणार्थियों की व्यक्तिगत भिन्नताओं के मद्देनजर सक्षम बनाना बड़ी चुनौती है। आज छात्र अध्यापक सिद्धांत एवं व्यवहार का समन्वय भी नहीं कर पाते हैं, न ही अपनी गुणवत्ता में वृद्धि करने के लिए प्रेरित कर पाते हैं। ये समस्याएं भी शिक्षक प्रशिक्षकों के द्वारा पैदा हो रही हैं। शिक्षक–शिक्षा कार्यक्रमों की विविधता एक अन्य प्रकार की महत्वपूर्ण कठिनाइयाँ प्रस्तुत करती है। शिक्षक प्रशिक्षकों को स्वयं उन कौशलों में प्रवीणता होनी चाहिए जिनका विकास वे अपने छात्र अध्यापकों में करना चाहते हैं।

शिक्षक शिक्षा में किसी भी तरह की सूचना व्यवस्था व प्रबंध नहीं है। अप्रशिक्षित अध्यापकों के आंकड़े, बेरोजगार प्रशिक्षित अध्यापक, शिक्षक प्रशिक्षकों की विशेषज्ञता व संख्या, विभिन्न स्तर पर पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्या परिवर्तन की नियमित्ता, अध्यापक शिक्षा में नवाचारी कार्यक्रम इत्यादि एक जगह पर उपलब्ध नहीं है। विभिन्न संस्थानों के राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर अद्यतन जानकारी प्रयोग करने के लिए सूचना व संप्रेषण की व्यवस्था नहीं है। राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर बहुत सी प्रशिक्षण सामग्री

उपलब्ध है, परंतु शिक्षक प्रशिक्षकों व छात्र अध्यापकों को प्रशिक्षण सामग्री उपलब्ध कराने की किसी भी तरह की यांत्रिक व्यवस्था नहीं है। मॉड्यूलर दृष्टिकोण से प्रशिक्षण व निर्देशन सामग्री भी विकसित की जानी चाहिए, जिसे स्वयं अधिगम सामग्री व प्रशिक्षण सामग्री के तौर पर प्रयोग किया जा सकता है।

शैक्षिक उद्देश्यों व रणनीतियों के नियोजन में शिक्षकों और शिक्षक प्रशिक्षकों को अलग रखा जाता है जबकि इन्हीं दोनों को लागू करना है। परिणामस्वरूप वांछित कार्य योजना के ठीक विपरीत कार्य योजना लागू हो सकती है। इसलिए शैक्षिक कार्यक्रमों व योजनाओं की निर्माण प्रक्रिया में शिक्षकों की सहभागिता जरूरी है। विद्यालय शिक्षकों को समस्याओं की जमीनी जानकारी होती है, लेकिन इस प्रक्रिया में सबसे ज्यादा उपेक्षित वही है।

अध्ययन से प्राप्त सुझाव

- अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में अभ्यर्थी के चयन के संबंध में सही मानदंड बनाने चाहिए। उन्हीं अभ्यर्थियों का चयन हो जो वास्तव में शिक्षण-योग्यता रखते हों, अपने विषय का पूर्ण ज्ञान एवं शिक्षण व्यवसाय के प्रति सकारात्मक व प्रभावी दृष्टिकोण रखते हों। चयन में शिक्षण अभिक्षमता, विषय की समझ, बच्चे की समझ, समस्याओं पर दृष्टिकोण, बुद्धि मापन परीक्षा, अभिवृत्ति, अभिरुचि, भाषा संबंधी प्रवीणता, अनुक्रियात्मकता की जांच-परीक्षण किया जाना चाहिए। चयन के मानदंड प्राथमिक शिक्षक, माध्यमिक शिक्षक, उच्च माध्यमिक शिक्षक, विशिष्ट शिक्षक, विषय के शिक्षक इत्यादि के आधार पर हो।
- वर्तमान में शिक्षा की पद्धति व उसकी प्रक्रिया में बहुत त्वरित परिवर्तन हो रहा है। वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार भविष्य आधारित पाठ्यक्रम व पाठ्यचर्या होनी चाहिए। नई समस्याएं, चुनौतियां और सही दृष्टिकोण को तुरंत पाठ्यचर्या में शामिल करने के प्रावधान होने चाहिए। स्कूल पाठ्यचर्या में परिवर्तन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर कुछ अधिगम क्षेत्रों को अध्यापक-शिक्षा में शामिल करना पड़ेगा जो कि सूचना संप्रेषण तकनीकी के नये विकास, हाल ही की स्वास्थ्य समस्याएं, उर्जा और वातावरण, मानव अधिकार शिक्षा, आपदा प्रबंधन, शांति की शिक्षा, आतंकवाद की समस्या, भारतीय संविधान की मूलभूत शिक्षा हो सकते हैं। सेवापूर्व शिक्षा की पाठ्यचर्या में उदीयमान भारत में शिक्षा, शैक्षिक मनोविज्ञान, ICT, मूल्यांकन व

प्रबंध, कक्षा-प्रबंध, शिक्षण प्रवृत्ति व विधि इत्यादि विषयों में भी इसे हम शामिल कर सकते हैं। विशेष क्षेत्रों के विषय, परामर्श व निर्देशन, कंप्यूटर शिक्षा, शैक्षिक तकनीकी और स्वास्थ्य शिक्षा इत्यादि में भी हम समसामयिक आवश्यकताओं को शामिल कर सकते हैं। स्कूल की समस्याओं व शिक्षक-शिक्षा की पाठ्यचर्या में संबंध होना जरूरी है। इसलिए बड़े अंतराल के बाद शिक्षक-शिक्षा की पाठ्यचर्या में परिवर्तन नहीं हो, बल्कि समय-समय पर इसे अद्यतन बनाना चाहिए।

- शिक्षक शिक्षा में प्रयोगात्मक और सैद्धांतिक विषयों का मेलजोल होना चाहिए। सैद्धांतिक विषय प्रयोगात्मक कार्यों के अनुसार हो और प्रयोगात्मक कार्य सैद्धांतिक विषयों के अनुसार होने चाहिए। दोनों एक-दूसरे का अनुवर्तन करें। प्रयोगात्मक कार्य स्कूली अनुभव, स्कूल की प्रशासनिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, क्षेत्रीय, अधिगमकर्ता की विशिष्टताएं व समस्याओं, विषय की जटिलता, अधिगम सिद्धांतों का प्रयोग, श्रव्य-दृश्य सामग्री का स्कूल में प्रयोग, सूचना-तकनीकी का स्कूली वातावरण में इस्तेमाल इत्यादि पर होने चाहिए। प्रयोगात्मक कार्यों में स्कूली जीवन का वास्तविक आईना दिखना चाहिए। सैद्धांतिक पाठ्यक्रमों को भी स्कूली जीवन के अनुभव के आधार पर बनाना चाहिए। दत्त कार्यों का समय पर मूल्यांकन करके सुझाव छात्र-अध्यापकों को देने चाहिए।

- अध्यापक शिक्षा कार्यों में मूल्यांकन के लिए नवाचारी ढंगों को अपनाना जरूरी है। मूल्यांकन क्षमता व दक्षता आधारित होना चाहिए। आंतरिक मूल्यांकन के लिए विषयक प्रस्तुतीकरण, दत्त कार्य, कक्षा में विचार-विमर्श में सहभागिता, सप्ताह या माहवार संक्षिप्त परीक्षा, सांस्कृतिक कार्यों में सहभागिता, शिक्षण छात्राध्यापकों द्वारा नवाचारी ढंगों का प्रयोग, शैक्षिक भ्रमण, अध्यापक व्यक्तिव विकास इत्यादि के द्वारा कर सकते हैं। सत्रांत परीक्षा में प्रश्न-पत्रों का आधार स्कूली जीवन के आधार पर होना चाहिए, जिसमें विद्यार्थी अपना दृष्टिकोण रख सकें। अध्यापक-शिक्षा में मूल्यांकन एक लगातार प्रक्रिया की तरह हो, लेकिन वह बिल्कुल पारदर्शी होनी चाहिए।

- वर्तमान में अध्यापक शिक्षा के महत्वपूर्ण कार्यक्रम बी.एड. पाठ्यक्रम की अवधि केवल 1 साल है। अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य कौशल, मूल्य, व्यावसायिक अभिवृत्ति, व्यक्तिगत व्यक्तिव का विकास है जिसे 8-9 महीने की अवधि में प्रभावी रूप से विकसित करना मुश्किल है। इसलिए इस कार्यक्रम की

अवधि 2 साल की जानी चाहिए जिससे अध्यापक शिक्षा के आधारभूत कार्यक्रम बी.एड. में छात्र-अध्यापकों को शिक्षा व प्रशिक्षण समुचित मिले।

- अध्यापक शिक्षा के निजीकरण से इस अनुशासन का बहुत ज्यादा स्तर गिरा है। निजी संस्थान व्यावसायिक लाभ के हिसाब से शिक्षा उपलब्ध करवाते हैं। इसलिए NCTE व शिक्षा प्राधिकार संस्थाओं को स्ववित्त पोषित संस्थाओं की गुणवत्ता पर ध्यान देना चाहिए। ऐसा पाया गया है कि अपने निजी मकान में भी बी.एड. संस्थान चल रहे हैं, जो कि सोचनीय है।

- स्ववित्त पोषित संस्थानों में प्रायोगिक कक्ष, मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला, खेल का मैदान, कार्यानुभव कक्ष, अभ्यास शिक्षण की स्कूलों में व्यवस्था, दृश्य-श्रव्य सामग्री, अच्छी पुस्तकें व संदर्भ ग्रंथों का पुस्तकालय, शिक्षण विधियों के कक्ष इत्यादि उपलब्ध हो शिक्षक-शिक्षा के मानक व मानदंडों पर तभी इन्हें मान्यता देनी चाहिए। स्ववित्त पोषित संस्थानों में अध्यापक प्रशिक्षकों को उचित वेतनमान भी नहीं मिलता है। अध्यापक नियुक्ति के तरह-तरह के हथकंडे अपनाये जाते हैं। इसलिए अध्यापक शिक्षक-शिक्षा संस्थानों में हमेशा मानसिक दबाव में रहता है। यह जरूरी हो जाता है कि उचित प्राधिकार सत्ता इन संस्थानों में नियुक्ति के मानदंडों व अध्यापकों की योग्यता पर पैनी नज़र रखे। निजी संस्थानों में समय पर परीक्षा, दाखिला, शिक्षण और प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए जरूरी तय समय में होना चाहिए। छात्र-अध्यापकों की इसमें उपस्थिति को अनिवार्य बनाना जरूरी है।

- अध्यापक शिक्षा एक सत्त प्रक्रिया बनी रहनी चाहिए। सेवापूर्व शिक्षा व सेवारत शिक्षा दोनों का आपसी संबंध रहना जरूरी है। सेवारत शिक्षा का पाठ्यक्रम स्कूली अनुभव व अध्यापकों की सुविधा व विचार-विमर्श पर बनाना चाहिए। सेवारत शिक्षा के लिए उच्च स्तर पर कोई जिम्मेदार संस्थान होना चाहिए। अभी तक तदर्थ आधार व अनियमित प्रारूप में सेवारत शिक्षा चल रही है। राज्यों की एस.सी.आर.टी., डाईट, एन.सी.ई.आर.टी., न्यूपा, शिक्षा विज्ञान इत्यादि के कार्यक्रमों का सेवारत शिक्षा नियमित हिस्सा होना चाहिए। सेवारत शिक्षा के कार्यक्रमों का पृष्ठपोषण (फीडबैक) लेना चाहिए, इन्हें और ज्यादा उत्साहवर्द्धक व व्यावहारिक बनाया जा सके। इसके प्रशिक्षण में सैद्धांतिकता के बजाय स्कूली वातावरण की व्यावहारिक समस्याओं पर ध्यान देना चाहिए। सेवारत शिक्षा में शैक्षिक तकनीकी, समसामयिक

समस्याएं, ICT, शैक्षिक शोध, अध्यापक विकास इत्यादि पर ध्यान देना चाहिए। सेवारत शिक्षा के प्रशिक्षण कार्यक्रम लेक्चर विधि व्याख्यानों से भरे न होकर विचार-विमर्श पर आधारित होने चाहिए।

- सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी को अध्यापक शिक्षा में अंतर्निहित प्रक्रिया के तौर पर अपनाना चाहिए। तकनीकी पैडागॉजी में खासतौर पर तीन क्षेत्र हो सकते हैं - विषयवस्तु, पैडॉगॉजी और तकनीकी। ICT कौशल विकसित करने के लिए सामान्य जानकारी छात्र अध्यापकों को दी जाए, जिसमें प्रतिदिन की जिंदगी में इसे प्रयोग कर सके। इसमें विभिन्न सॉफ्ट्वेयर, हार्डवेयर का शिक्षा प्रक्रिया में प्रयोग सिखाना चाहिए। छात्र-अध्यापकों के शिक्षण विषय में भी इसे अंतर्निहित किया जा सकता है, जिससे वह इसे कक्षा आधारित स्रोत बनाकर शिक्षण की विभिन्न तकनीकों में इसे प्रयोग कर सकता है। शिक्षक-शिक्षा में प्रयोगात्मक पहलुओं में भी इसे शामिल किया जा सकता है। पाठ-विकास, दत्त कार्य के निर्माण में इनको शामिल करने पर जोर दिया जा सकता है। सेवा पूर्व शिक्षक एक अधिगम कर्ता, प्रबंधक, डिजायनर और शोधकर्ता होता है इसलिए हम उससे उम्मीद कर सकते हैं कि वह अपनी गतिविधियों में इसे शामिल करे और प्रशिक्षण प्राप्त करे। अंतर्निहित पहलुओं से हम शिक्षण में ICT कौशल विकसित कर सकते हैं।
- अध्यापक शिक्षा में समग्र संबंधी अंतर्निहित दृष्टिकोण होना चाहिए, जिसमें ज्ञान, विश्वास, खुलापन, कौशल, उत्तरदायित्व, शिल्पकारी, ईमानदारी, समझ, स्वयं अधि गम, समूहात्मक अधिगम, नम्रता, सामाजिक सरोकार, स्वायत्तता, शारीरिक, मानसिक, आत्मीय विकास, नेतृत्व, मेहनती, लगनशील, रिस्क उठाने वाला समग्र अध्यापक शिक्षा की विशेषताएं हैं। अधिगमकर्ता और अधिगम केन्द्रित वातावरण, जीवन की परिस्थतियों द्वारा अधिगम, अधिगम की स्वतंत्रता, सामूहिक जुड़ाव, विचारों व अनुभवों का आदान-प्रदान, अनुभवों पर ज्यादा ध्यान देना, संवाद एक महत्वपूर्ण उपकरण, शिक्षण व अधिगम का अंतर्निहित दृष्टिकोण, सिद्धांत की बजाय प्रायोगिक, सर्वांगीण विकास शामिल हो।
- शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों के पास एक आदर्श स्कूल की भी कमी है। आजादी के पहले व बाद में भी शिक्षा आयोगों व समितियों ने सुझाया है कि शिक्षक-शिक्षा संस्थानों के पास विभिन्न प्रशिक्षणों के लिए एक आदर्श स्कूल (प्रायोगिक) होना चाहिए। इसलिए शिक्षक-शिक्षा संस्थानों के लिए आदर्श स्कूल का होना बहुत जरूरी

है। इससे अध्यापक-शिक्षकों का भी स्कूली अनुभव व वातावरण से निरंतर संपर्क बना रहेगा। छात्र-अध्यापकों के लिए शिक्षण-अभ्यास व विभिन्न शैक्षिक प्रयोगों का प्रारंभिक ज्ञान इस तरह के आदर्श स्कूलों में मिल सकता है।

- अध्यापक शिक्षकों की शिक्षा भी अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम को प्रभावित करती है। अध्यापक शिक्षकों को विद्यालयी जीवन का अनुभव सामाजिक माहौल तथा सामुदायिक आकांक्षाओं की भलीभांति जानकारी होनी चाहिए। अध्यापक शिक्षकों को शिक्षा नीति व कार्यक्रमों के निर्धारण कार्यान्वयन रणनीतियाँ तथा अनुवीक्षण कार्यक्रमों से भी संबंधित होना चाहिए। शिक्षा के वैश्विक संदर्भ को भी ध्यान में रखना चाहिए। यह भी जरूरी है कि शैक्षिक विचारों के परीक्षण, विश्लेषण, विवेचन, विस्तार तथा संप्रेषण की क्षमता भी उनमें होनी चाहिए। इस तरह अध्यापक शिक्षक राष्ट्रीय आवश्यकताओं के साथ शिक्षा, शैक्षिक अनुसंधान, संचार प्रौद्योगिकी तथा नवाचारी, पाठ्यक्रम विकास इत्यादि को भी ध्यान में रखना आज के युग में जरूरी है। अध्यापक शिक्षा संस्थाओं की विशिष्ट समस्याओं पर ध्यान देने तथा अध्यापक शिक्षा को अधिक उत्तरदायी तथा अनुक्रियात्मक बनाने की भी आवश्यकता है। इसलिए अध्यापक शिक्षकों को सत्त व्यावसायिक विकास के लिए भी प्रोत्साहित करना है।
- शिक्षक-शिक्षा से जुड़ी उच्च प्राधिकार सत्ताओं का आपसी समन्वय होना जरूरी है। एन.सी.टी.ई., दूर शिक्षा परिषद, राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद के क्षेत्रीय केन्द्र, यू.जी.सी., राज्य स्तरीय संस्थान इत्यादि के बीच समन्वय होना जरूरी है। राष्ट्रीय स्तर पर एक ऐसी नीति व प्रारूप बनाना जरूरी है, जिससे अध्यापक शिक्षा संस्थानों की गुणात्मकता व मान्यता संबंधी सही जांच व परख हो सके। प्राधिकार सत्ताओं द्वारा प्रबंधात्मक विकेन्द्रीकरण भी किया जाना चाहिए, जिससे ज़मीनी स्तर की शिक्षक-शिक्षा से जुड़ी समस्याओं का पता चल सके और इससे शिक्षक-शिक्षा में पारदर्शिता भी बढ़ेगी।
- वर्तमान में दूरस्थ माध्यम द्वारा अध्यापक शिक्षा व्यापक स्तर पर दी जा रही है। शिक्षक शिक्षा के उद्देश्यों के मद्देनजर, प्रवेश परीक्षा, संचालनात्मक व्यवस्था, स्वयं अधिगम सामग्री, सूचना तकनीकी द्वारा उपलब्ध सामग्री व सुविधाएं, अभ्यासात्मक कार्य व दत्त कार्य बनाने चाहिए। दूरस्थ माध्यम द्वारा अच्छी शिक्षक-शिक्षा के लिए पाठ्यचर्या की पुनरीक्षा, अच्छा संगठन व प्रशासन, शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग और

शिक्षण शास्त्रीय उपागमों का विकास इस संदर्भ में होना चाहिए। दूरस्थ माध्यम के विद्यार्थियों को बुनयादी ICT सुविधाओं का ज्ञान देना जरूरी है जो कि मुखाभिमुख तौर पर होना चाहिए, जिससे दूर शिक्षा की सुविधाओं का भरपूर उपयोग विद्यार्थी कर सके। दूरस्थ माध्यम में शिक्षक कार्यक्रम में नियमित अनुशासन, संपर्क कक्षाएं, दत्त कार्य, अभ्यास कार्य, स्कूल के प्रायोगिक इत्यादि में आवश्यक उपस्थिति व अच्छे प्रदर्शन को सफलता का आधार बनाना चाहिए। दूरस्थ माध्यम द्वारा विद्यार्थी केवल डिग्री लेना ही अपना उद्देश्य न समझे बल्कि इसे अध्यापक शिक्षा के उद्देश्यों के आधार पर नियमित अनुशासन से इसे पूरा करें। ग्रामीण विद्यार्थियों की बाध्यताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए।

- मूल्य शिक्षा को भी अध्यापक शिक्षा में अंतर्निहित किया जाना चाहिए। कोठारी कमीशन (1964-66) ने सुझाया है कि विद्यार्थियों में आत्मविश्वास, सृजनात्मकता की पहलों के साथ सामाजिक सेवा की इच्छा को कार्य अनुभव के द्वारा सामान्य शिक्षा में शामिल करना चाहिए। 1986 की शिक्षा नीति ने भी अध्यापकों का स्तर और उनका सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भ में सामाजिक मूल्यों के दृष्टिकोण पर ध्यान केन्द्रित किया है। छात्र अध्यापकों को दिमाग, शरीर, बुद्धि और संवेगों के समग्र विकास का अधिगम अनुभव देना जरूरी है। इसलिए छात्र अध्यापकों को भी मूल्य आधारित शिक्षा देनी चाहिए। सूचना व संप्रेषण के युग में तेज गति के समाज में रहते हुए मूल्यों पर आज ध्यान विभिन्न संदर्भों से होना जरूरी हो गया है। सार्वभौमिकता व वैश्विकता को भी ध्यान में रखकर अध्यापक शिक्षा में मूल्यों की शिक्षा को अंतर्निहित करना चाहिए।

संदर्भ

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, 1948-49, भारत सरकार, नई दिल्ली।

माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1952-53, भारत सरकार, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग, 1964-66, भारत सरकार, नई दिल्ली।

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया (1983) रिपोर्ट ऑफ द नेशनल कमीशन ऑन टीचर-1, द टीचर एण्ड सोसाइटी, मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, नई दिल्ली।

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया (1985) चैलेंज ऑफ एजुकेशन : ए पॉलिसी पर्सपेक्टिव, मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986, भारत सरकार, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (पुनरीक्षा समिति), 1990, भारत सरकार, नई दिल्ली।

विहटी, जी. (1992), क्वालिटी कंट्रोल इन टीचर एजुकेशन, ब्रिटिश जर्नल ऑफ एजुकेशन स्टडीज (1) फरवरी

बस्ते के बोझ से मुक्ति (प्रो. यशपाल समिति), 1993, भारत सरकार, नई दिल्ली।

एन.सी.टी.ई. एक्ट (1993), www.ncte-india.org

अग्रवाल, बी.बी., (1996) आधुनिक भारतीय शिक्षा और समस्याएं विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

करीकुलम फ्रेमवर्क फार क्वालिटी टीचर एजुकेशन (1998), एन.सी.टी.ई., नई दिल्ली।

आर.एन. सक्सेना, मिश्रा वी.के., मोहंती आर.के. (1999), अध्यापक शिक्षा सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ।

अध्यापक शिक्षा में नीतिगत परिदृश्य, (2001) राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद, नई दिल्ली।

मियाँ, मोहम्मद (2004) प्रोफेशनलाइजेशन ऑफ टीचर एजुकेशन, मित्तल पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

के. गफ्फूर, अब्दुल (2004), टीचर एजुकेशन : नीड फॉर कांस्टीट्यूशनल अवेयरनेस प्रोग्राम, यूनि. न्यूज, 42 (42) अक्तूबर 18-24, 2004

वरनाल लुईस, पैलई एम.यू. (2004), आई.सी.टी. इन टीचर एजुकेशन : ए केस स्टडी, यूनि. न्यूज, सितंबर 27, अक्तूबर 03, 2004

वारानसी ललीनी, सुधाकर वी (2004) आई सी टी एण्ड टीचर एजुकेशन, एजुट्रैक, अप्रैल 2004

भोंसले, ए. रामा (2005) लोकल विज़डम क्वालिटेटिव इम्प्रूवमेंट इन टीचर ट्रेनिंग प्रोग्राम, एजुट्रैक, जून 2005

रॉय, राजर्षी (2005), रिथिंकिंग टीचर एजुकेशन : नीड ऑफ द डे, यूनि. न्यूज, 43 (51) दिसं. 19-25, 2005

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 (2006) एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

भाटिया, रंजन (2006) वैल्यू एजुकेशन इन टीचर एजुकेशन : इश्यू ऑफ कन्सर्न, यूनि. न्यूज, 44 (51) दिसं. 18-24, 2006

यादव, एस.के,, रेहान सम्बुल (2006) टीचर एजुकेशन इन इण्डिया : ईश्यूज एण्ड कन्सर्न, यूनि. न्यूज, 44 (38), सितं. 18-24, 2006

चटर्जी, सुनीमल कुमार (2006) न्यू ट्रेंड इन टीचर एजुकेशन, यूनि. न्यूज, 44 (40) अक्तूबर 02-08, 2006

मैथ्यू, जोजेन (2006) क्वालिटी इम्प्रूवमेंट प्रोग्राम इन टीचर एजुकेशन, एजुट्रैक, जनवरी 2006

खेरवादकर, अंजली, माधवी आर.एल. (2006), इनफॉरमेशन एण्ड कम्यूनिकेशन टेक्नोलॉजी इन एजुकेशन एन इंटीग्रेटेड एप्रोच, एजुट्रेक-जुलाई 2006

वर्मा, रोमेश (2007), ई-लर्निंग स्ट्रेटजी इन टीचर एजुकेशन, यूनि. न्यूज, 45 (18), अप्रैल 30-मई 06, 2007

यादव, एस.के. (2008) इन्नोवेशन इन एलिमेंट्री टीचर एजुकेशन, यूनि0 न्यूज, 46 (45) नवंबर 10–16, 2008

चौहान, सी.पी.एस. (2008), इज टीचिंग ए प्रोफेशन? यस एण्ड नो, यूनि. न्यूज, 46 (04) जनवरी 28, फरवरी 03, 2008

अध्यापक शिक्षा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2009 -www.ncte-india.org

नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 (2010) भारत का राजपत्र, मानव संसाधन विकास मंत्रालय।

माधवी, आर.एल. (2009) प्रोफेशन ऑफ टीचर एजुकेटर ए सिनॉरियो, एजुट्रैक, सितंबर 2009, वाल्यूम–9, नम्बर–1

सिंह, आर.पी. (2009) टीचर एजुकेशन : द अनरिच्ड एरियाज, यूनि. न्यूज, 47 (29) जुलाई 20–26, 2009

मल्होत्रा, एस.पी. (2009) रोल ऑफ एजुकेशन ईन एसूरिंग क्वालिटी इन टीचर एजुकेशन, यूनि. न्यूज, 47 (41) , अक्तूबर 12–18, 2009

सिंह, एस.डी. (2009) वर्किंग फॉर एक्सेलेंस इन टीचर एजुकेशन, यूनि. न्यूज, 47 (10) मार्च 09–15, 2009

रॉय, रूमा (2009), न्यू चैलेंज इन टीचर एजुकेशन, एजुट्रैक, फरवरी 2009, वाल्यूम–8, नम्बर–6

मिश्रा, सुभाष (2009) हॉलस्टिक कन्सर्न ऑफ टीचर एजुकेशन : एन इंटीग्रेटेड एप्रोच, एजुट्रैक, मार्च 2009, वाल्यूम 8, नम्बर–7

कोठारी, आर.जी., शैलॉट प्रेरणा (2009) टीचर एजुकेशन प्रोग्राम एट सेकेंडरी लेवल : सम इश्यूज, यूनि. न्यूज, 47 (25) जून 22–28, 2009

महेश्वरी, अमृता (2010) टीचर एजुकेशन वाया ओपन डिस्टेंस लर्निंग : ए डेमोक्रेटिक अल्टरनेटिव, यूनि. न्यूज, 48 (22) मई 31–जून 06, 2010

नंद गैरंग चरन, मिश्रा प्रदिप्ता कुमार (2010) प्रोफेशनल डेवलपमेंट ऑफ टीचर्स, एजुट्रैक, फरवरी 2010, वाल्यूम–9, नम्बर–6

वी.पटेल, जयंतीबाई (2010) ह्यूमन राईट एजुकेशन : इनक्लूजन इन द करीकुलम ऑफ टीचर एजुकेशन, एजुट्रैक, मार्च 2010, वाल्यूम–9, नम्बर–7

सिंह, वैदेही (2010), क्रिटिकल इश्यूज कन्सर्निंग टीचर एजुकेशन इन इण्डिया, एजुट्रैक, मई 2010, वाल्यूम 9, नम्बर–9

सिंह, सुनील कुमार (2010), रिवेम्पिंग टीचर एजुकेशन फॉर प्रोफेशनलिज्म, यूनि. न्यूज, 48 (20) मई 17–23, 2010

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

भारत में शिक्षा एवं आर्थिक विकास की काल मलिका में दीर्घकालीन स्थावरता का विश्लेषण

वीणा ठावरे* और **एन. जी. पेंडसे****

समष्टि आर्थिक दृष्टिकोण शिक्षा आर्थिक विकास संबंधों हेतु मानवीय पूंजी का स्कन्ध एवं प्रति व्यक्ति आर्थिक उत्पादन के सहसंबंध पर बल देता है। श्रम शक्ति में शैक्षणिक वृद्धि दो प्रकार से उत्पादन को प्रभावित करती है: (1) शिक्षा के द्वारा श्रम की कुशलता में वृद्धि होती है, जिससे अधिक उत्पादन करने की श्रम की क्षमता बढ़ती चली जाती है। (2) शिक्षा से श्रमिक की नव प्रवर्तन क्षमता में विस्तार होता है, जिससे न केवल स्वयं की उत्पादकता बल्कि अन्य श्रमिक की उत्पादकता में वृद्धि होती है।

श्रम शक्ति में शिक्षा का स्तर इस सशक्त एकत्रीकरण को एक पहलू के रूप में रखते हुए विकास की व्याख्या में शिक्षा के महत्व को कई अध्ययनों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। एक सर्व सामान्य मत के रूप में शिक्षा का प्रभाव यह है कि एक अतिरिक्त वर्ष का शालेय प्रशिक्षण व्यक्ति के निजी प्रत्याय दर में लगभग 5 से 15 प्रतिशत वृद्धि करता है। इस परिपेक्ष्य में शिक्षा आर्थिक विकास संबंधों की व्याख्या के लिए विभिन्न सिद्धांत एवं प्रारूप अर्थशास्त्रियों द्वारा प्रस्तुत किए गए।

वर्तमान आन्तर्जन्य विकास प्रारूप यह समझने में पर्याप्त रूप से उपयोगी है कि मानवीय एवं भौतिक पूंजी संचयन में ह्रासमान प्रत्याय के क्रियाशील होने के बावजूद विकसित अर्थव्यवस्थाओं एवं वैश्विक सन्दर्भ में दीर्घकालीन विकास किस प्रकार हो रहा है। किसी भी राष्ट्र की शैक्षणिक प्रणाली वैश्विक आर्थिक संरचना का एक भाग होती है, तथा इसे आर्थिक विकास का प्रवर्तक माना जाता है, आर्थिक विकास के

* शोधार्थी, अर्थशास्त्र का स्नातकोत्तर अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर, म.प्र.

** विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र का स्नातकोत्तर अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर, म.प्र.

प्रोत्साहन में शिक्षा को धनात्मक भूमिका प्रदान की गई है, तथा शैक्षणिक एवं आर्थिक क्षेत्र में उन्नति हेतु अधिक ध्यान देना आवश्यक होता है। आर्थिक विकास में राष्ट्र के राष्ट्रीय मानवीय संसाधन का उपयोग इस प्रकार निहित है, जिससे अधिकतम् प्रति व्यक्ति आय संभव हो, तथा आय एवं वार्षिक संवृद्धि दर को बनाए रखने हेतु क्षमता को सुनिश्चित किया जा सके।

शैक्षणिक विकास एवं आर्थिक प्रगति के मध्य द्विमार्गीय संबंध होता है जिसमें दोनों एक दूसरे के विकास में सहयोग एवं संवर्धन देते है। शिक्षा के अर्थशास्त्र से संबंधित तीव्र गति से बढ़ते हुए साहित्य में आर्थिक विकास की भूमिका के निर्वचन से प्रोत्साहित किया। इस तरह की विधियों का एक आर्कषण यह था कि अत्यंत सरलता के साथ जटिल प्रश्नों के सरल उत्तर ढूंढना संभव था। यह दृष्टिकोण हाल में ही सम्पन्न हुए विभिन्न अध्ययनों में देखने को मिलता है जिसमें सूक्ष्म स्तर पर उपार्जन क्षमता एवं वृहत शैक्षणिक स्तर पर शिक्षा एवं आर्थिक विकास के मध्य धनात्मक संबंध बनाने हेतु प्रमाण किए गए। वृहत स्तर पर आर्थिक विकास को सकल घरेलु उत्पाद द्वारा अनुप्रस्थ एवं काल मालिका विश्लेषण में प्रयोग में लाया गया।

शिक्षा एवं विकास के मध्य दीर्घकालीन संबंधों का अध्ययन सपन्न करने हेतु विभिन्न विद्वानों द्वारा स्थावरता का अध्ययन किया गया है। भारत मे संपन्न एक अध्ययन Self and Grabowski (2004) में भारत में आर्थिक विकास के शिक्षा के तीन स्तर प्राथमिक, माध्यमिक एवं तृतीयक – संबंधों का विश्लेषण किया गया। उपलब्ध साहित्य मानवीय पूंजी का आर्थिक विकास पर सार्थक प्रभाव बताता है। इस अध्ययन में भी भारत के संदर्भ में शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर विकास का प्रभाव देखा गया है, उन्होंने ग्रेगनर स्थावर विधि का उपयोग शिक्षा के प्रत्येक स्तर के भावी उपस्थिति का मापन इसके पश्चात मूल्यों द्वारा किया। उन्होंने पाया कि भारत में आर्थिक विकास के लिए प्राथमिक शिक्षा आधारभूत कारक ही शेष शैक्षणिक स्तरों के प्रभाव मापन में उपयोगी है। शैक्षणिक उत्पादन फलन ने शिक्षा के अर्थशास्त्र पर शोध हेतु एक प्रमुख आधार रखा। विकासशील देशों में आर्थिक उन्नति तथा व्यक्तिगत जीवन स्तर उन्नयन के बारे में कौशल ज्ञान एवं क्षमताओं में विस्तार को मुख्य अवयव स्वीकार करने हेतु एक राय रही है।

प्रस्तावना

शोध समस्या के विकास में उपलब्ध शोध साहित्य जिसमें शोध प्रबन्ध शोध पत्रिकाएँ, समाचार पत्र, वार्षिक प्रतिवेदन, सन्दर्भ ग्रन्थ अभिलेख, इत्यादि सम्मिलित होते हैं।

इनका उपयोग कर महत्वपूर्ण अवधारणात्मक विकास करने में सहायता प्राप्त होती है। शोध की चयनित समस्या में विभिन्न आयामों को समाहित कर उपलब्ध पूर्व साहित्य का अनुशीलन किया गया है।

Galper and Dunn (1969) द्वारा समीकरणों में पश्चात अंतराल का समावेश कर आंकलकों में सुधार किया गया। उन्होंने स्वतन्त्र चर के रूप में उच्च शाला नामांकन, पारिवारिक आय तथा सेवाओं के आकार को शामिल किया। दूसरी ओर Miller (1971) ने समान दृष्टिकोण का उपयोग कर निम्न एवं उच्च उपलब्धि के बीच सार्थक अंतर प्राप्त किया। Morgenstern (1973) ने अमेरिका के लिए गैर प्रतिवर्ती एकल समीकरण उपार्जन फलन तथा वितरण की व्याख्या हेतु प्रतिवर्तित प्रादर्श आंकलित किया। Self and Grabowski (2004) ने 1967-1996 की अवधि के लिए भारत में आय वृद्धि पर शिक्षा के प्रभाव का परीक्षण किया। शिक्षा को तीन श्रेणियों प्राथमिक द्वितीयक एवं तृतीयक श्रेणी में विभाजित किया। शिक्षा के विकास पर प्रभाव का आकलन करने हेतु कालश्रेणी तकनीक का प्रयोग किया गया।

Blaug (1985) ने शिक्षा के अर्थशास्त्र के नवीन विधाओं पर एक विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया। शिक्षा के सामाजीकरण फलन के प्रति बढ़ती जागरुकता जांच उपकल्पना हैं जो कि अपूर्ण रोजगार संविदाओं तथा श्रम विभाजन को जन्म देती है। 1976 में Bowles and Gintis द्वारा पूंजीवादी अमेरिका में शालेयता से संबंधित पुस्तक का प्रकाशन हुआ। Behrman and King (1991) ने बताया कि शैक्षणिक नीतियॉ एवं घरेलू व्यवहार की अंत:क्रिया शैक्षणिक निष्पादन को निर्धारित करती है। Krueger and Lindahl, (2001) में बताया कि व्यष्ठि एवं समष्ठि साहित्य विकास में शिक्षा की भूमिका पर बल देते है। Machlup, (1970) ने यह पाया कि शिक्षा एवं आर्थिक विकास पर साहित्य लगभग 200 वर्ष पुराना है। परन्तु पिछले 10 वर्षों में इसमें लगभग बाढ़-सी आ गई है। वर्तमान वर्षों में शिक्षा एवं आर्थिक विकास के मध्य प्रतीपगमन विश्लेषण अध्ययन किए गए है। Lucas, (1988); Benhabib and Spiegel (1994) ने विकास लेखांकन को आन्तर्जन्य विकास प्रतिपगमन में विस्तृत किया, उनका विश्लेषण काइस्मिाको के शालेयता के औसत वर्षों पर आधारित था।

Barrow, (1997) ने सकल घरेलु उत्पाद निर्धारक के रूप में पुरुषों की माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा पर बल दिया और उन्होंने विश्लेषण में बताया महिला माध्यमिक विकास से ऋणात्मक रूप से संबंधित होती है। Harbison and Myers (1964) ने

शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित करते हुए इसे आर्थिक विकास का बीज एवं फूल बताया है, उन्होंने बताया कि धनात्मक आय माप से शिक्षा के प्रभावों को अलग करना कठिन है। Barrow (2001) ने 1965-95 के दौरान विश्व के लगभग 100 देशों में शिक्षा के विकास प्रभावों का अध्ययन किया, उन्होंने पाया कि विकास माध्यमिक एवं उच्च स्तर पर प्रौढ़ लोगों के शाला उपलब्धता के अवसर के प्रारंभिक स्तर से संबंधित होता है, शैक्षणिक पृष्ठभूमि से आये श्रमिक नवीन तकनीक हेतु पूरक होते हैं एवं उनकी तकनीकी विखंडन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। 1990 के मध्य में 4 महत्वपूर्ण अध्ययनों में समंकों का उपयोग कर शैक्षणिक उत्पादन फलन को अनुमानित किया गया, इनमें Harbison and Hanushek (1992), का ब्राजील से संबंधित अध्ययन Glewwe and Jacoby (1992) का घाना से संबंधित अध्ययन तथा लैसो का 1995 में जैमेका से संबंधित अध्ययन संपन्न किया गया, तथा Kingdon (1996) का भारत से संबंधित अध्ययन महत्वपूर्ण है।

सम्पूर्ण विश्व में नवीन विचारों के अनुसंधान द्वारा प्रेरित दीर्घकालीन विकास से संबंधित प्रादर्श उपलब्ध है। इस संदर्भ में पूर्ववर्ती शोधों पर आधारित प्रादर्श निर्माण के रचना Romer, (1990), Grossman and Helpman, (1969); Aghion and Howitt, (1992); Phelps, (1966); Shell, (1966); Nordhaus, (1969) ,oa Simon, (1986) महत्वपूर्ण हैं। Mcdougall, (2000) ने उत्तर प्रदेश में साक्षरता में महत्वपूर्ण क्षेत्रीय वितरण तथा लिंग अंतराल प्रस्तुत किया। उन्होंने उन क्षेत्रों में जहां पर लिंग अंतराल में कमी तथा महिला साक्षरता वृद्धि हो रही है। धनात्मक सहसंबंध पाया। उन्होंने महिला साक्षरता को शैक्षणिक सुधार हेतु महत्वपूर्ण साधन माना।

Muthaiyan, (1996) ने शिक्षा, उत्पादकता एवं उपार्जन का अध्ययन किया, उन्होंने पाया कि सामान्यत: शिक्षा, प्रत्यक्ष एवं सार्थक रूप से निचले स्तर पर उत्पादकता शिक्षा उपार्जन हेतु संबंधित नहीं एवं आयु वृद्धि के साथ आय वृद्धि गिरती दर पर होती है। Datta, (1985) ने शिक्षा एवं उपार्जन वितरण के संदर्भ में बताया कि श्रम बाजार उपार्जन, व्यवहार के संदर्भ में, शिक्षा एक अत्यंत ही सार्थक निर्धारण चर है, किन्तु वर्तमान परिपेक्ष्य में यह असमानता को पीढ़ी दर पीढी स्थानान्तरित करता चलता है।

शिक्षा आर्थिक विकास अंतरसंबंधों के अलावा शिक्षा कृषि उत्पादक शिक्षा कृषि उर्वरता तथा जनांकिकीय परिवर्तनों से संबंधित कार्य महत्वपूर्ण है। शिक्षा के द्वारा कृषि

एवं उद्योगों के क्षेत्र में श्रम उत्पादकता विस्तार में सहायता मिलती है, (Choudhary, 1968)। विकास अध्ययनों एवं लोकनीति में शिक्षा के अर्थशास्त्र में महत्वपूर्ण योगदान में बल मिला।

काल-मालिका विश्लेषण

अनुसंधान के प्रत्येक क्षेत्र में सामान्यत: समय आधारित समंकों का उपयोग किया जाता है, काल मालिका विश्लेषण वास्तव में विभिन्न विधियों का एक ऐसा समूह है, जो समंकों की इस प्रकार विश्लेषण की प्रक्रिया के लिए उपयोग में लाया जाता है। इस प्रकार के विश्लेषण की कुछ मान्यताओं में स्थावरता, इकाई मूल परीक्षण, त्रुटि संसोधन तन्त्र का उपयोग विश्लेषण को महत्वपूर्ण बनाता है। विश्लेषण में यह पाया गया है कि निर्धारण गुणांक उच्च होते हुए भी स्वतन्त्र एवं निर्भर चर के मध्य अर्थपूर्ण संबंध नहीं होता, कई बार विभिन्न चरों के मध्य संबंधों की प्रत्याशा न होते हुए भी उन्हें मध्य सार्थक संबंध पाया जाता है। इस प्रकार की समस्या (Spurious or Nonsence) सहसंबंध की उपस्थिति प्रदर्शित करता है, अत: यह आवश्यक हो जाता है कि इस प्रकार के संबंधों का विश्लेषण किया जाय।

हालांकि काल-मालिका विश्लेषण से संबंधित विषय वस्तु अत्यन्त व्यापक है, परन्तु अध्ययन के उद्देश्य एवं क्षेत्र के दृष्टिकोण से प्रस्तुत अध्ययन में विभिन्न चरों के मध य स्थावरता जिसके अतंर्गत इकाई मूल परीक्षण अध्ययन तथा सहसमाकलन, त्रुटि संसोध ान तन्त्र का उपयोग किया गया है, जिनका क्रमश: विवेचन इस अध्ययन के विभिन्न उपखण्डों में किया गया है।

(i) स्थावरता : स्थावरता प्रक्रिया के व्यवहार में विश्लेषण करने हेतु विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता हैं, जिनमें रेखा चित्रीय विश्लेषण, कोरोलो ग्राम परीक्षण तथा इकाई मूल परीक्षण महत्वपूर्ण हैं। इकाई मूल क्षण को दूसरे शब्दों में डिकीफूलर परीक्षण के रूप में भी जाना जाता है।

इकाई मूल परीक्षण हेतु निम्न समीकरण का उपयोग किया जाता है:-

$$Y_t = \rho Y_{t-1} + u_t \quad -1 \leq \rho \leq 1 \qquad \text{...(1)}$$

जहाँ पर U_t - white noise error term. यदि ρ = एक हो तो (1) Random walk model बन जाता है। जिसे हम गैर स्थावर प्रक्रिया के रूप में जानते हैं, अत: सामान्य रूप

से हम Y_t को उसके पश्चता मूल्य Y_{t-1} पर प्रतिगमनित कर को आंकलित किया जा सकता हैं, जो कि सांख्यिकीय रूप से एक के बराबर होगा। यही स्थावरता के इकाई मूल परीक्षण का सामान्य विचार है।

विभिन्न सैद्वान्तिक कारणों के चलते हमें (1) के दोनो पक्षों में Y_{t-1} को घटाते हैं। अत:

$$Y_t - Y_{t-1} = \rho Y_{t-1} - Y_{t-1} + u_t \quad \text{...(2)}$$
$$Y_t - (\rho - 1) = Y_{t-1} + u_t$$

जिसे वैकल्पिक रूप से इस प्रकार लिखा जा सकता है–

$$\Delta Y_t = \delta Y_{t-1} + u_t \quad \text{...(3)}$$

जहाँ पर $\delta = (\rho - 1)$ तथा Δ सामान्यत: प्रथम अंतरक्रिया हैं।

व्यवहारिक रूप में (1) के आंकलन के स्थान पर हम (3) को आंकलित करते हैं, तथा शून्य उपकल्पना $\delta = 0$ का परीक्षण करते हैं। यदि $\delta = 0$ हो तो $\rho = 1$ होगा, अर्थात हमें इकाई मूल प्राप्त होगा जिसका अर्थ उपयोग में लायी गई काल मालिका गैर स्थावर है। सामान्य रूप से हम इसका परीक्षण करने के लिए 't' वितरण का उपयोग नहीं करते हैं। शून्य उपकल्पना परीक्षण के अन्तर्गत अनपेक्षित रूप से $\delta = 0$ (अर्थात $\rho = 0$, आंकलित किये गये Y_{t-1} के गुणांक 't' वितरण का अनुपालन नहीं करते हैं। इस स्थिति में डिकी एवं फूलर ने वैकल्पिक परीक्षण प्रस्तुत किया और उन्होंने बताया कि Y_{t-1} गुणांकों का आंकलित 't' मूल्य t (tau-statistic) का अनुपालन करते हैं।

डिकी फूलर परीक्षण की वास्तविक प्रक्रिया में, निन्न समीकरण का उपयोग किया जाता है।

$$\Delta Y_t = \beta_1 - \delta Y_t \quad \text{...(4)}$$

उपरोक्त स्थिति में शून्य उपकल्पना यह है कि δ का मान शून्य है, अर्थात् यहां पर इकाई मूल उपस्थित है तथा काल मालिका गैर स्थावर हैं, इसकी वैकल्पिक उपकल्पना यह है कि δ का मान शून्य से कम हैं। अर्थात् काल मालिका स्थावर है, यदि शून्य उपकल्पना अस्वीकार की जाती है, इसका अर्थ यह हुआ कि काल मालिका स्थावर है, तथा समीकरण (2) के अनुसार माध्य मूल्य शून्य है, एवं गैर स्थावर दशा में इसका मूल्य

शून्य से अलग होगा। प्रस्तावित अध्ययन में प्रति व्यक्ति आय (PCI), मानवीय विकास संकेतक (HDI), प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU), पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), सकल साक्षरता दर (LITT), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिलाओं में सकल नामांकन अनुपात (GERPF), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिलाओं में सकल नामांकन अनुपात (GERSF), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST), की काल मालिकाओं में विभिन्न राज्यों हेतु स्थावरता का परीक्षण किया गया।

इकाई मूल परीक्षण के निष्कर्ष से यह ज्ञात होता है, कि उड़ीसा राज्य में साक्षरता दर की तीनों श्रेणियां स्थावर पायी गईं, इसी प्रकार बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, आन्ध्र प्रदेश, असम, महाराष्ट्र, कनार्टक, तमिलनाडू, केरल, पंजाब, पश्चिम बंगाल में साक्षरता दर की तीनों श्रेणियों में स्थावरता पायी गई।

हिमाचल प्रदेश में महिला साक्षरता दर एवं कुल साक्षरता दर तथा हरियाणा में महिला साक्षरता दर एवं पुरुष साक्षरता दर में स्थावरता की उपस्थिति में पायी गई। गुजरात राज्य में पुरुष साक्षरता में स्थावरता की स्थिति पायी गई। शेष अन्य सभी परिस्थितियों में साक्षरता के स्तरों में स्थावरता की अनुपस्थिति की पुष्टि होती है। साक्षरता में लिंग अंतराल, प्राथमिक स्तर पर पुरुष, महिला एवं कुल श्रेणी में सकल नामांकन अनुपात, माध्यमिक स्तर पर पुरुष, महिला एवं कुल सकल नामांकन अनुपात में साक्षरता परीक्षण के निष्कर्ष अग्राह्य रहे, प्रति व्यक्ति आय के संदर्भ में भी विभिन्न राज्यों में काल श्रेणी में स्थावरता का अभाव स्पष्ट रूप से दिखाई दिया।

(ii) सहसमाकलन : प्रावैगिक अर्थमिती के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धि सहसमाकलन की अवधारणा है, जिसका प्रस्तुतिकरण साहित्य में सर्वप्रथम Granger (1981) ने किया तथा इसका और अधिक विस्तृत स्वरूप Gragnger, Weiss (1983) एवं Engle तथा Granger (1988) द्वारा किया गया, सहसमाकलन की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण वैज्ञानिक विचार है, यदि दो विभिन्न परस्पर संबंधित काल मालिकाओं में धनात्मक प्रवृत्ति दिखाई देती है, तो दो प्रकार की संभावनाएँ उपस्थित होती हैं, प्रथम दोनों में वृद्धिगत् होनें के साथ-साथ समय सापेक्ष एक दूसरे से दूरी बढ़ाने की प्रवृत्ति दिखाई देती

हैं तथा दूसरी परिस्थिति में वृद्धिगत् होते हुए भी एक साथ आगे की ओर बढ़ती है, दूसरी संभावना को सहसमांकलन के रूप में जाना जाता है। अध्ययन में उपयोग में लाये गये प्रतीपगमन विश्लेषण गैर स्थावरता की अवस्था में अर्थहीन भी सिद्ध हो सकते हैं, इकाई मूल परीक्षण मे स्थावरता का परीक्षण करने के पश्चात् प्रथम अंतरसंबंध होना संभव हैं। विश्लेषण में जिन प्रतीपगमनों समीकरण का उपयोग किया गया है, वे निम्नानुसार हैं–

$$\ln (PCI)_t = \beta_o + \beta_1 \ln (LITM)_t + \beta_2 \ln (LITF)_t + \beta_3 \ln (LITT)_t + \beta_4 \ln (GGL)_t + \beta_5 \ln (GERPM)_t + \beta_6 \ln (GERPF)_t + \beta_7 \ln (GERPT)_t + \beta_8 \ln (GERSM)_t + \beta_9 \ln (GERSF)_t + \beta_{10} \ln (GERST)_t + U_t \quad ...(5)$$

$$\ln (HDI)_t = \beta o + \beta_1 \ln (LITM)_t + \beta_2 \ln (LITF)_t + \beta_3 \ln (LITT)_t + \beta_4 \ln (GGL)_t + \beta_5 \ln (GERPM)_t + \beta_6 \ln (GERPF)_t + \beta_7 \ln (GERPT)_t + \beta_8 \ln (GERSM)_t + \beta_9 \ln (GERSE)_t + \beta_{10} \ln (GERST)_t + \mathbf{U}_t \quad \ldots(6)$$

$$\ln (PCEXPEDU)_t = \beta_o + \beta_1 \ln (LITM)_t + \beta_2 \ln (LITF)_t (LITT)_t + \beta_3 \ln (LITT)_t + \beta_3 \ln (GGL)_t + \beta_5 \ln (GERPM)_t + \beta_6 \ln (GERPF)_t + \beta_7 \ln (GERPT)_t + \beta_8 \ln (GERSM)_t + \beta_9 \ln (GERSF)_t + \beta_{10} \ln (GERST)_t + \mathbf{U}_t \quad \ldots(7)$$

इसे निम्नानुसार लिखने पर –

$$U_t = \ln (PCI)_t - \beta_0 \ln - \beta_1 \ln (LITM)_t - \beta_2 \ln (LITF)_t - \beta_3 \ln (LITT)_t - \beta_4 \ln (GGL)_t \beta_5 \ln (GERPM)_t - \beta_6 \ln (GERPF)_t - \beta_7 \ln (GERPT)_t - \beta_8 \ln (GERSM)_t - \beta_9 \ln (GERSF)_t - \beta_{10} \ln (GERST)_t \quad ...(8)$$

$$U_t = \ln (HDI)_t - \beta_0 \ln - \beta_1 \ln (LITM)_t - \beta_2 \ln (LITF)_t - \beta_3 \ln (LITT)_t - \beta_4 \ln (GGL)_t - \beta_5 \ln (GERPM)_t - \beta_6 \ln (GERPF)_t - \beta_7 \ln (GERPT)_t - \beta_8 \ln (GERSM)_t - \beta_9 \ln (GERSF)_t - \beta_{10} \ln (GERST)_t \quad ...(9)$$

$$U_t = \ln (PCE \text{ X } PEDU)_t - \beta_0 \ln - \beta_1 \ln (LITM)_t - \beta_2 \ln (LITF)_t - \beta_3 \ln (LITT)_t - \beta_4 \ln (GGL)_t - \beta_5 \ln (GERPM)_t - \beta_6 \ln (GERPF)_t - \beta_7 \ln (GERPT)_t - \beta_8 \ln (GERSM)_t - \beta_9 \ln (GERSF)_t - \beta_{10} \ln (GERST)_t \quad ...(10)$$

सहसमांकलन का परीक्षण करने हेतु साहित्य में विभिन्न विधियां उपलब्ध हैं, प्रस्तुत अध्ययन में इस हेतु Engle-Granger परीक्षण उपयोग किया गया है, इस हेतु सर्वप्रथम समीकरण (5) से (7) का आंकलन कर अवशिष्ट प्राप्त किये जाते हैं, तथा उसके उपरांत परीक्षण का उपयोग किया जाता है, प्राप्त किये गये अवशिष्ट का उपयोग

निम्नानुसार किया जाता है–

समीकरण (5) द्वारा प्राप्त अवशिष्ट के निष्कर्ष विभिन्न राज्य श्रेणियों के लिए निम्नानुसार हैं –

श्रेणी क्रमांक 01

(PCI) हेतु .... **(11)**

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.44098^{*}\, u_{t-1}$$

(4.1014); $R^2 = 0.1937$

(HDI) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.7267^{*}\, u_{t-1}$$

(8.4371); $R^2 = 0.5041$

(PCEXPEDU) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.2939^{@}\, u_{t-1}$$

(2.2582); $R^2 = 0.0679$

श्रेणी क्रमांक – 02

(PCI) हेतु ... **(12)**

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.26013^{@}\, u_{t-1}$$

(1.7797); R^2 =k 0.0657

(HDI) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.1329^{@}\, u_{t-1}$$

(0.9011); $R^2 = 0.01772$

(PCEXPEDU) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.2254^{@}\, u_{t-1}$$

(1.5488); $R^2 = 0.0506$

श्रेणी क्रमांक – 03

(PCI) हेतु ...**(13)**

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.8544^{@}\, u_{t-1}$$

(8.6327); $R^2 = 0.7720$

(HDI) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.0714^{@}\ u_{t-1}$$

(–0.33573); R^2 = 0.00509

(PCEXPEDU) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.2066^{@}\ u_{t-1}$$

(-1.12267); R^2 = 0.0541

श्रेणी क्रमांक – 04

(PCI) हेतु …(14)

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.8186^{@}\ u_{t-1}$$

(14.3904); R^2 = 0.6370

(HDI) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.8313^{@}\ u_{t-1}$$

(19.1632); R^2 = 0.7568

(PCEXPEDU) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.0433^{@}\ u_{t-1}$$

(19.1632); R^2 = 0.7568

श्रेणी क्रमांक – 05

(PCI) हेतु …(15)

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.3652^{@}\ u_{t-1}$$

(2.0765); R^2 = 0.1638

(HDI) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.3268^{@}\ u_{t-1}$$

(1.6666); R^2 = 0.1121

(PCEXPEDU) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.5416^{@}\ u_{t-1}$$

(–3.0215); R^2 = 0.2932

श्रेणी क्रमांक – 06

(PCI) हेतु …(16)

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.0277^{@}\ u_{t-1}$$

(–0.1286); $R^2 = 0.00075$

(HDI) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.10038^{@} u_{t-1}$$

(–0.4744); $R^2 = 0.0101$

(PCEXPEDU) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.3909^{@} u_{t-1}$$

(–1.9941); $R^2 = 0.1530$

श्रेणी क्रमांक – 07

(PCI) हेतु ...(17)

$$\Delta\widehat{u}_t = 0.2066^{@} u_{t-1}$$

(2.471); $R^2 = 0.1172$

(HDI) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.49809^{@} u_{t-1}$$

(3.8099); $R^2 = 0.2396$

(PCEXPEDU) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.1792^{@} u_{t-1}$$

(1.2290); $R^2 = 0.0317$

श्रेणी क्रमांक – 08

(PCI) हेतु ...(18)

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.0169^{@} u_{t-1}$$

(0.0797); $R^2 = 0.00028$

(HDI) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.0.0074^{@} u_{t-1}$$

(0.0347); $R^2 = .000055$

(PCEXPEDU) हेतु

$$\Delta\widehat{u}_t = -0.5897^{@} u_{t-1}$$

(–3.41199); $R^2 = 0.3460$

उपरोक्त विवेचन से यह ज्ञात होता है, कि प्रथम श्रेणी के राज्य समूहों में प्रति व्यक्ति आय एवं मानवीय विकास के संदर्भ मे स्थावरता की उपस्थिति पायी गई। तृतीय श्रेणी

के राज्यों में प्रति व्यक्ति आय में स्थावरता की उपस्थिति पायी गई। इसी प्रकार चतुर्थ श्रेणी के राज्यों में प्रति व्यक्ति आय तथा मानवीय विकास में स्थावरता की उपस्थिति पायी गई। शेष सभी श्रेणी के राज्यों में स्थावरता की सार्थक उपस्थिति का अभाव पाया गया।

इससे यह सिद्ध होता है कि प्रति व्यक्ति आय वृद्धि कालमालिका में स्थावरता उपस्थिति सार्थक है। वहीं दूसरी ओर मानवीय विकास के कुछ एक श्रेणियों में स्थावरता की उपस्थिति एवं शेष अन्य श्रेणियों में अनुपस्थिति यह इंगित करती है कि मानवीय विकास को अधिक गति प्रदान करने की आवश्यकता है। प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय में स्थावरता की अनुपस्थिति इस तथ्य का द्योतक है कि प्रति व्यक्ति व्यय में वृद्धि आशानुरूप एवं आवश्यकता के अनुरूप नहीं हो रही है, अत: इस दिशा में शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय को बढ़ाने की तीव्र आवश्यकता है।

सह समाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र : उपरोक्त विश्लेषण में यह प्रदर्शित किया गया है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI), मानवीय विकास संकेतक (HDI), प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU), पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), सकल साक्षरता दर (LITM), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) परस्पर सह समाकलित हैं। अर्थात दीर्घ काल में अथवा संतुलन अवस्था में इनके मध्य संबंध पाया जा रहा है, सामान्यत: अल्पकाल में इनके मध्य असंतुलन हो सकता है।

अत: समीकरण क्रम (11) से (18) की त्रुटि चर को संतुलन त्रुटि के रूप में देखा जा सकता है, तथा इस त्रुटि पद को प्रति व्यक्ति आय (PCI), मानवीय विकास संकेतक (HDI), प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) के अल्पकालिन व्यवहार को इनके दीर्धकालीन मूल्यों से संबंधित किया जा सकता है। त्रुटि संशोधन को सर्वप्रथम Sargen द्वारा उपयोग में लाया गया तथा Engle एवं Granger ने असंतुलन में संशोधन हेतु इसको लोकप्रिय बनाया। एक महत्वपूर्ण प्रमेय Granger प्रतिनिधित्व प्रमेय कहा जाता हैं, ने बताया यदि दो चर Y को X एक दूसरे से सहसमांकलित हो तो इनके मध्य के

संबंधों को त्रुटि संसोधन तन्त्र द्वारा व्यक्त किया जाता है। अध्याय पाँच में उल्लेखित वर्णित प्रतिपगमन प्रादर्शों को निम्नानुसार पुनः व्यक्त करने पर...

$$\Delta \ln (PCI)_t = \beta_o + \beta_1 \Delta \ln (LITM)_t + \beta_2 \Delta \ln (LITF)_t + \beta_3 \Delta \ln (LITT)_t + \beta_4 \Delta \ln (GGL)_t + \beta_5 \Delta \ln (GERPM)_t + \beta_6 \Delta \ln (GERPF)_t + \beta_7 \Delta \ln (GERPT)_t + \beta_8 \Delta \ln (GERSM)_t + \beta_9 \Delta \ln (GERSF)_t \beta_{10} \Delta \ln (GERST)_t + \beta_{11} \Delta u_{t-1} + e_t \quad \ldots(19)$$

$$\Delta \ln (HDI)_t = \beta_o + \beta_1 \Delta \ln (LITM)_t + \beta_2 \Delta \ln (LITF)_t + \beta_3 \Delta \ln (LITT)_t + \beta_4 \Delta \ln (GGL)_t + \beta_5 \Delta \ln (GERPM)_t + \beta_6 \Delta \ln (GERPF)_t + \beta_7 \Delta \ln (GERPT)_t + \beta_8 \Delta \ln (GERSM)_t + \beta_9 \Delta \ln (GERSF)_t \beta_{10} \Delta \ln (GERST)_t + \beta_{11} \Delta u_{t-1} + e_t \quad \ldots(20)$$

$$\Delta \ln (PCEXPEDU)_t = \beta_o + \beta_1 \Delta \ln (LITM)_t + \beta_2 \Delta \ln (LITF)_t + \beta_3 \Delta \ln (LITT)_t + \beta_4 \Delta \ln (GGL)_t + \beta_5 \Delta \ln (GERPM)_t + \beta_6 \Delta \ln (GERPF)_t + \beta_7 \Delta \ln (GERPT)_t + \beta_8 \Delta \ln (GERSM)_t + \beta_9 \Delta \ln (GERSF)_t \beta_{10} \Delta \ln (GERST)_t + \beta_{11} \Delta u_{t-1} + e_t \quad \ldots(21)$$

जहां पर कि Δ सामान्य रूप से प्रथम अंतर तथा e_t न्यादर्श त्रुटि चर हैं, एवं u_{t-1} विभिन्न समीकरणों के लिए निम्नानुसार हैं:

$$u_{t-1} = \ln (PCI)_{t-1} - \beta_o - \beta_1 \Delta \ln (LITM)_{t-1} - \beta_2 \ln (LITF)_t - \beta_3 \ln (LITT)_{t-1} - \beta_4 \ln (GGL)_{t-1} - \beta_5 \ln (GERPM)_{t-1} - \beta_6 \ln (GERPF)_{t-1} - \beta_7 \ln (GERPT)_{t-1} - \beta_8 \ln (GERSM)_{t-1} - \beta_9 \ln (GERSF)_{t-1} - \beta_{10} (GERST)_{t-1}$$

एवं

$$u_{t-1} = \ln (HDIT)_{t-1} - 1 - \beta_o - \beta_1 \ln (LITM)_{t-1} - \beta_2 \ln (LITF)_t - \beta_3 \ln (LITT)_{t-1} - \beta_4 \ln (GGL)_{t-1} - \beta_5 \ln (GERPM)_{t-1} - \beta_6 \ln (GERPF)_{t-1} - \beta_7 \ln (GERPT)_{t-1} - \beta_8 \ln (GERSM)_{t-1} - \beta_9 \ln (GERSF)_{t-1} - \beta_{10} \ln (GERST)_{t-1}$$

एवं

$$u_{t-1} = \ln (PCEXPEDU)_{t-1} - \beta_o + \beta_1 \ln (LITM)_{t-1} - \beta_2 \ln (LITF)_t - \beta_3 \ln (LITT)_{t-1} - \beta_4 \ln (GGL)_{t-1} - \beta_5 \ln (GERPM)_{t-1} - \beta_6 \ln (GERPF)_{t-1} -$$

$\beta_7 \ln (GERPT)_{t-1} - \beta_8 \ln (GERSM)_{t-1} - \beta_9 \ln (GERSF)_{t-1} - \beta_{10} \ln (GERST)_{t-1}$

यह सहसमांकलित प्रतिपगमनित समीकरणों की त्रुटि चर का एक अवधि पश्चता मूल्य है–

त्रुटि संशोधन चर समीकरण से (19) से (21) यह प्रदर्शित करते हैं कि $\Delta \ln$ (PCI), $\Delta \ln$ (HDI), $\Delta \ln$ (PCEXEDU), $\Delta \ln$ (LITM), $\Delta \ln$ (LITF), $\Delta \ln$ (LITF), $\Delta \ln$ (LITT), $\Delta \ln$ (GGL), $\Delta \ln$ (GERPM), $\Delta \ln$ (GERPF), $\Delta \ln$ (GERST), $\Delta \ln$ (GERSM), $\Delta \ln$ (GERSF), $\Delta \ln$ (GERST), तथा संतुलन त्रुटि चर पर निर्भर करता है, यदि $\Delta \ln$ (PCI), $\Delta \ln$ (HDI), $\Delta \ln$ (PCEXPEDU) शून्य हो तथा u_{t-1} धनात्मक हो यह प्रादर्श संतुलन अवस्था से बाहर होंगे। अत: दीर्घकालीन स्थावरता का अध्ययन त्रुटि संशोधन तन्त्र द्वारा करने पर विभिन्न श्रेणियों के राज्यों में निर्भर चर के अनुसार निम्न लिखित परिणाम प्राप्त हुए हैं:

प्रथम श्रेणी के राज्यों में : सहसमांकलन एवं त्रुटि संसोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक है, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में है। विभिन्न चरों के गुणांक हालांकि सार्थक नहीं पाये गये हैं। परन्तु पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर पुरुषों में सकल नामांकन अनुपात (GERPM), माध्यमिक स्तर पर पुरुषों में सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) धनात्मक रूप से संबंधित है। वहीं सकल साक्षरता दर (LITT), प्राथमिक स्तर पर महिलाओं में सकल नामांकन अनुपात (GERPF), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल अनुपात (GERPT) एवं माध्यमिक स्तर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) ऋणात्मक हैं।

सह समाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि मानवीय विकास संकेतक (HDI) पर त्रुटि चर असार्थक है, अर्थात यह प्रादर्श असंतुलन की स्थिति में हैं।

सह समांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर ज्ञात होता है कि मानवीय विकास संकेतक ;भ्क्प्द्ध कर त्रुटि चर असार्थक है, अर्थात यह प्रादर्श असंतुलन की स्थिति में हैं।

तालिका-1

प्रथम समूह : उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, एवं बिहार (सहसमांकलन एवं त्रुटि संसोधन तन्त्र)

No. of Observation 72			Degree of Freedom 60	
Dependent Variable		Δ ln $(PCI)_t$	Δ ln $(HDI)_t$	Δ ln $(PCEXPEDU)_t$
Constant	Coefficient	-1.3@	-0.53@	-5.13@
	t-ratio	4.33	50.34	11.27
Ln LITM	Coefficient	0.38@	0.65@	-4.98@
	t-ratio	0.29	2.44	0.55
Ln LITF	Coefficient	0.25@	-0.07@	-0.07@
	t-ratio	0.28	-0.40	0.01
Ln LITT	Coefficient	-0.51@	-0.41@	5.29@
	t-ratio	-0.34	-1.38	0.51
Ln GGL	Coefficient	0.28@	-0.05@	2.16@
	t-ratio	0.87	0.79	0.95
Ln GERPM	Coefficient	0.18@	0.01@	1.65@
	t-ratio	0.55	0.20	0.70
Ln GERPF	Coefficient	-0.14@	-0.00@	-1.13@
	t-ratio	1.06	0.18	1.18
Ln GERPT	Coefficient	-0.13@	-0.05@	-0.56@
	t-ratio	0.55	1.19	0.33
Ln GERSM	Coefficient	0.33@	0.05@	0.33@
	t-ratio	0.68	0.57	0.10
Ln GERSF	Coefficient	0.11@	0.01@	0.99@
	t-ratio	0.35	0.19	0.42
Ln GERST	Coefficient	-0.39@	-0.03@	-1.77@
	t-ratio	-0.46	0.19	0.30
Δ u_{t-1}	Coefficient	-0.41*	-0.08@	-0.63*
	t-ratio	-4.20	1.45	5.11
R- Square		0.31	0.54	0.34

* SIGNIFICANT AT 5% LEVEL OF SIGNIFICANCE
@ INSIGNIFICANT

सह समांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिगमन के आधार पर ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात्

यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में है, किन्तु विभिन्न चरों के गुणांक भी सार्थक नहीं पाये गये, कुल साक्षरता दर (LITT), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर पुरुष नामांकन अनुपात (GERPM), माध्यमिक स्तर पर पुरुष नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला नांमाकन अनुपात (GERSF) धनात्मक रूप से संबंधित हैं। वहीं पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), प्राथमिक स्तर पर महिला नामांकन अनुपात (GERPF), प्राथमिक स्तर पर कुल नामांकन अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर कुल नामांकन अनुपात (GERST) ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

द्वितीय श्रेणी के राज्यों में : सहसमाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं। साथ ही विभिन्न चरों के गुणांक सार्थक नहीं पाये गये। किन्तु कुल साक्षरता की दर (LITT), साक्षरता लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर कुल नामांकन का अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर पुरुष नामांकन का अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला नामांकन का अनुपात (GERSF), धनात्मक रूप से संबंधित है। वहीं पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता की दर (LITF), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिला नामांकन अनुपात (GERPF), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) ऋणात्मक रूप से संबंधित है।

मानवीय विकास संकेतक (HDI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात् यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं। परन्तु विभिन्न चरों के गुणांक सार्थक नहीं पाये गये। कुल साक्षरता दर (LITT), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) धनात्मक रूप से संबंधित हैं, वह पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

सह समाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं। अर्थात् यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं। किन्तु शेष सभी गुणांक

तालिका-2

द्वितीय समूहः मध्य प्रदेश एवं राजस्थान (सहसमाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र)

No. of Observation 48			Degree of Freedom 36	
Dependent Variable		Δ ln $(PCI)_t$	Δ ln $(HDI)_t$	Δ ln $(PCEXPEDU)_t$
Constant	Coefficient	0.08@	0.12@	0.41@
	t-ratio	0.021	3.80	9.52
Ln LITM	Coefficient	-1.30@	-0.36@	-5.30@
	t-ratio	0.45	0.26	0.37
Ln LITF	Coefficient	-0.00@	-0.41@	1.85@
	t-ratio	0.00	0.81	0.34
Ln LITT	Coefficient	0.94@	0.78@	1.73@
	t-ratio	0.31	0.54	0.11
Ln GGL	Coefficient	0.15@	-0.04@	1.80@
	t-ratio	0.28	0.16	0.66
Ln GERPM	Coefficient	-0.02@	0.17@	-0.88@
	t-ratio	0.04	0.78	0.38
Ln GERPF	Coefficient	-0.30@	0.35@	-2.19@
	t-ratio	-0.35	0.80	0.49
Ln GERPT	Coefficient	0.15@	-0.55@	2.83@
	t-ratio	0.10	0.75	0.37
Ln GERSM	Coefficient	1.54@	0.01@	-0.68@
	t-ratio	1.17	0.01	0.10
Ln GERSF	Coefficient	0.66@	-0.04@	0.28@
	t-ratio	0.89	0.12	0.07
Ln GERST	Coefficient	-1.86@	0.06@	0.40@
	t-ratio	0.92	0.06	0.03
Δ ut-1	Coefficient	-0.56*	-0.70*	-0.75*
	t-ratio	3.39	3.50	4.72
R- Square		0.38	0.35	0.41

* SIGNIFICANT AT 5% LEVEL OF SIGNIFICANCE
@ INSIGNIFICANT

असार्थक पाये गये हैं। महिला साक्षरता दर (LITF), कुल साक्षरता दर (LITT), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT),

माध्यमिक स्तर पर महिला नामांकन अनुपात (GERSF), माध्यमिक स्तर पर कुल नामांकन अनुपात, (GERST), धनात्मक रूप से संबंधित हैं, पुरुष साक्षरता दर,

तालिका-3

तृतीय समूह : आन्ध्र प्रदेश (सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र)

No. of Observation 24			Degree of Freedom 12	
Dependent Variable		Δ ln $(PCI)_t$	Δ ln $(HDI)_t$	Δ ln $(PCEXPEDU)_t$
Constant	Coefficient	-132.2@	-19.54@	258.89@
	t-ratio	1504.33	1959.62	578.14
Ln LITM	Coefficient	-1.77@	7.87@	-25.87@
	t-ratio	0.03	1.15	0.08
Ln LITF	Coefficient	-113.63@	-8.93@	159.97@
	t-ratio	2.49	1.53	0.51
Ln LITT	Coefficient	150.97@	6.12@	-194.58@
	t-ratio	2.15	0.70	0.43
Ln GGL	Coefficient	-10.16*	-1.19*	-1.05@
	t-ratio	3.16	3.02	0.05
Ln GERPM	Coefficient	14.23@	0.31@	-4.43@
	t-ratio	1.12	0.18	0.06
Ln GERPF	Coefficient	10.79@	0.07@	21.75@
	t-ratio	0.96	0.05	0.29
Ln GERPT	Coefficient	-26.56@	-0.53@	-7.96@
	t-ratio	1.12	0.16	0.05
Ln GERSM	Coefficient	43.73@	8.57@	66.28@
	t-ratio	1.49	2.29	0.36
Ln GERSF	Coefficient	28.14@	5.43@	43.18@
	t-ratio	1.50	2.28	0.36
Ln GERST	Coefficient	-71.67@	-14.00@	-112.22@
	t-ratio	1.49	2.28	0.37
$\Delta\ u_{t-1}$	Coefficient	0.03@	-1.15*	-1.28*
	t-ratio	0.52	2.78	3.44
R- Square		0.74	0.74	0.54

* SIGNIFICANT AT 5% LEVEL OF SIGNIFICANCE
@ INSIGNIFICANT

(LITM), प्राथमिक स्तर पर पुरूष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF), माध्यमिक स्तर पर पुरुष संकल नामांकन अनुपात (GERSM), ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

तृतीय श्रेणी के राज्यों में :- सहसमांकलन एवं त्रुटि संसोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) पर त्रुटि चर असार्थक हैं, शेष सभी गुणांक भी असार्थक पाये गए हैं।

सह समाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि मानवीय विकास संकेतक (HDI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं। अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, साक्षरता में लिंग अंतराल गुणांक (GGL) को छोड़कर शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। कुल साक्षरता दर (LITT), पुरुष साक्षरता दर (LITM)] प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM) प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन दर (GERPF) माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM) धनात्मक रूप से संबंधित हैं। महिला साक्षरता दर (LITF) प्राथमिक स्तर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT) माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, एवं शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। महिला साक्षरता दर (LITF), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF) माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) धनात्मक रूप से संबंधित हैं, वहीं कुल साक्षरता दर (LITT), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामाकन अनुपात (GERPT) माध्यमिक स्तर पर कुल संकल नामाकन अनुपात (GERST) ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

चतुर्थ श्रेणी के राज्यों में सहसमाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) पर त्रुटि चर असार्थक हैं, अर्थात यह प्रादर्श असंतुलन की स्थिति में है।

सहसमाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता हैं कि मानवीय विकास संकेतक (HDI) पर त्रुटि चर

तालिका-4

चतुर्थ समूह : असम, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक एवं हिमाचल प्रदेश (सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र)

No. of Observation 120			Degree of Freedom 108	
Dependent Variable		Δ ln $(PCI)_t$	Δ ln $(HDI)_t$	Δ ln $(PCEXPEDU)_t$
Constant	Coefficient	0.05@	0.35@	3.03@
	t-ratio	0.01	441.25	5.14
Ln LITM	Coefficient	-1.28@	-0.18*	-3.80@
	t-ratio	1.98	1.84	0.57
Ln LITF	Coefficient	1.75*	0.21*	4.16@
	t-ratio	3.50	2.76	0.81
Ln LITT	Coefficient	-0.75*	-0.10*	-1.00@
	t-ratio	3.56	3.20	0.45
Ln GGL	Coefficient	0.67*	0.09@	1.10@
	t-ratio	3.67	3.20	0.58
Ln GERPM	Coefficient	0.06@	-0.00@	-1.85@
	t-ratio	0.18	0.10	0.52
Ln GERPF	Coefficient	0.10@	0.01@	-0.68@
	t-ratio	0.92	0.86	0.58
Ln GERPT	Coefficient	-0.32@	-0.04@	2.21@
	t-ratio	0.75	0.67	0.49
Ln GERSM	Coefficient	0.37@	0.00@	-2.61@
	t-ratio	1.17	0.06	0.79
Ln GERSF	Coefficient	0.26@	0.00@	-3.44@
	t-ratio	0.70	0.00	0.90
Ln GERST	Coefficient	-0.79@	-0.01@	5.88@
	t-ratio	1.15	0.13	0.82
Δu_{t-1}	Coefficient	-0.02@	-0.04*	-0.69*
	t-ratio	1.27	3.09	7.40
R- Square		0.35	0.48	0.34

* SIGNIFICANT AT 5% LEVEL OF SIGNIFICANCE
@ INSIGNIFICANT

ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में है। एवं शेष गुणांक में कुछ चर गुणांक सार्थक पाये गये एवं गुणांक असार्थक पाये गये, एवं कुछ असार्थक पाये गये। महिला साक्षरता की दर (LITT) साक्षरता लिंग अंतराल (GGL) सार्थक व धनात्मक पाये गये। कुल साक्षरता दर (LITT) ऋणात्मक व सार्थक पाये गये। वहीं प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF) माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM) माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) असार्थक व धनात्मक रूप से संबंधित हैं। पुरुष साक्षरता दर (LITM) प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERST) माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, किन्तु शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। महिला साक्षरता दर (LITF), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL) प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT) माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) धनात्मक रूप से संबंधित हैं। पुरुष साक्षरता दर (LITM), कुल साक्षरता दर (LITT) प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPF) माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSF) ऋणात्मक रूप से संबंधित है।

पंचम श्रेणी राज्यों में : सहसमाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श असंतुलन की स्थिति में हैं। किन्तु शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। पुरुष साक्षरता दर (LITM) कुल साक्षरता दर (LITT) प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT) माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात, माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) धनात्मक रूप से संबंधित हैं, वहीं महिला साक्षरता दर (LITF), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM) माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन (GERST), अनुपात ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि मानवीय विकास संकेतक (HDI) प्रति त्रुटि चर

तालिका-5

पंचम समूह : केरल (सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र)

No. of Observation 24			Degree of Freedom 12	
Dependent Variable		Δ ln $(PCI)_t$	Δ ln $(HDI)_t$	Δ ln $(PCEXPEDU)_t$
Constant	Coefficient	-210.8@	-32.47@	7085.48@
	t-ratio	0.05	48.13	2021.42
Ln LITM	Coefficient	5.76@	-1.18@	17.58@
	t-ratio	0.08	0.15	0.03
Ln LITF	Coefficient	-158.53@	-23.93@	4562.87@
	t-ratio	0.73	0.96	2.17
Ln LITT	Coefficient	199.98@	32.23@	-6122.42@
	t-ratio	0.68	0.96	2.16
Ln GGL	Coefficient	-1.92@	-0.15@	6.94@
	t-ratio	1.72	1.21	0.73
Ln GERPM	Coefficient	-70.91@	-7.50@	-33.61@
	t-ratio	0.39	0.36	0.02
Ln GERPF	Coefficient	-78.65@	-8.00@	38.20@
	t-ratio	0.45	0.40	0.02
Ln GERPT	Coefficient	149.38@	15.50@	3.69@
	t-ratio	0.42	0.38	0.00
Ln GERSM	Coefficient	293.72@	24.05@	482.08@
	t-ratio	1.27	0.93	0.25
Ln GERSF	Coefficient	291.30@	23.91@	463.40@
	t-ratio	1.30	0.95	0.24
Ln GERST	Coefficient	-585.67@	-48.00@	-950.61@
	t-ratio	1.28	0.94	0.25
Δ u_{t-1}	Coefficient	-0.79*	-0.92*	-1.76*
	t-ratio	3.83	3.27	5.57
R- Square		0.80	0.81	0.78

* SIGNIFICANT AT 5% LEVEL OF SIGNIFICANCE
@ INSIGNIFICANT

ऋणात्मक है, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, किन्तु शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये, कुल साक्षरता दर (LITT), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन

अनुपात (GERPT) माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERSM) धनात्मक से संबंधित हैं, पुरुष साक्षरता दर (LITM), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL) प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM) प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) ऋणात्मक रूप से संबंधित है।

सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है, कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) पर त्रुटि चर ऋणात्मक है, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, किन्तु शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। पुरूष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF) साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL) प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF) प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT) माध्यमिक स्तर पर सकल नामांकन अनुपात (GERST) माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) धनात्मक रूप से संबंधित हैं। वहीं महिला साक्षरता दर (LITE) कुल साक्षरता दर (LITT) प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPT) ऋणात्मक रूप से संबंधित।

षष्टम श्रेणी राज्यों में : सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) पर त्रुटि चर असार्थक हैं, अर्थात यह प्रादर्श असंतुलन की स्थिति में हैं।

सहसमाकलन एवं त्रुटि संसोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि मानवीय विकास संकेतक (HDI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं। एवं शेष सभी गुणांक असार्थक पाये गये। किन्तु महिला साक्षरता दर (LITF) कुल साक्षरता दर (LITT) प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM) माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM) माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) धनात्मक रूप से संबंधित हैं। पुरुष साक्षरता दर (LITM) साक्षरता लिंग अंतराल (GGL) प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF) माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM) माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST) ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

तालिका-6

षष्टम समूहः हरियाणा (सहसमाकलन एवं त्रुटि संसोधन तन्त्र)

No. of Observation 24			Degree of Freedom 12	
Dependent Variable		Δ ln $(PCI)_t$	Δ ln $(HDI)_t$	Δ ln $(PCEXPEDU)_t$
Constant	Coefficient	47.3@	0.83@	948.36@
	t-ratio	0.02	103.42	234.59
Ln LITM	Coefficient	3.22@	-0.23@	45.53@
	t-ratio	0.38	0.26	1.08
Ln LITF	Coefficient	16.58@	0.03@	327.45*
	t-ratio	0.94	0.01	3.05
Ln LITT	Coefficient	-29.88@	0.15@	-582.87*
	t-ratio	0.94	0.04	3.01
Ln GGL	Coefficient	-0.30@	-0.01@	-0.62@
	t-ratio	0.27	0.16	0.11
Ln GERPM	Coefficient	9.67@	0.07@	-1.73@
	t-ratio	0.88	0.06	0.03
Ln GERPF	Coefficient	6.50@	-0.04@	8.45@
	t-ratio	0.87	0.05	0.22
Ln GERPT	Coefficient	-15.97@	-0.02@	-13.75@
	t-ratio	0.87	0.01	0.14
Ln GERSM	Coefficient	-3.91@	0.52@	-41.32@
	t-ratio	0.79	0.98	1.51
Ln GERSF	Coefficient	1.75@	0.37@	-31.05@
	t-ratio	0.59	1.17	1.85
Ln GERST	Coefficient	5.25@	-1.02@	79.10@
	t-ratio	0.63	1.13	1.69
Δ u_{t-1}	Coefficient	-0.02@	-1.03*	-1.69*
	t-ratio	0.07	2.64	0.58
R- Square		0.38	0.79	0.70

* SIGNIFICANT AT 5% LEVEL OF SIGNIFICANCE
@ INSIGNIFICANT

सहसमाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता हैं, कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, महिला साक्षरता दर

(LITF), धनात्मक व सार्थक हैं, कुल साक्षरता दर (LITT) ऋणात्मक व सार्थक हैं, किन्तु शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। पुरुष साक्षरता दर (LITM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST), धनात्मक रूप से संबंधित हैं। वहीं साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), माध्यमिक स्तर पर कुल संकल नामांकन अनुपात (GERST), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM) ऋणात्मक रूप से संबंधित है।

सप्तम श्रेणी राज्यों में : सहसमाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) पर त्रुटि चर असार्थक हैं, अर्थात यह प्रादर्श असंतुलन की स्थिति में हैं। शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये हैं। कुल साक्षरता दर (LITT), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSF), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF), धनात्मक रूप से संबंधित हैं। पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST), ऋणात्मक रूप से संबंधित है।

सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि मानवीय विकास संकेतक (HDI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, एवं शेष सभी गुणांक असार्थक पाये गये। पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन दर (GERPF), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST), धनात्मक रूप से संबंधित हैं। वहीं कुल साक्षरता दर (LITT), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF), ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, एवं विभिन्न चरों के

तालिका-7

सप्तम समूह : पंजाब एवं पश्चिम बंगाल (सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र)

No. of Observation 48			Degree of Freedom 36	
Dependent Variable		Δ ln $(PCI)_t$	Δ ln $(HDI)_t$	Δ ln $(PCEXPEDU)_t$
Constant	Coefficient	0.2@	0.26@	5.70@
	t-ratio	0.06	332.15	11.19
Ln LITM	Coefficient	-5.12@	0.75@	53.00@
	t-ratio	0.63	0.43	0.57
Ln LITF	Coefficient	-1.42@	0.50@	33.34@
	t-ratio	0.30	0.48	0.61
Ln LITT	Coefficient	6.41@	-1.28@	-87.52@
	t-ratio	0.50	0.46	0.60
Ln GGL	Coefficient	0.41@	0.04@	-0.93@
	t-ratio	1.64	0.78	0.32
Ln GERPM	Coefficient	-1.68@	2.26@	-6.14@
	t-ratio	1.10	1.76	0.09
Ln GERPF	Coefficient	-5.82@	1.86@	-6.94@
	t-ratio	1.13	1.72	0.12
Ln GERPT	Coefficient	12.04@	-4.19@	13.59@
	t-ratio	1.08	1.78	0.11
Ln GERSM	Coefficient	4.63@	-0.52@	-30.73@
	t-ratio	0.89	0.46	0.52
Ln GERSF	Coefficient	2.35@	-0.34@	-20.36@
	t-ratio	0.68	0.45	0.51
Ln GERST	Coefficient	-6.55@	0.87@	50.82@
	t-ratio	0.77	0.46	0.52
Δ u_{t-1}	Coefficient	-0.38*	-0.38*	-0.75*
	t-ratio	3.57	3.55	4.24
R- Square		0.57	0.66	0.36

* SIGNIFICANT AT 5% LEVEL OF SIGNIFICANCE
@ INSIGNIFICANT

गुणांक असार्थक पाये गये। पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर कुल

सकल नामांकन अनुपात (GERST), धनात्मक रूप से संबंधित हैं, कुल साक्षरता दर (LITT), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF), ऋणात्मक रूप से संबंधित है।

अष्टम श्रेणी राज्यों में : सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में है एवं कुल साक्षरता दर (LITT), ऋणात्मक रूप से सार्थक पायी गई। शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERST), धनात्मक रूप से संबंधित हैं, वहीं महिला साक्षरता दर (LITF), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF), ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है, कि मानवीय विकास संकेतक (HDI) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, किन्तु कुल साक्षरता दर (LITT) ऋणात्मक व सार्थक हैं, एवं शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। पुरुष साक्षरता दर (LITM), महिला साक्षरता दर (LITF), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), धनात्मक रूप से संबंधित हैं, वहीं प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), प्राथमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERPF), माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERST), माध्यमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSF) ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र के उपयोग द्वारा प्रतिपगमन समीकरण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) पर त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, अर्थात यह प्रादर्श संतुलन की स्थिति में हैं, किन्तु माध्यमिक स्तर पर पुरूष

तालिका-8
अष्टम समूह : गुजरात (सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र)

No. of Observation 24			Degree of Freedom 12	
Dependent Variable		Δ ln $(PCI)_t$	Δ ln $(HDI)_t$	Δ ln $(PCEXPEDU)_t$
Constant	Coefficient	-115.4@	-12.05@	-585.71@
	t-ratio	119.34	100.14	334.26
Ln LITM	Coefficient	114.16@	17.69@	290.77@
	t-ratio	0.76	0.78	0.89
Ln LITF	Coefficient	63.79@	8.28@	-36.74@
	t-ratio	0.61	0.67	0.20
Ln LITT	Coefficient	-187.63*	-23.87*	-131.54@
	t-ratio	3.04	3.23	1.29
Ln GGL	Coefficient	9.64@	1.05@	18.05@
	t-ratio	1.47	1.37	1.63
Ln GERPM	Coefficient	-99.13@	-11.45@	-133.67@
	t-ratio	2.30	2.29	1.83
Ln GERPF	Coefficient	-89.74@	-10.43@	-129.85@
	t-ratio	2.26	2.26	1.93
Ln GERPT	Coefficient	185.77@	21.49@	259.02@
	t-ratio	2.27	2.26	1.87
Ln GERSM	Coefficient	-25.98@	-3.58@	93.91*
	t-ratio	1.70	1.95	3.33
Ln GERSF	Coefficient	-21.05@	-2.97@	73.90*
	t-ratio	1.78	2.04	3.39
Ln GERST	Coefficient	48.19@	6.65@	-171.72*
	t-ratio	1.74	2.00	3.36
$\Delta\ u_{t-1}$	Coefficient	-0.98*	-1.06*	-1.59*
	t-ratio	4.52	4.94	10.40
R- Square		0.74	0.78	0.93

* SIGNIFICANT AT 5% LEVEL OF SIGNIFICANCE
@ INSIGNIFICANT

सकल नामांकन अनुपात (GERSM), माध्यमिक स्तर पर महिला सकल नामांकन अनुपात (GERSM), धनात्मक व सार्थक पाये गये। वहीं माध्यमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन

अनुपात (GERST), ऋणात्मक व सार्थक पाये गये। शेष सभी चर गुणांक असार्थक पाये गये। पुरुष साक्षरता दर (LITM), साक्षरता में लिंग अंतराल (GGL), प्राथमिक स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (GERPT), धनात्मक रूप से संबंधित हैं, वहीं महिला साक्षरता दर (LITF), कुल साक्षरता दर (LITT), प्राथमिक स्तर पर पुरुष सकल नामांकन अनुपात (GERPM), ऋणात्मक रूप से संबंधित हैं।

उपरोक्त विवेचन से यह ज्ञात होता है कि प्रथम, द्वितीय, पंचम, सप्तम, अष्टम श्रेणी के राज्यों में संतुलन त्रुटि चर ऋणात्मक हैं, जो यह स्पष्ट करते हैं कि प्रति व्यक्ति आय (PCI) में परिवर्तन दीर्घकालीन हैं, वहीं दूसरी ओर तृतीय श्रेणी, चतुर्थ श्रेणी और षष्टम श्रेणी के संतुलन त्रुटि चर का सांख्यिकीय दृष्टि से शून्य होना प्रति व्यक्ति आय में परिवर्तन व्याख्याजन्य चरों के अनुरूप उसी अवधि में समायोजित होता है। इससे यह भी पता चलता है कि व्याख्याजन्य चरों में अल्पकालीन चरों का प्रति व्यक्ति आय पर अल्पकाल में प्रभाव पड़ता है, व्याख्याजन्य चरों में गुणांक अल्पकालीन सीमांत प्रवृत्ति को प्रदर्शित करते हैं। जबकि दीर्घकालीन सीमांत प्रवृत्ति की व्याख्या सहसमांकलन परीक्षण में उपयोग हेतु लाये गये एंजिल ग्रेगनर परीक्षण के व्याख्याजन्य चर के गुणांक द्वारा की जा सकती है।

मानवीय विकास संकेतक (HDI) के सहसमांकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र में सम्मिलित चरों से यह ज्ञात होता है कि द्वितीय श्रेणी, तृतीय श्रेणी, चतुर्थ श्रेणी, पंचम श्रेणी, षष्टम श्रेणी, सप्तम श्रेणी एवं अष्टम श्रेणी के राज्यों में व्याख्याजन्य चर के तारतम्य में मानवीय विकास संकेतक (HDI) चर में समायोजन की प्रवृत्ति है। इन समस्त श्रेणियों के व्याख्याजन्य चर के गुंणाक अल्पकालीन सीमान्त प्रवृत्ति की ओर संकेत करते हैं, दीर्घकालीन सीमान्त प्रवृत्ति हेतु उपयोग में लाये गये एंजिल ग्रेगनर में प्रयुक्त समीकरणों में सम्मिलित व्याख्याजन्य चर द्वारा प्रदर्शित होती है।

सहसमाकलन एवं त्रुटि संशोधन तन्त्र का उपयोग प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय (PCEXPEDU) के संदर्भ में यह बताता है कि प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी, तृतीय श्रेणी, चतुर्थ श्रेणी, पंचम श्रेणी, षष्टम श्रेणी, सप्तम श्रेणी, एवं अष्टम श्रेणी के राज्यों में संतुलन त्रुटि चर का शून्य से भिन्न होकर सार्थक होना इस बात का द्योतक है कि प्रति व्यक्ति शैक्षणिक व्यय, दीर्घकाल में व्याख्याजन्य चरों में हुए परिवर्तन से समायोजित होता है, इन समीकरणों में व्याख्याजन्य चरों के गुणांक अल्पकालीन सीमान्त प्रवृत्ति को

प्रदर्शित करते हैं, तथा निर्भर चरों में व्याख्याजन्य चरों में सापेक्ष सीमान्त प्रवृत्ति को सहसमायोजन परीक्षण हेतु उपयोग में लाये गये संवर्धित एंजिल ग्रेगनर परीक्षण के व्याख्याजन्य चरों के द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

उपरोक्त समग्र विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि आर्थिक विकास, मानवीय विकास एवं शैक्षणिक व्यय, का शिक्षा के विभिन्न आयामों से प्रत्यक्ष एवं दीर्घकालीन संबंध है, कुछ गुणांकों का ऋणात्मक होना इस बात का द्योतक है, कि अल्पकाल में इन चरों में समायोजन की प्रवृत्ति पायी जाती है तथा चर दीर्घकाल में संतुलन प्राप्ति में सहायक होते हैं।

अत: महिला साक्षरता दर विशेष रूप से तथा अन्य साक्षरता दर सामान्य रूप से तथा वृद्धिगत प्रवृत्ति लिये हुए होना आर्थिक विकास एवं मानवीय विकास हेतु आवश्यक है। साक्षरता के लिंग अंतराल में कमी, तीव्र आर्थिक विकास एवं तीव्र मानवीय विकास में सहायक सिद्ध होती है। इसी प्रकार अधिकांश परिस्थितियों में यह देखा गया कि प्राथमिक स्तर पर सकल नामांकन अनुपात में महिलाओं की स्थिति में वृद्धि अपेक्षित है।

अत: निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि सभी श्रेणियों में साक्षरता में वृद्धि साक्षरता के लिंग अंतराल में कमी, प्राथमिक स्तर पर सभी श्रेणीयों में नामांकन अनुपात में वृद्धि, तथा माध्यमिक स्तर पर नामांकन अनुपात में सभी श्रेणियों में की गई वृद्धि, तीव्र आर्थिक विकास एवं मानवीय विकास में सहायक सिद्ध होगी। इस दिशा मे अपेक्षाकृत शैक्षणिक रूप से पिछड़े राज्यों में आधारभूत शैक्षणिक संरचना का विकास करना आवश्यक होगा, जिससे कि इन राज्यों में तीव्र गति से आर्थिक एवं मानवीय विकास प्राप्त किया जा सकें।

इस प्ररिपेक्ष्य में शिक्षा पर सार्वजनिक निवेश के साथ-साथ निजी निवेश बढ़ाने की आवश्यकता है, जिससे निर्धनता के दुष्चक्र को तोड़ने में सहायता मिलेगी। अत: सर्वांगीण संतुलित विकास हेतु शिक्षा के सर्वांगीण विकास पर बल देना नितांत आवश्यक होगा। जिससे संपन्नता को प्राप्त कर राष्ट्र को विकास की अग्रिम पंक्ति में लाया जा सके। इस हेतु संस्थागत सुधारों की भी आवश्यकता होगी। नीतिगत परिवर्तन इस प्रकार से लाया जाये, जिससे राष्ट्र का शैक्षणिक परिदृश्य उज्ज्वल होकर देश, आर्थिक प्रगति के पथ पर अग्रसर हो सके।

संदर्भ

अहायन, फिलिप एंड हवीट, पीटर (1992): ''अ मॉडल आफ ग्रॉथ थ्रू क्रिएटिव डैस्ट्रक्शन'' इकोनोमेट्रिका, मार्च 1992, 60(2), पीपी. 323-351

ब्रो, रॉबर्ट जे. (1997) ''डिटरमिनैंट्स ऑफ इकोनोमिक ग्रॉथ : अ क्रॉस कन्ट्री इम्प्रीकल स्टडी''लैनेल रॉबिन्स लैक्चर्स, कैम्ब्रिज एमए: एमआईटी प्रैस 1997

ब्रो रॉबर्ट जे. (2001): ''हूमैन कैपिटल : ग्रॉथ, हिस्ट्री एंड पॉलिसी-अ सैशन टू ऑनर स्टेनले इंगरमैन'' अमेरिकन इकोनोमिक एशोसिएशन पेपर एंड प्रोसीडिंग्स, मई 2001, 91(2), पीपी 12-17

बेहरमैन, जेरे आर. एंड एलिजाबेथ एम. किंग (2001) : ''हाउसहोल्ड स्कूलिंग बिहेवियर एंड डिसैंट्रलाइजेशन'' इकोनोमिक्स आफ एजुकेशन रिव्यू, 20 (2001), 321-341

ब्लॉग एम. (1985) : व्हेयर आर वी नो इन इकोनोमिक्स ऑफ एजुकेशन'', इकोनोमिक्स आफ एजुकेशन रिव्यू 4(1), पीपी 17-28

बोवल्स एस. एंड गिन्टिश, एच. (1976): ''स्कूलिंग इन कैपिटलिस्ट अमेरिका'' न्यू: बेसिक बुक्स, 1976

चौधरी, डी.पी. (1968) ''एजुकेशन एंड एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी इन इंडिया'' दिल्ली: यूनिवर्सिटी आफ दिल्ली, अनपब्लिस्ड् पी-एच.डी. थिसेस

दत्ता आर.सी. (1985) : ''एजुकेशन एंड द डिस्ट्रब्यूशन आफ अर्निंग्स : द मैन्टेनेन्स आफ द स्टेट्स क्यू'' अर्थ विजनाना, वॉल्यूम 27, नं. 1, 1985, पी.1

गलपर, हार्वे एंड ड्यून रॉबर्ट एम. जूनियर (1969) : ''अ शार्ट-रन डिमांड फंक्शन फॉर हायर एजुकेशन इन द युनाइटेड स्टेट्स'' जर्नल आफ पालिटिकल इकोनॉमी, सितम्बर-अक्टूबर 1969, 77(5), पीपी. 765-777

ग्लेवे, पॉल एंड हनन जकोबी (1992) : ''इस्टिमेटिंग द डिटरमिनेंट आफ कॉग्निटिव अचीवमेंट इन लो-इनकम कन्ट्रीज : द केस आफ घाना'' लाइविंग स्टैंडर्ड्स मेजरमेंट स्टडी वर्क, पेपर 91, वर्ल्ड बैंक

ग्रोसमैन, जेने एम. एंड हैल्पमैन, इल्हानन (1991) : ''इनोवेशन एंड ग्रीव्थ इन द ग्लोबल इकोनोमी'', कैम्ब्रिज, एम.ए. : एमआईटी प्रैस

हार्बीसन फ्रेडरिक, मायरर्स चार्ल्स ए, (1964) : एजुकेशन इम्प्लायमेंट इन द न्यूली डवलपिंग इकोनोमिक्स'', इंडियन जर्नल आफ लेबर इकोनोमिक्स वाल्यूम 7, नं. 1-2, 1964, पी.1

हर्बिशन, रॉल्फ एंड एरिक हनुसेक (1992) : एजुकेशन परफारमेंस आफ द पुअर : लेशन फ्राम रूरल नार्थ इस्ट ब्राजील'' ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रैस फार वर्ल्ड बैंक

किंगडन, गीता (1996) : ''स्टूडेंट्स अचीवमेंट एंड टीचर पे : ए केस स्टडी आफ इंडिया'' एसटीआईसीईआरडी वर्क पेपर 74, लंदन स्कूल आफ इकोनोमिक्स एंड पॉलिटिकल साइंस

क्रूजर, एलेन बी.एम. लिंडल, (2001) ''एजुकेशन फार ग्रॉथ : व्हाई एंड फार हूम?'' जर्नल आफ इकोनोमिक लिट्रेचर, 39 एजुकेशन एंड इकानोमिक ग्रॉथ सिस्को पब्लिक 19: पीपी. 1101–1136

लुकास, राबर्ट ई. जूनियर (1988) ''आन द मैकेनिक्स आफ इकोनोमिक डवलपमेंट'' जर्नल आफ मॉनटेरी इकोनोमिक्स 22, नं. 1 (1988) : 3–42

मैचलप, फ्रीट्ज (1970) : ''एजुकेशन एंड इकोनोमिक ग्रोथ'' लिन्कोलन: युनिवर्सिटी आफ नेब्रास्का प्रैस

मैक्डॉगल लोरी, (2000) : जेण्डर गैप इन लिट्रेसी इन उत्तर प्रदेश–क्वेश्चन फार डिसैंट्रलाइज्ड् एजुकेशनल प्लानिंग'' इकोनोमिक एंड पालिटिकल वीकली, वाल्यूम 35, नं. 19, 2000 पी. 1649

मिलर, लैनार्ड एस. (1971) : ''डिमांड फंक्शन फार हायर एजुकेशन इन द यूनाइटेड स्टेट'', स्टोनी ब्रुक. न्यूयार्क : नेशनल ब्यूरो आफ इकोनोमिक रिसर्च स्टेट युनिवर्सिटी आफ न्यूयार्क, 1971

मॉर्गनस्ट्रेन रॉबर्ट डी. (1971) : ''डायरैक्ट इनडायरैक्ट इफैक्ट्स आन अर्निंग आफ स्कूलिंग एंड सोशियो–इकोनोमिक बैकग्राउण्ड ''रिव्यू आफ इकोनोमिक एंड स्टेटिक्स, मई 1973, 55(2), पीपी 225–233

मुथैयान पी, (1996) : ''एजुकेशन प्रोडक्टिविटी एंड अर्निंग्स : ए माइक्रो स्टडी'' इंडियन जर्नल आफ लेबर इकोनोमिक्स, वाल्यूम. 39, नं. 2, 1996, पी.417

नॉरधौस, विलियम डी. (1969): ''एन इकोनोमिक थियोरी आफ टैक्नोलोजिकल चेंज'' द अमेरिकन इकोनोमिक रिव्यू, मई 1969 (पेपर एंड प्रोसीडिंग) 59(2), पीपी. 18–28

फैल्प्स एडमोंड एस. (1966) : ''मूड्स आफ टैक्नीकल प्रोग्रेस एंड गोल्डन रूल आफ रिसर्च''रिव्यू आफ इकोनोमिक स्टडी, अप्रैल 1966, 33(2), पीपी. 133–145

रोमर, पॉल एम, (1990) : ''इंडोजेनस टैक्नोलॉजिकल चेंज'' जर्नल आफ पॉलिटिकल इकोनॉमी, अक्टूबर 1990 पीटी 2, 98(5), पीपी एस71–एस102

सैल्फ, सरमिस्था एंड रिचर्ड ग्रैबोस्की (2004) : डज एजुकेशन एट ऑल लेवल कॉज गॉथ : इंडिया, ए केस स्टडी'', इकोनोमिक्स आफ एजुकेशन रिव्यू 23 : पीपी. 47–55

सेल, कार्ल (1966): ''टूवार्डस अ थियोरी आफ इन्वेंटिव एक्टीविटी एंड कैपिटल अक्यूमूलेशन'' द अमेरिकन इकोनोमिक रिव्यू, मई 1966 (पेपर एंड प्रोसीडिंग्स), 56(2), पीपी. 62–68

सिमोन, जूलियन एल. (1986) : ''थियोरी आफ पॉपुलेशन एंड इकोनोमिक ग्रॉथ'' न्यूयार्क ब्लैकवैल, 1986

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

अनुसूचित जाति एवं जनजाति की स्कूली छात्राओं की मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याएं

कुसुम यदुलाल*

इस धरा धाम पर स्थित संपूर्ण विश्व के सभी समाजों में ज्ञान और शिक्षा के महत्व को स्वीकारा जाता है और यह तथ्य अनुभवसिद्ध भी है। शिक्षा से व्यक्ति का व्यक्तित्व निखरता है, सभ्यता का विकास होता है, संस्कृति और अधिक संस्कार-संपन्न होती है, विज्ञान प्रगति करता है और लौकिक ज्ञान चहुंमुखी होकर मानव जाति का मार्ग उत्तरोत्तर उत्थान हेतु प्रशस्त करता है। साथ ही यह वास्तविकता भी अपाक्य रूप से सत्य है कि विश्व में सभी सभ्य समाज पुरुष प्रधान रहे हैं और यह पुरुष प्रधानता आधुनिक युग भी पूर्णरूपेण तिरोहित नहीं हुआ है। पुरुष प्रधानता ने शिक्षा के क्षेत्र को भी अछूता नहीं छोड़ा है। परिणाम यह हुआ कि शिक्षा पर भी पुरुषों का आधिपत्य हो गया और महिला जगत इस क्षेत्र में भी पीछे रह गया। जबकि सृष्टि रूपी रथ नर-नारी रूपी दो पहियों के बिना गतिमान ही नहीं रह सकता।

इसी संदर्भ में यह भयावह सत्य भी हमारे सम्मुख उपस्थित होता है कि विश्वभर में लगभग सभी समाजों में उपलब्ध धन-संपदा, अवसरों एवं अन्य संसाधनों के असमान्य वितरण की समस्या न्यूनाधिक रूप से विद्यमान है। इसी विकट परिस्थिति के कारण समाज में कुछ मानव-समूह सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से आगे बढ़ गये और कुछ अपेक्षाकृत पीछे छूट गये तथा कालान्तर में ये मानव-समूह ही अगड़े और पिछड़े अथवा सुविधा-संपन्न और सुविधा-वंचित अथवा स्वामी और सेवक बन गये। इनमें से प्रथम श्रेणी में आने वाले व्यक्ति दूसरे श्रेणी में आने वाले निरीह लोगों पर भेदभावजन्य शासन एवं अन्याय, अत्याचार और उत्पीड़न करने लगे, जिसका सहज परिणाम यह हुआ कि उत्पीड़ित वर्ग में हीन-भावना, सम्मानहीन मानसिकता, पिछड़ेपन का भाव और

* वरिष्ठ व्याख्यात्री, शिक्षा शास्त्र विभाग, आधुनिक ज्ञान विज्ञान संकाय, श्री लालबहादुर शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली-110016

आत्म-विश्वास का भाव पैदा हो गया। स्वभावगत एवं संस्कारजन्य यह स्थिति पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ती गई और परिणामस्वरूप निर्धनता, असुविधापूर्ण तथा प्रतिकूल वातावरण में जन्मे-पले-बढ़े-पढ़े बच्चे सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ते चले गये और राष्ट्र की मुख्य धारा से दूर होते गये।

दुर्भाग्य से भारत में ये दोनों ही वास्तविकताएं अपने चरम पर पहुंच गई। भारत में प्राचीनकाल में वर्ण व्यवस्था कर्म एवं गुणाधारित थी जो कालान्तर में जन्माधारित बन गई। कर्माधारित व्यवस्था में व्यक्ति अपने ज्ञान, गुणों एवं कर्मों के आधार पर उत्तम, मधयम, अधम और निकृष्ट श्रेणी पाते थे, किन्तु जन्माधारित व्यवस्था में ज्ञान-गुण-कर्म गौण हो गया और जन्म को प्रधानता मिल गई। इसका दुखद परिणाम यह हुआ कि अधम वर्ग में जन्मा बच्चा शिक्षित, गुणवान और कर्म-कुशल होने पर भी अधम ही बना रहा और उसे तथाकथित उच्च वर्ग ने सम्मानपूर्ण स्वीकृति प्रदान नहीं की। श्री राममनोहर लोहिया कहा करते थे कि ''जाति-प्रथा यथास्थिति समसर्थक एवं परिवर्तन विरोधी एक दुर्जेय शक्ति है जो समाज में न केवल सभी प्रचलित रीति-रिवाजों की रक्षा करती है बल्कि अपमान एवं असत्य को भी पुष्ट करती है।'' एन्ट्रे बेटिले ने भी जाति-प्रथा के दोषों को बताते हुए कहा है कि ''जाति-प्रथा में यह दुर्गुण है कि उसमें असमानताएं मिटने की बजाय इकट्ठा होती चली जाती हैं और परिणामत: सामाजिक और राजनीतिक सत्ता एक ही जाति के कुछ लोगों के हाथों में केन्द्रित होती चली जाती है।''

भारत में जाति-प्रथा के कारण ही एक बड़ा जन-समुदाय अछूत एवं दलित बनता चला गया। इस वर्ग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि अछूत और दलित कहे जाने वाले लोग आर्य-पूर्व भारतीयों के वंशज थे, जिन्हें आर्योत्तर वर्ण-व्यवस्था में सम्मानपूर्ण स्थान नहीं दिया गया। प्राचीन वर्ण-व्यवस्था में सम्मानपूर्ण स्थान न पाने वाले वर्ग को 'अवर्ण', 'अछूत', 'अंत्यज' अथवा 'पंचम (वर्ण)' कहा जाने लगा। ब्रिटिश काल में इसे दलित वर्ग कहा गया। 1931 की जनगणना में इन्हें 'बहिष्कृत वर्ग' नाम दिया गया। साइमन कमीशन ने इस वर्ग को 'अनुसूचित जाति की संज्ञा दी। इसी आधार पर भारत सरकार की अधिनियम 1935 की धारा 279 में देश की 22 प्रतिशत जनता (7 प्रतिशत आदिवासी और 15 प्रतिशत निम्न श्रेणी की जातियों) को शैक्षिक, सामाजिक और आर्थिक आधार पर उत्थान किये जाने योग्य अनुसूचित किया गया। वर्ष 1933 में एक 'मंदिर-प्रवेश आंदोलन' के दौरान महात्मा गांधी ने इन्हें 'हरिजन' नाम दिया। 1970 में 'दलित पेंथर आंदोलन' में इन्हें 'दलित' की संज्ञा दी गई। यही

अछूत, अंत्यज और दलित वर्ग ही स्वतंत्र भारत में अनुसूचित जातियों के नाम से जाना जाने लगा। नगरों और गांवों की सभ्यता से दूर वन प्रदेशों अथवा पर्वतीय घाटियों में रहने वाले विकास की दृष्टि से अति पिछड़े कबीलों को आदिवासी कहा गया।

भारत में नारी के सम्मानपूर्ण स्थान का गिरता ग्राफ

जहां तक भारत में नारी को प्राप्त दर्जे का संबंध है यह कहना समीचीन होगा कि यहां समय-समय पर स्त्रियों का दर्जा न्यूनाधिक रूप से परिवर्तित होता रहा है। प्रसिद्ध फ्रांसीसी समाजशास्त्री चार्ल्स फौरियर ने ठीक ही कहा है कि ''किसी राष्ट्र की सामाजिक व्यवस्था और राजनीति में स्त्रियों को जैसा स्थान प्राप्त हो, उससे यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि वह राष्ट्र कितना सभ्य और सुसंस्कृत है।'' भारत में प्राचीनकाल में महिलाओं को समाज में अपेक्षाकृत उच्च एवं सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त होता था। वैदिक काल में और बौद्धकालीन भारतीय समाज में स्त्रियों को निश्चय ही समाज और परिवार में सम्मानपूर्ण उच्च स्थान प्राप्त थे। जनक और सुलभा, याज्ञवल्क्य और गार्गी, मैत्रेयी तथा शंकराचार्य और विद्याधरी के बीच संवाद एवं शास्त्रार्थ से स्पष्ट है कि भारतीय समाज में नारियां शिक्षा और ज्ञान के उच्च शिखर पर विद्यमान थीं। बौद्धकाल में भी नारी-साधिका शिक्षा ग्रहण करके उच्च शिखर तक पहुंच जाती थी। 'थेरी' कही जाने वाली बौद्ध भिक्षुणियां अपनी संपूर्ण योग्यता एवं प्रबल शक्ति-सामर्थ्य से सामाजिक उत्थान और धार्मिक कार्यों के प्रचार-प्रसार में लगी रहती थीं। उनमें से कुछ सुप्रसिद्ध अध्यापिकाएं और शोधकर्मियों के रूप में विख्यात हुईं। 'कल्प-सूत्र' नामक ग्रंथ में एक सहस्र जैन भिक्षुणियों के प्रथम श्रेणी के प्रवचनकार होने का उल्लेख मिलता है।

कालान्तर में गुरुकुल में अध्ययनरत बाल-बालिका की प्रतिभा के आधार पर वर्ण-निर्धारण की प्रक्रिया में विकार आया तथा दुर्भाग्य से यह गुण-कर्मानुसार न होकर जन्मानुसार हो गया। सुविख्यात समाजशास्त्री एम.एन.श्रीनिवासन के अनुसार वंशागत जाति वर्ण-व्यवस्था को जारी रखने के लिए स्त्रियों को कठोर अनुशासन में रखा जाने लगा। उन्हें अपनी ही जाति में विवाह करने, विवाह बचपन में ही करने, विधवा जीवन व्यतीत करने अथवा सती होने के लिए बाध्य किया जाने लगा। मुगल शासन काल में भी जातिगत अथ्वा वर्णाधारित व्यवस्था पूर्ववत् चलती रही। और समाज में नारियों का स्तर निम्न से निम्नतर होता गया। परिणामत: पुरुष प्रधान समाज में नारी की अंतर्निहित शक्तियों एवं संभावनाओं को नकार दिया गया, उन्हें पुरुषों की सेवक मात्र समझा जाने लगा, गृहस्थ कार्यों और उत्सवों में भी उनकी भागीदारी कम कर दी गई। संक्षेप में कहें तो उन्हें पुरुषों के पूर्णत: अधीन बना दिया गया और उन्हें पुरुषों का सुख-आराम देने तथा

बच्चे पैदा करने का यंत्र मात्र मान लिया गया। विडम्बना यह रही कि एक ओर तो उन्हें 'सुकोमल' कहा गया और दूसरी ओर उनके साथ 'कठोरतम' व्यवहार किया गया। उनका शिक्षा का अधिकार तक छीन लिया गया। शिक्षा से वंचित होकर उन्हें कूप-मंडूप की भांति घर की चारदीवारी तक सीमित रहने के लिए विवश होना पड़ा। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भारत में नारियों को जो सम्मानपूर्ण दर्जा समाज और परिवार में प्राप्त था, वह सभी युगों में विभिन्न कारणों से नीचे गिरता गया और वे शिक्षा, राजनीति और व्यावसायिक क्षेत्रों में लगातार पिछड़ती गईं तथा वे वर्तमान युग के महिला-पिछड़ेपन के अभिशाप से ग्रस्थ हो गईं।

भारत के संविधान में समतामूलक और शिक्षा संबंधी प्रावधान

संविधान में इस वर्ग के लोगों में शिक्षा के विकास से संबंधित अनुच्छेद है– 15(4), 29, 30, 45-46 और 350-क। शिक्षा विकास से संबद्ध प्रावधानों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम श्रेणी में अनुच्छेद 45 के प्रावधानों को रखा जा सकता है जो अनुसूचित जातियों और जनजातियों सहित देश के सभी नागरिकों पर समान रूप से लागू होते हैं और द्वितीय श्रेणी में अनुच्छेद 15(4) और 46 जैसे प्रावधानों को रखा जा सकता है, जिनका उद्देश्य अनुसूचित जातियों और जनजातियों के हितों की रक्षा करना है। यहां इस बात का उल्लेख करना भी अनिवार्य है कि अनुच्छेद 15(4) को संविधान के मूल अधिकार शीर्षक अध्याय में रखा गया है जबकि अनुच्छेद 45-46 को 'राज्य की नीति के निर्देशक तत्व' शीर्षक में रख गया है। अनुच्छेद 15(4) में उल्लेख है कि नागरिकों के सामाजिक अथवा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के उत्थान हेतु विशेष विधान आदि बनाने के सरकार के अधिकार को शेष अनुच्छेद 15 और अनुच्छेद 29 की धारा (2) के प्रावधान किसी भी प्रकार से बाधित नहीं करेंगे अर्थात् अनुच्छेद 15(4) के माध्यम से सरकार को यह संवैधानिक अधिकार दिया गया है कि वह सरकारी शिक्षा संस्थाओं में पिछड़े नागरिकों के लिए, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण कर सकती है और साथ ही उनके उत्थान के लिए यथा आवश्यक अन्य विशेष कानून आदि बना सकती है। तात्पर्य यह है कि सरकार ऐसी शिक्षा संस्थाओं में छात्रों के प्रवेश से संबंधित निर्णयों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों अथवा पिछड़े वर्गों के छात्रों के मामले में निर्धारित न्यूनतम अर्हक अंकों में अथवा अन्य शर्तों में ढील दे सकती है। अनुच्छेद 29(1) के उपबंधों द्वारा अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण सुनिश्चित किया गया है। अनुच्छेद 30 के द्वारा अल्पसंख्यकों को यह अधिकार दिया गया है कि वे अपनी शिक्षा संस्थाएं अलग से स्थापित कर सकते हैं और उन्हें चला सकते हैं। अनुच्छेद 45 में

प्रावधान है कि शासन संविधान के लागू होने की तारीख से अगले दस वर्षों तक चौदह वर्ष के सभी बच्चों को नि:शुल्क शिक्षा अनिवार्य रूप से देने की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा। अनुच्छेद 46 में शासन पर यह दायित्व डाला गया है कि वह देश में दुर्बल वर्ग के लोगों, विशेषत: अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों को विशेष रूप से बढ़ावा देगी तथा सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषणों से उनकी रक्षा करेगी। अनुच्छेद 350-क में प्रावधान है कि प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा में रखा जा सकता है। इन्हीं प्रावधानों और अन्य राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों के संदर्भ में भारत सरकार ने 1986 में एक संतुलित और व्यापक राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाई है।

माधयमिक शिक्षा

प्राय: प्राथमिक शिक्षा को शिक्षा रूपी भव्य भवन की नींव कहा जाता है। मूल आधार होने से प्राथमिक शिक्षा की महत्ता स्वत: ही स्पष्ट हो जाती है। नि:संदेह प्राथमिक शिक्षा संपूर्ण शिक्षा का आधार है क्योंकि प्राथमिक शिक्षा पूरी कर लेने के बाद ही व्यक्ति शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ पाता है। तथापि सभी स्तर की शिक्षाओं का अपना-अपना महत्व है जिसे नकारा नहीं जा सकता। माधयमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा का भी अपना विशिष्ट महत्व है। इस स्तर पर पहुंच कर बच्चा किशोर हो जाता है और उसमें मौलिकता का विकास हो जाता है, उसमें अपेक्षाकृत और अधिक परिपक्वता आ जाती है, वह अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार पाठ्यक्रम का चयन करने में समर्थ हो जाता है जो उसके भावी जीवन में जीविकोपार्जन अथवा धनोपार्जन का आधार बनता है। इस दृष्टि से कक्षा 9 से 12 तक की शिक्षा व्यक्ति को व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु महत्वपूर्ण भूमिका तैयार करती है। अत: यह अपेक्षित है कि माध्यमिक शिक्षा पर छात्र, शिक्षक, अभिभावक तथा शिक्षा-योजनाकार आदि सभी विशेष ध्यान दें।

माध्यमिक स्तर पर बालिका शिक्षा के प्रचार-प्रसार और गुणात्मकता को बढ़ाने पर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है ताकि देश में मानव संसाधन विकास में उचित संतुलन आ सके और मानव संसाधन क्षमता में वृद्धि हो सके। महिला शिक्षा और विकास के उपायों के संबंध में 6 सप्ताह की अवधि का दसवां प्रशिक्षण कार्यक्रम हाल ही में संपन्न किया जा चुका है। उच्चतर और माध्यमिक उच्चतर स्तर की छात्राओं के लिए होस्टल एवं बोर्डिंग की सुविधाएं प्रदान करने की योजना का मूल्यांकन करके उसे केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय के पास भेजा जा चुका है।

जहां तक दिल्ली में माध्यमिक स्तर के स्कूलों का संबंध है 1999-2000 के

अंतरिम आंकड़ों के अनुसार यहां 322 हाई स्कूल और 1009 उच्चतर माध्यमिक स्कूल हैं। इन स्कूलों में अनुसूचित जाति के 78955 लड़कों और 97662 लड़कियों अर्थात कुल 1,76,617 बच्चों ने प्रवेश लिया। इसी समय अनुसूचित जनजाति के 345 लड़कों और 368 लड़कियों अर्थात कुल 713 बच्चों में माध्यमिक स्कूलों में दाखिला लिया।

समस्या का उद्‌गम

जाति-प्रथा विश्व की प्राचीनतम वर्गाधारित व्यवस्थाओं में से एक है जो आज भी अस्तित्व में है। जाति-प्रथा का उद्‌गम हिन्दुओं के पवित्र ग्रंथ मनुस्मृति में खोजा जा सकता है, जिसका रचना काल 200 ईसा-पूर्व से 100 ईसा-पूर्व के बीच में कहीं पड़ता है।

अछूतों अथवा दलितों के अस्तित्व में आने और उनके विभिन्न युगों में जीवन-यापन के बारे में यद्यपि अनेक सिद्धान्त सामने आते हैं, किन्तु तर्कसम्मत सिद्धान्त यह प्रतीत होता है कि दलित आर्योत्तर भारतीयों के वंशज हैं। शायद इसीलिए आर्योत्तर वर्ण-व्यवस्था में उनको कोई स्थान ही नहीं दिया गया। अत: यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि आर्य-पूर्व भारतीयों की एक मूलत: स्वतंत्र तथा समता-आधारित संस्कृति थी। सिन्धु घाटी सभ्यता से प्राप्त हुए अवशेषों से इस मत की पुष्टि भी होती है। आर्योत्तर काल में भारतीय समाज चार वर्णों– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र में बंट गया, जिसमें शूद्र निम्न स्तर पर थे। यह भी कहा जाता है कि ये चार वर्ण स्वयं भगवान ने बनाये अर्थात उन्होंने अपने मस्तक से ब्राह्मण, अपने बाजुओं से क्षत्रिय, अपनी जंघाओं से वैश्य (बणिक तथा कुशल कारीगर आदि) और अपने चरणों से शूद्र बनाये। जो लोग इन चार श्रेणियों में नहीं आ पाए, वे 'अछूत', 'अवर्ण', 'अंत्यज', 'पंचम', 'हम-शूद्र' कहे जाने लगे।

यद्यपि दलित नारी शताब्दियों से निर्बल, अधिकाररहित, अपनी बात कहने के अधिकार से वंचित, गरिमाहीन, व्यक्तित्व-शून्य रहती आई है, किन्तु अब उनमें भी जागृति आने लगी है और वे निश्चित रूप से नहीं चाहतीं कि भविष्य में उनको सताया जाये, दबाया जाये या फिर उनका किसी भी प्रकार से शोषण किया जाये, अथवा उन्हें उनके गृहस्थ, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक अधिकारों से वंचित रखा जाये।

शोध का औचित्य

विश्वभर में लगभग सभी समाजों में उपलब्ध अवसरों, धन-सम्पदा और अन्य संसाधनों के असमान वितरण की समस्या न्यूनाधिक रूप से पाई जाती है। इसके दुष्परिणामस्वरूप कालान्तर में देश के कुछ वर्ग भेदभावजन्य अन्याय, अत्याचार, शोषण तथा उत्पीड़न का

शिकार हो जाते हैं, क्योंकि ये मूलभूत सुविधाओं से भी वंचित होते चले जाते हैं। ऐसे उत्पीड़ित वर्ग में हीन भावना, आत्मसम्मान-रहित मानसिकता, पिछड़ेपन का भाव और आत्मविश्वास का अभाव आदि पैदा हो जाता है। परिणामत: असुविधा, अलाभ एवं प्रतिकूल वातावरण में जन्मे-पले-बढ़े-पढ़े बालक/बालिकाएं सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े ही रह जाते हैं और वे राष्ट्र की मुख्य धारा में सम्मिलित नहीं हो पाते। इसका पहला कारण, समुदायों का गरीबी के कारण असंगठित होना और विभिन्न अभावों के बीच जीना है तथा दूसरा कारण, समाज के मध्यम वर्ग द्वारा इनके साथ भेदभाव किया जाना है। बच्चों में भी लड़कियां अपेक्षाकृत अधिक समाज और परिवार की उपेक्षा की शिकार बनती हैं और अशिक्षित रह जाती हैं। अभावग्रस्त बालिकाओं द्वारा शिक्षा ग्रहण न किये जाने के अनेक कारण हैं यथा सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़ापन, घरेलू काम-धंधे, भाई-बहिनों की देखभाल, बाल-विवाह, माता-पिता का अशिक्षित अथवा निरक्षर होना और पढ़ाई में मार्ग-दर्शन न मिलना, घरेलू काम-धंधे में हाथ बंटाना, सामाजिक रूढ़िवादिता, मां-बाप की शिक्षा-व्यय वहन न करने की स्थिति, दूसरे बच्चों के साथ सामंजस्य न कर पाने की प्रवृत्ति, माता-पिता के साथ बच्चे का उपयुक्त संवाद न होना, घर और शिक्षण संस्थाओं का वातावरण अनुकूल न होना, बच्चे पर माता-पिता का अनुशासन ढीला होना आदि-आदि।

अब तक के शोध-कार्यों से यह निष्कर्ष निकला है कि सामाजिक पिछड़ेपन के कारण बालिकाओं का बौद्धिक और भाषायी विकास अवरुद्ध होता है तथा उनकी शिक्षा-ग्रहण क्षमता प्रभावित होती है; अभावग्रस्त बालिकाओं का बौद्धिक विकास और अध्ययन संबंधी उपलब्धि अपेक्षित स्तर की नहीं हो पाती। यह भी पाया गया है कि सामाजिक दृष्टि से हीन भावना की शिकार हुई बालिकाएं पढ़ने-लिखने में रुचि नहीं लेती हैं और स्कूलों आदि में तत्समय उपलब्ध सुविधाओं क पूरा लाभ नहीं उठा पातीं। उनकी बुद्धि का स्तर, आकांक्षा, भाषा-अभिव्यक्ति, सामान्य ज्ञान, विश्लेषण-क्षमता, समझने, सार-ग्रहण करने और स्मरण करने की शक्ति भी प्राय: निम्न स्तर की होती है। शोध-कार्यों के माध्यम से सुझाये गये निदानात्मक उपायों एवं कार्यक्रमों से बच्चों में जिज्ञासा, पढ़ने की इच्छा, सीखने की तत्परता, ठीक भाषा बोलने और लिखने की अनिवार्यता संबंधी भावना पैदा की जा सकती है। यह भी देखा गया है कि सामाजिक मेल मिलाप करने, उत्तरदायित्व और आत्म-सम्मान की भावना, बालिकाओं में स्कूल प्रवेश के लिए अपेक्षित व्यवहार विकसित करने में सहायक होती है। अब तक के शोध-कार्यों एवं शासकीय प्रयासों के बावजूद हम अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं

में अपेक्षित शिक्षा-स्तर की बात तो दूर रही, उनमें अपेक्षित साक्षरता के मिशन को पूरा नहीं कर सके हैं। समाज में रूढ़िवादिताओं के साये में असमानताएं, बालिका शोषण एवं उत्पीड़न आज भी अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं।

ऐसे शोध-कार्यों के क्रम में इस शोध-प्रबंध का तेजी से परिवर्तित हो रहे सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक परिवेश में अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राओं की परंपरागत मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन करना है, जिससे योजनाकारों द्वारा पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय, अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं के भावनात्मक एवं सामाजिक बाधाओं को भी ध्यान में रखा जा सके। साथ ही, इससे प्रथम एवं द्वितीय शिक्षित पीढ़ी की छात्राओं में समायोजन संबंधी समस्याओं का गहनता से अध्ययन करने में मदद मिल सकेगी। इस शोध प्रबंध में नौवीं, दसवीं, ग्यारहवीं एवं बारहवीं (माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक कथा) अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राओं को समस्या अध्ययन के लिए चुना गया है। अभी तक इस शिक्षा-स्तर की किशोरियों की सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन व्यापक स्तर का नहीं हो पाया है। यह अध्ययन उनके द्वारा विद्यालय बीच में ही छोड़ जाने की समस्या को समाप्त करने तथा उनमें शिक्षा का प्रसार करने में सहायक सिद्ध होगा। इसका यह लाभ होगा कि वे अपनी प्रतिभा, योग्यता एवं कार्यक्षमता के अनुसार अपने विषयों का चयन कर सकेंगी; उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकेंगी धनोपार्जन की कला-कौशल में निपुणता हासिल कर बराबरी का एवं सम्मानपूर्ण जीवन-यापन करने में सपफल हो सकेंगी। समाज की प्रतिभा-संपन्न बालिकाओं में विराजमान प्रतिभा के विकास एवं संरक्षण में तथा विभिन्न रूढ़िवादी परंपराओं, विषमताओं एवं मान्यताओं को दूर करने में यह अधययन सहायक सिद्ध होगा।

जब समाज में नारियों को उचित दर्जा प्राप्त नहीं होता, पुरुषों द्वारा उनका सम्मान नहीं किया जाता, उनको अपना विकास करने के समान अवसर प्रदान नहीं किये जाते, उन पर रूढ़िवादिता पर आधारित विभिन्न प्रतिबंध लगा दिये जाते हैं, उनको पुरुषों से हर प्रकार से हीन समझा जाता है, उनको बच्चे पैदा करने का यंत्र मात्र मान लिया जाता है, और शिक्षा पाने की अपनी रुचि के अनुसार कला, आदि विषयों का चयन करने के, गृहस्थ-कार्यों में भी स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय लेने के, घर से बाहर कोई व्यवसाय करने के, मूल अधिकारों से भी वंचित कर दिया जाता है, तब इस स्थिति से सबसे अधिक दुष्प्रभाव उन बालिकाओं पर पड़ता है, जो भविष्य में नारी और जननी बनने वाली हैं और जिन पर प्रगतिशील भावी पीढ़ी और स्वस्थ समाज के निर्माण का दायित्व सर्वाधिक है। यह

शत-प्रतिशत ठीक कहा गया है कि– ''यदि आप एक पुरुष को शिक्षित करते हैं तो आप केवल एक व्यक्ति को शिक्षित करते हैं, किन्तु यदि आप एक नारी को शिक्षित करते हैं तो आप एक पूरे परिवार को शिक्षित कर देते हैं।''

जिस समाज/देश में दलित अर्थात अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग की जनसंख्या 22.5 प्रतिशत हो, वहां समाज तभी विकसित कहा जा सकता है, जब इस वर्ग के सभी पुरुष और नारी भी सुशिक्षित हों। इस परिप्रेक्ष्य में अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं की शिक्षा का प्रश्न बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाता है। बालिकाओं में भी माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तर की बालिकाओं की शिक्षा, इस प्रकार से मुख्य प्रश्न विचारणीय विषय बन जाता है कि इस स्तर पर पहुंचकर बालिकाओं की प्रतिभा प्रस्फुटित होने लगती है, उनमें स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता आ जाती है, वे गंभीर विषयों पर चिन्तन करके निश्चित निष्कर्ष निकालने लगती हैं, अपनी रुचि का व्यवसाय चुनने की इनमें योग्यता आ जाती है।

अनुसूचित जाति/जनजाति की अर्थात शैक्षिक, सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़ी बालिकाओं को देश की मुख्य धारा में लाने के लिए उन्हें न केवल शिक्षित बल्कि सुशिक्षित करना अनिवार्य है और उनमें शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने के लिए उनके बारे में किये गये शोधपूर्ण अध्ययनों के निष्कर्षों को ही आधार बनाया जा सकता है। अत: माध यमिक स्तर की बालिकाओं के बारे में ऐसे अध्ययनों की नितान्त आवश्यकता है जिनसे उनकी विभिन्न प्रकार की समस्याओं और तत्संबंधी निराकरणों का ज्ञान हो और देश के कर्णधार राजनेता, शिक्षा नीति निर्धारक तथा शिक्षक वर्ग उनसे अवगत हो जायें और वे इस स्तर की बालिकाओं की सभी प्रकार की आवश्यकताओं को देखते हुए उनके लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था कर सकें।

इसी संदर्भ में मैंने प्रस्तुत शोध अध्ययन करने का निश्चय किया है, जिसमें मुख्य रूप से इन वर्गों की माधयमिक और उच्चतर माधयमिक स्तर की बालिकाओं की शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं और उनके निदानों पर अध्ययन ध्यान केन्द्रित किया जायेगा।

समस्या कथन

''दिल्ली स्थित माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं में अध्ययनरत अनुसूचित जाति एवं जनजाति की छात्राओं की मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन''

उपरोक्त शीर्षक से स्पष्ट है कि इस शोध अध्ययन का उद्देश्य दिल्ली स्थित माध्यमिक

एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं में अध्ययनरत अनुसूचित जाति एवं जनजाति की छात्राओं की मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याओं की प्रकृति एवं स्वरूप को ज्ञात कर उनके संभावित निराकरण प्रस्तुत करना है।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त कतिपय परिभाषिक शब्दों से अभिप्राय है

समस्या में प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या :

1. 'दिल्ली स्थित शिक्षा संस्थाओं' से अभिप्राय है दिल्ली राजधानी क्षेत्र में कार्यरत शिक्षा संस्थाएं।
2. 'माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक' (सैकेंडरी एवं सीनियर सैकेंडरी) से तात्पर्य है– कक्षा नौवीं, दसवीं तथा ग्यारहवीं-बारहवीं का शिक्षा-स्तर।
3. 'जाति एवं वर्ण' से तात्पर्य है वह मानव-समूह जो भारतीय हिन्दू समाज की परंपरा के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र वर्ग के अंतर्गत आता है।
4. 'सवर्ण जातियों' से अभिप्राय है 'भारतीय हिन्दू समाज का परंपरागत आधार चार वर्ण/जातियां हैं। जिनके नाम क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हैं। प्रस्तुत अध्ययन में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य को ही सवर्ण जाति के रूप में लिया गया है।
5. 'अनुसूचित जातियों' से अभिप्राय है 'भारत सरकार और राज्य सरकारों द्वारा समय-समय पर प्रकाशित की गई अधिसूचनाओं में सम्मिलित की गई जातियां।
6. 'अनुसूचित जनजातियों' से अभिप्राय है 'भारत सरकार और राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर प्रकाशित की गई अधिसूचनाओं में उल्लिखित जनजातियां।
7. 'छात्रा अथवा छात्राओं' से तात्पर्य है कक्षा 9 और 10 तथा कक्षा 11 और 12 में अध्ययनरत छात्राएं।
8. 'अभिभावक' से तात्पर्य कक्षा 9 और 10 तथा कक्षा 11 और 12 में अध्ययनरत छात्राओं के माता-पिता आदि से है।
9. 'शिक्षक/अध्यापक' से तात्पर्य कक्षा 9 और 10 तथा कक्षा 11 और 12 को शिक्षण देने वाले शिक्षक और अध्यापक से है।
10. 'मनोवैज्ञानिक समस्याओं' से तात्पर्य छात्राओं की ऐसी मानसिक समस्याओं से है जो शिक्षा ग्रहण प्रक्रिया में बाधक सिद्ध होती हैं, जो निम्नलिखित हैं :

    (क) छात्राओं की संवेदनात्मक, भावनात्मक, सामाजिक एवं व्यक्तिगत समस्याएं।

    (ख) छात्राओं के घर और विद्यालय में प्रतिकूल वातावरण होने की समस्या।

(ग) सहपाठियों के साथ समायोजन की समस्या।

(घ) अध्यापक एवं सहपाठियों की अभिवृत्ति का असहयोगपूर्ण और उपेक्षापूर्ण होने की समस्या।

(ड.) लिंगभेदजन्य भावना की समस्या।

(च) परिवार में शिक्षा के प्रति नकारात्मक रवैये की समस्या।

(छ) संकोची स्वभाव होने की समस्या।

(ज) आयु के अनुरूप मानसिक परिपक्वता न होने की समस्या।

11. 'शैक्षिक समस्याओं से तात्पर्य' शिक्षा संबंधी व्यावहारिक समस्याओं से है, जो निम्नलिखित हैं :

(क) कतिपय विषयों को ठीक प्रकार से समझने में कठिनाई की समस्या।

(ख) भाषा-माध्यम की समस्या।

(ग) वांछित अध्ययन सामग्री के अभाव की समस्या।

(घ) शिक्षण विधि के अनुकूल न होने की समस्या।

(ड·) उचित मार्ग-दर्शन के अभाव की समस्या।

(च) अपनी रुचि के विषय का चयन कर पाने की समस्या।

12. 'प्रथम पीढ़ी' से तात्पर्य छात्राओं के उस समूह से है जिनके माता-पिता अशिक्षित हैं अथवा जिन्होंने केवल कक्षा पांच तक ही शिक्षा ग्रहण कर रखी है अथवा वे छात्राएं, जिन्होंने प्रथम बार ही औपचारिक शिक्षा ग्रहण करने हेतु विद्यालय में प्रवेश किया है।

13. 'द्वितीय पीढ़ी' से अभिप्राय उन छात्राओं से है जिनके माता-पिता आदि ने कक्षा पांच से अधिक औपचारिक शिक्षा प्राप्त कर रखी है।

उद्देश्य कथन

प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित मुख्य उद्देश्य हैं :

1. दिल्ली स्थित माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं में अध्ययनरत अनुसूचित जाति एवं जनजाति की छात्राओं की शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं की प्रकृति एवं स्वरूप को ज्ञात करना।
2. इन छात्राओं के घर के वातावरण एवं विद्यालय के वातावरण तथा सहपाठियों और समवयस्कों के साथ समायोजन की समस्या का विश्लेषण करना।

3. प्रथम पीढ़ी की एवं द्वितीय पीढ़ी की छात्राओं की समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. छात्राओं द्वारा उजागर की गई समस्याओं के उपयुक्त समाधान हेतु शिक्षा योजनाकारों आदि को सुझाव देना।

गौण उद्देश्य :

प्रस्तुत शोध अध्ययन के गौण उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. दिल्ली स्थित माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं में अध्ययनरत अनुसूचित जाति एवं जनजाति की छात्राओं के विद्यालय छोड़ने एवं बीच सत्र में ही विद्यालय त्यागने के कारणों का अध्ययन करना।
2. इन छात्राओं में प्रथम पेढ़ी एवं द्वितीय पीढ़ी की छात्राओं की शिक्षा उपलब्धि में अंतर पता करना।
3. इन छात्राओं के प्रति सहपाठियों की अभिवृति का अध्ययन करना।
4. इन छात्राओं के माता-पिता की आर्थिक स्थिति का शिक्षा पर पड़ रहे दुष्प्रभाव का अध्ययन करना।
5. इन छात्राओं के अशिक्षित माता-पिताओं का शिक्षा पर पड़ रहे प्रतिकूल प्रभाव का अध्ययन करना।
6. इन छात्राओं के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
7. इन छात्राओं द्वारा प्रतिकूल पारिवारिक परिस्थितियों एवं विद्यालय परिसर के प्रतिकूल वातावरण के साथ सामंजस्य बैठ पाने की समस्या का अध्ययन करना।

अध्ययन का परिसीमांकन

प्रस्तुत शोध-अध्ययन को समय-सीमा और सीमित उपलब्ध साधनों के परिप्रेक्ष्य में अध्ययनाधीन समस्याओं के स्वरूप को रखते हुए निम्नांकित रूप से सीमांकित किया गया :

1. इस अध्ययन को मात्र दिल्ली स्थित माधयमिक एवं उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों तक ही सीमित रखा गया।
2. इस अध्ययन में दिल्ली के कुछ चुनिन्दा माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्राओं, उनके अभिभावकों एवं इन विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों को ही सम्मिलित किया गया है।

3. छात्राओं की मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याओं का पता लगाने के लिए मुख्य रूप से डा. के.पी.सिन्हा एवं आर.पी.सिंह द्वारा तथा ज्ञानेन्द्र पी.श्रीवास्तव द्वारा तैयार की गई मानकीकृत प्रश्नावलियों का उपयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त तीन स्वनिर्मित साक्षात्कार-प्रश्नावलियों का उपयोग क्रमशः छात्राओं, उनके अभिभावकों और उनके शिक्षकों से तत्संबंधी विस्तृत जानकारी एकत्र करने हेतु उपयोग में लाई गई है।
4. इस प्रयोजनार्थ केवल ऐसे विद्यालयों का चयन किया गया है जो अनुसूचित जाति-बहुल बस्तियों में स्थित हैं।
5. प्रस्तुत शोध अध्ययन में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की छात्राओं को सम्मिलित किया गया है। वस्तुतः इन स्कूलों में अनुसूचित जाति की छात्राओं की संख्या अधिक है और अनुसूचित जनजातियों की बालिकाओं की संख्या नगण्य है। दिल्ली राजधानी क्षेत्र में अनुसूचित जनजातियों के जो परिवार यहां रह रहे हैं, वे भारत के जनजाति-बहुल प्रदेशों से आए हैं। इस दृष्टि से प्रस्तुत शोध अधययन के न्यादर्श में अधिकांशतः अनुसूचित जाति की बालिकाएं ही आ पाई हैं तथापि अध्ययनाधीन विद्यालयों में जो अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राएं अध्ययनरत हैं, उनको न्यादर्श में बिना पृथक वर्गीकरण के सम्मिलित कर लिया गया है।

संबंधित साहित्य

इस विषय से संबंधित साहित्य को तीन भागों में बांटा गया है :

1. माध्यमिक एचं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर छात्र/छात्राओं के शिक्षित पीढ़ी क्रम के संदर्भ में हुए अनुभविक शोध-अध्ययन :

शिक्षित पीढ़ीक्रम में हुए आनुभाविक शोध-अधययन :

भारत एवं विदेशों में शिक्षित पीढ़ीक्रम अर्थात प्रथम एवं प्रथमोत्तर शिक्षित पीढ़ी के संदर्भ में बहुत ही कम अध्ययन हुए हैं और जो भी शोध अध्ययन किए गए हैं सीमित प्रतिदर्श तथा सीमित चरों तक ही सीमित रखे गए हैं।

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा शिक्षित पीढ़ी के संदर्भ में एक अन्य अध्ययन किया गया जो कि 5 वर्ष के कक्षा 1 से 5 में अध्ययनरत 60 बच्चों (30 बच्चे अशिक्षित माता-पिता के तथा 30 बच्चे शिक्षित माता-पिता) के प्रतिदर्श पर आधारित था। यह अध्ययन इस परिकल्पना पर आधारित था कि जो माता-पिता शिक्षा से वंचित हैं उनके बच्चों की उपलब्धि, नैतिक

समस्याओं और सामाजिक उत्तरदायित्व पर विपरीत प्रभाव डालती है। अध्ययन से प्राप्त परिणामों से उक्त परिकल्पना की पुष्टि हुई।

मलिक (1984) ने प्रथम पीढ़ी विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर, शैक्षिक उपलब्धि तथा समायोजन के संबंध में अध्ययन किया। प्रस्तुत अध्ययन हेतु समान सामाजिक-आर्थिक स्तर एवं बुद्धि के 290 शहरी (150 लड़के व 140 लड़कियां) तथा 240 ग्रामीण (140 लड़के व 100 लड़कियां) का प्रतिदर्श लिया। बुद्धि के मापन हेतु, समायोजन के मापन हेतु बैल समायोजन मापनी परीक्षणों का प्रयोग किया। शैक्षिक उपलब्धि के निमित्त हाई स्कूल परीक्षा परिणामों का प्रयोग किया। अध्ययन के परिणामस्वरूप पाया गया कि प्रथम पीढ़ी विद्यार्थियों की तुलना में प्रथमोत्तर पीढ़ी के विद्यार्थी श्रेष्ठ शैक्षिक उपलब्धि के थे।

कोठारी (1984) ने प्रथम एवं द्वितीय शिक्षित पीढ़ी के विद्यार्थियों के नैतिक प्रत्ययों के विकास का अध्ययन किया। उक्त अध्ययन हेतु कक्षा सात में अध्ययनरत 300 विद्यार्थियों का प्रतिदर्श लिया। परिणामों के विश्लेषणोपरान्त पाया गया कि बच्चों के नैतिक प्रत्ययों के विकास पर माता-पिता की शिक्षा का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

2. सामाजिक-आर्थिक स्तर के क्षेत्र में हुए शोध अध्ययन

सामाजिक-आर्थिक स्तर के क्षेत्र में कृत शोधों के सार की रूपरेखा का प्रस्तुतीकरण उक्त क्षेत्रों की गहनता के स्पष्टीकरण हेतु शोधार्थी के लिए अति महत्वपूर्ण है, क्योंकि सामाजिक-आर्थिक स्तर व्यक्ति की संपन्नता का द्योतक है, जो उसकी बौद्धिक योग्यता के साथ-साथ प्रत्येक क्षेत्र में उसकी उपलब्धि का भी परिचायक है। विगत वर्षों में सामाजिक-आर्थिक स्तर के अन्य चरों के साथ संबंध को अन्वेषित किया गया। सामाजिक-आर्थिक स्तर तथा बुद्धि के क्षेत्र में माथुर (1983) व चोपड़ा (1964) ने पृथक-पृथक कृत अध्ययनों में बुद्धि को सामाजिक-आर्थिक स्तर के साथ धनात्मक रूप से सहसंबंधित प्राप्त किया। माथुर (1963) के शोध में उक्त संबंध अति उच्च प्राप्त हुआ, जिसके आधार पर शोधार्थी का कथन है कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के विद्यार्थी तुलनात्मक रूप से उच्च बुद्धिलब्धि वाले तथा प्रतिभाशाली होते हैं।

शैक्षिक उपलब्धि तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर के संबंध में अध्ययन का विशाल भंडार यथा– शिवप्पा (1980), होम चौधरी (1980), अरुणा (1981), राजपूत (1984), सिंह (1984), पटेल (1986), मेहरोत्रा (1986), कपूर (1987), गुप्ता (1987) एवं अग्रवाल तनुजा (1998) आदि उपलब्ध हैं। उक्त समस्त शोध परिणामों के अनुसार

शैक्षिक उपलब्धि तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर एक दूसरे से धनात्मक रूप से संबंधित ही नहीं हैं वरन् सामाजिक-आर्थिक स्तर शैक्षिक उपलब्धि का सवोत्तम पूर्वकथनात्मक चर है।

3. अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्र/छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन के संदर्भ में हुए अनुभविक शोध अध्ययन

विशेष रूप से कुछ अध्ययन अनुसूचित जाति के छात्रों के सामने आने वाली समस्याओं को जानने हेतु किए गए। यथा, आदिशेषैय्या एवं रामानाथन (1979) ने तमिलनाडु में शोध अध्ययन किया और निष्कर्ष स्वरूप पाया कि–

1. अनुसूचित जाति के संदर्भ में प्राथमिक स्तर पर शिक्षा में अपव्यय बहुत अधिक था।
2. अधिकांश अनुसूचित जाति के विद्यार्थी निरक्षर परिवारों से आते थे (67.22 प्रतिशत) तथा इनकी आर्थिक दशा अत्यंत निम्न स्तर की थी।
3. वे विद्यालय में चल रहे पाठ्यक्रम को समझने में कठिनाई का अनुभव करते थे।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित शोधकर्ताओं ने भी इस विषय पर कार्य किया

गांग्रेड (1974), सिंह (1979), सिंह, पाण्डे, दुबे एवं अन्य (1979), पिम्पले (1979), चिटनिस (1979), दुबे (1979), वागेश्वरी (1972), शाह एवं ठाकरे (1979), गोयल (1972), सिंह एवं दुबे (1979), देसाई व पानडोर (1979), रथ एवं मिश्रा (1979), अरोड़ा (1991), नायर आदि (1992), एथिराज (1993), टंडन (1995), देवेन्द्र (1995), जैन और भटनागर (1997), विश्वनाथ (1979), अयमपिल्लई (1998), पंड्या (1998), श्रीधर (1999), बंखेड़े श्री (1999), प्रो. नीरजा शुक्ला (2000-01)

वस्तुस्थिति तो यह है कि बालिका शिक्षा के प्रति मनोवृत्ति को प्रमुख रूप से दर्शाने वाले अध्ययन बहुत ही कम हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि अनुसूचित जाति के लड़कों की शिक्षा से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर तो कई अध्ययनकर्ताओं ने ध्यान केन्द्रित किया है किन्तु अनुसूचित जाति की बालिकाओं की शिक्षा के संबंध में अध्ययनों का अभाव है। इसी प्रकार विभिन्न स्तरों पर अध्ययनरत अनुसूचित जातियों और गैर-अनुसूचित जातियों की लड़कियों के संबंध में तुलनात्मक अध्ययन भी बहुत कम हैं।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध का न्यादर्श दिल्ली राजधानी क्षेत्र के चुनिन्दा माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालय की बालिकाएं थीं। न्यादर्श में राजकीय/शासकीय सर्वोदय विद्यालय, केन्द्रीय

विद्यालय, शासकीय सहायता प्राप्त विद्यालय, निजी विद्यालय को सम्मिलित किया है। शोध अध्ययन हेतु सौद्देश्यपूर्ण न्यादर्श का चयन किया गया है। कुल 500 न्यादर्शी छात्राएं, अभिभावकों एवं शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है। इसका विवरण नीचे दिया गया है।

सम्पूर्ण न्यादर्श सारणी

क्र. सं.	विद्यालय/न्यादर्श	संख्या	कुल
1	छात्राएं	500	500
2.	अभिभावक	100	100
3.	शिक्षक	100	100
4.	कुल	700	700

प्रस्तुत शोध हेतु न्यादर्श के रूप में कुल 500 छात्राएं, अभिभावकों और शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है जैसा कि उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है। इनकी समस्याओं एवं विचारों को प्रश्नावली एवं साक्षात्कार द्वारा प्राप्त करके संकलित किया गया है।

अध्ययन का अभिकल्प

प्रस्तुत शोधकार्य अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर सर्वेक्षण-विधि द्वारा किया गया और सोद्देश्य न्यादर्श के रूप में 500 छात्राओं, 100 अभिभावकों और 100 शिक्षकों का चयन किया गया है। उनसे साक्षात्कार-प्रश्नावली के माध्यम से अपेक्षित जानकारी एकत्र की गई है। छात्राओं से प्राप्त प्रदत्तों का गुणात्मक एवं संख्यात्मक दोनों विधियों से विश्लेषण किया गया है। अभिभावकों एवं शिक्षकों से प्राप्त प्रदत्तों का गुणात्मक विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन हेतु न्यादर्श के रूप में जिन दिल्ली स्थित माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का चयन किया गया है। वे पांच प्रकार ये हैं :

1. शासकीय माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, दिल्ली
2. सर्वोदय माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, दिल्ली
3. शासकीय सहायता-प्राप्त माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, दिल्ली
4. केन्द्रीय विद्यालय संगठन द्वारा चलाये जा रहे केन्द्रीय विद्यालय, दिल्ली
5. गैर-सरकारी निजी शिक्षा संस्थाएं, दिल्ली

अध्ययन उपकरण

प्रस्तुत शोध अध्ययन में निम्नलिखित शोध उपकरणों का प्रयोग किया गया है :

प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए (उपलब्ध मानकीकृत प्रश्नावली) एवं स्वनिर्मित प्रश्नावली का उपयोग किया गया है। इन प्रश्नावलियों को विभिन्न विद्यालयों की छात्राओं, अभिभावकों एवं शिक्षकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया तथा उनके उत्तरों सहित प्रश्नावली (प्रदत्त) उनसे एकत्रित की गई। तत्पश्चात सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग कर उनका मूल्यांकन किया गया।

1. ''अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राओं की शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का अध्ययन करना।'' – समस्या का अध्ययन करने के लिए डॉ. ए.के.पी.सिन्हा एवं आर.पी.सिंह द्वारा निर्मित (शैक्षिक, सामाजिक, भावात्मक, समायोजन पर आधारित) समायोजन प्रश्नावली का प्रयोग किया गया।
2. ''अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राओं के सामाजिक, आर्थिक स्तर मापन।'' इसके लिए ज्ञानेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव द्वारा निर्मित सामाजिक, आर्थिक स्तर मापनी का प्रयोग किया गया।
3. अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राओं की समस्याओं का गहराई से अध्ययन करने तथा प्रथम पीढ़ी तथा द्वितीय पीढ़ी की समस्याओं की जानकारी एकत्र करने तथा इन समस्याओं के संभावित निराकरण ढूंढने के लिए साक्षात्कार/प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। प्रदत्त किये गये और उनका गुणात्मक एवं संख्यात्मक मूल्यांकन किया गया।
4. अभिभावकों के लिए प्रश्नावली/समस्याओं की जानकारी एकत्र करने तथा इन समस्याओं के संभावित निराकरण ढूंढने के लिए स्वनिर्मित साक्षात्कार/प्रश्नावली का प्रयोग किया गया तथा उनके उत्तरों सहित प्रदत्त एकत्रित किए गए और उनका गुणात्मक मूल्यांकन किया गया।
5. **शिक्षकों के लिए प्रश्नावली**

   साक्षात्कार–प्रश्नावली का निर्माण किया गया तथा उनके उत्तरों सहित प्रदत्त एकत्रित किए गए और उनका गुणात्मक मूल्यांकन किया गया।

परीक्षणों का वितरण :

सौहार्द संबंध स्थापन तथा परीक्षण (प्रश्नावलियों) का वितरण

परीक्षणों का वितरण शोधार्थी द्वारा विभिन्न चरणों में किया गया है। प्रथम चरण में

छात्राओं को मानकीकृत परीक्षण दिये गये तथा बाद में साक्षात्कार लिया गया। द्वितीय चरण में शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित छात्रा साक्षात्कार प्रश्नावली को दिया। उसी क्रम में अभिभावकों से मिलकर साक्षात्कार प्रश्नावली को प्रदान किया गया और अंत में शिक्षकों से मिलकर शिक्षकों के लिए शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित प्रश्नावली शिक्षकों को प्रदान किया गया और प्रदत्त एकत्रित किये गये।

प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु सांख्यिकीय प्रविधियां

वर्तमान शोध अध्ययन में प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु वर्णानात्मक एवं अनुमानात्मक सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया गया–

1. **मध्यमान :**

   विभिन्न समूहों का औसत स्तर वर्णित करने तथा विभिन्न अध्ययनरत कतिपय चरों के परिप्रेक्ष्य में प्राप्त वितरणों की ककुदत्ता एवं विषमता के मापन हेतु केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के रूप में तथा विभिन्न समूहों की तुलना करने हेतु मध्यमान मान की गणना की गई।

2. **मध्यांक :**

   प्राप्तांकों के वितरण की प्रकृति का अध्ययन करने हेतु तथा ककुदत्ता व विषमता मूल्य की गणना करने हेतु भी मध्यांक ज्ञात किया गया।

3. **मानक-विचलन :**

   प्राप्तांकों में विचलनशीलता का अध्ययन करने हेतु तथा अन्य गणनाएं यथा– सह-संबंध गुणांक व मानक त्रुटि के मापन हेतु मानक विचलन ज्ञात किया गया।

4. **पाई चित्र :**

   विभिन्न छात्राओं, शिक्षकों, अभिभावकों और विद्यालयों के प्रकारों के चित्रों की रचना 'पाई चित्र' द्वारा दर्शायी है।

5. **पीयर्सन-सह-संबंध गुणांक :**

   विभिन्न मनोसामाजिक गुणांक की गणना करने हेतु सह-संबंध गुणांक परिगणित किया गया।

6. **निर्धारण गुणांक :**

   आश्रित घर में स्वतंत्र चरों द्वारा उत्पन्न विचलनशीलता के अध्ययन हेतु परिगणित किया गया।

अनुमानात्मक सांख्यिकीय प्रविधियां

विविध परीक्षण हेतु अग्रांकित अनुमानात्मक सांख्यिकीय प्रविधियां हैं–

1. टी-अनुपात

दो समूहों में निहित अंतर की सार्थकता के परीक्षण हेतु टी-अनुपात की गणना की गई।

विभिन्न विद्यालयों की छात्राओं से शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित प्रश्नावलियों के उत्तरों के रूप में प्राप्त प्रदत्तों का गुणात्मक विश्लेषण

छात्राओं से प्राप्त प्रदत्तों से मुख्य समस्याएं निम्नलिखित उभर कर आयी हैं :

90 प्रतिशत छात्राओं ने बताया–

– पारिवारिक वित्तीय संकट

– परिवार का बड़ा आकार

– उपयुक्त अध्ययन स्थल का अभाव

70 प्रतिशत छात्राओं ने बताया–

– अभिभावकों का शिक्षित न होना तथा उचित मार्गदर्शन न मिलना

42 प्रतिशत छात्राओं ने निम्न समस्या को बताया–

– भाषा, विचारों की अभिव्यक्ति का प्रभावपूर्ण न होना

– गणित, अंग्रेजी और विज्ञान जैसे कठिन विषयों में कमजोर होना

35 प्रतिशत छात्राओं न पिता द्वारा नशीले पदार्थों के सेवन की समस्या को बताया

32 प्रतिशत छात्राओं ने छात्रवृत्ति संबंधी समस्या को बताया

26 प्रतिशत छात्राओं ने शिक्षक के उदासीन रवैये की समस्या को बताया

24 प्रतिशत छात्राओं ने सहपाठी छात्राओं का व्यवहार उचित न होने की समस्या को बताया।

अभिभावकों से प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण

1. 75 प्रतिशत अभिभावकों के अनुसार छात्राओं की परिवारिक वित्तीय संकट को एक मुख्य समस्या बताया।
2. इससे अध्ययन सामग्री का अभाव – उपयुक्त अध्ययन स्थान में अभाव को समस्या बताया।

3. 68 प्रतिशत अभिभावकों ने परिवार में अशिक्षित होने, उचित मार्गदर्शन के अभाव तथा उनकी बेरोजगारी की समस्या को बताया।
4. 36 प्रतिशत अभिभावकों ने छात्रा की भाषा समस्या तथा अभिव्यक्ति को दोषी पाया तथा इससे छात्रा के विषय ज्ञान में अवरोध होता है। और अंग्रेजी और गणित को एक विशेष समस्या बताया।
5. 25 प्रतिशत अभिभावकों ने छात्रा के पिता के नशीले पदार्थों के सेवन को समस्या बताया और इसका प्रभाव छात्रा की शैक्षिक उपलब्धि पर सीधाा पड़ना बताया।

शिक्षकों से प्राप्त प्रदत्तों से निम्न समस्याएं उभर कर आई हैं

1. 80 प्रतिशत शिक्षकों ने छात्रों के पारिवरिक स्तर, अध्ययन की उचित व्यवस्था न होना, तथा आसपास के उपयुक्त वातावरण की कमी को दर्शाया।
2. 70 प्रतिशत शिक्षकों ने माता-पिता का अशिक्षित होना, इसका कुप्रभाव बच्चे की शिक्षा पर सीधा पड़ा है, ऐसा बताया।
3. 40 प्रतिशत शिक्षकों ने छात्रों की भाषा संबंधी, छात्रों की अभिव्यक्ति संबंधी संकोची स्वभाव को बताया, जिसका प्रभाव उनकी शिक्षा, शैक्षिक समायोजन और शिक्षा उपलब्धि पर पड़ता है।
4. 30 प्रतिशत शिक्षकों ने छात्रा के पिता को नशीले पदार्थों का सेवन करना बताया और उसके कुप्रभवों को शिक्षा पर दर्शाया।
5. 20 प्रतिशत शिक्षकों ने छात्रा के अध्ययन में रुचि न लेने की बात की। 15 प्रतिशत शिक्षकों ने छात्रों के प्रति कुछ शिक्षकों के उदासीन रवैये को बताया।

परिणाम

1. माध्यमिक स्तर की अपेक्षा उच्चत्तर माध्यमिक स्तर की छात्रायें भावनात्मक रूप से अधिक समायोजित हैं।
2. आवासीय विद्यालयों की छात्राएं शैक्षिक रूप से अन्य विद्यालय की छात्राओं की तुलना में अधिक समायोजित हैं।
3. उच्च शिक्षित अभिभावकों की छात्राएं/बच्चों एवं अल्पशिक्षित अभिभावकों की छात्राएं दोनों में सामाजिक सामंजस्य में भिन्नता है।
4. उच्च शिक्षित एवं अल्पशिक्षित अभिभावकों की छात्राओं/बच्चों में तुलनात्मक रूप से भिन्नता है। अल्पशिक्षित और उच्च शिक्षित छात्राओं के शैक्षिक सामंजस्य में अंतर है।

5. व्यवसाय के आधार पर बेरोजगार एवं प्रशासकीय अधिकारियों के अभिभावकों के बच्चों/छात्राओं में सामाजिक समायोजन में भिन्नता है।
6. शैक्षिक समायोजन कुल समायोजन में प्रथम पीढ़ी तथा प्रथमोत्तर पेढ़ी में सार्थक भिन्नता है।
7. निम्नतम आमदनी तथा उच्चतम आमदनी वाले व्यक्ति की छात्राओं के सामाजिक तथा कुल समायोजन में अंतर है।
8. समाचार पत्र के अध्ययन में पाया कि जो लोग रोज अखबार लेते हैं, जो कभी नहीं लेते हैं उनमें समायोजन में सार्थक अंतर है।
9. मैगजीन तथा पत्रिकाएं जो पढ़ते हैं तथा जो कभी नहीं पढ़ते हैं, उनके भावनात्मक समायोजन एवं सामाजिक समायोजन में सार्थक भिन्नता है।
10. इस प्रकार सामाजिक, आर्थिक स्तर का कुल समायोजन में सार्थक अंतर है।

अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राओं की समस्याएं एवं शोधार्थी द्वारा सुझाये गये उनके संभावित समाधान

शोधार्थी ने अनुसूचित जाति/जनजाति की न्यादर्शी छात्राओं, उनके अभिभावकों और उनके शिक्षकों से जो प्रदत्त प्राप्त हुए, उनका गंभीरतापूर्वक अध्ययन और विश्लेषण किया है और वह इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि वह मुख्य रूप से इन छात्राओं की निम्नलिखित समस्याएं हैं :

1. अनुसूचित जाति/जनजाति की अधिकांश छात्राओं के माता-पिता और अभिभावक निरक्षर अथवा अशिक्षित हैं, वे परंपरागत रूढ़िवादिता से ग्रस्त हैं। वे बालिका-शिक्षा के पक्ष में नहीं होते हैं।
2. उनके माता-पिता की आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ नहीं होती है और वे बालिका को समय पर पाठ्य-पुस्तकें, लेखन-सामग्री और वर्दी नहीं जुटा पाते हैं। वे बालिकाओं को अन्य खर्चों के लिए भी पैसे नहीं दे पाते।
3. इस वर्ग की छात्राओं के माता-पिता अपनी बेटियों को घर से दूरी पर स्थित विद्यालयों में भेजना नहीं चाहते, वे यह भी पसंद नहीं करते हैं कि उनकी लड़कियों का मेल-जोल लड़कों के साथ अधिक बढ़े।
4. उनका यह विचार होता है कि लड़कियों की शिक्षा उतनी लाभप्रद नहीं होती, जितना कि लड़कों की होती है। इसलिए वे लड़कियों की शिक्षा पर अधिक खर्च नहीं करते हैं।

5. अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं को घर में अध्ययन के लिए अनुकूल वातावरण नहीं मिलता है और उन्हें कुर्सी-मेज और पृथक कमरे आदि की अनिवार्य सुविधाएं भी नहीं मिल पाती हैं।

6. माता-पिता के अशिक्षित होने के कारण इन बालिकाओं का गृह-कार्य पूर्ण नहीं हो पाता है और माता-पिता आर्थिक तंगी के कारण घर पर ट्यूशन लगाने में भी असमर्थ होते हैं।

7. विद्यालय में कुछ अध्यापिकाएं इस वर्ग की छात्राओं की उपेक्षा करती हैं, जिससे ये छात्राएं हतोत्साहित होती हैं और पढ़ने में उनकी रुचि कम हो जाती है।

8. इस वर्ग की छात्राओं के परिवार प्रायः गंदी बस्तियों में रहते हैं और वहां का वातावरण ठीक न होने की वजह से कई रोगों के शिकार हो जाते हैं। परिवार में बीमारी होने से बालिका की शिक्षा प्रभावित होती है। ये छात्राएं कुपोषण से भी ग्रस्त होती हैं।

9. इस वर्ग की अधिकांश छात्राएं अध्यापकों से स्पष्टीकरण पूछने अथवा उनके प्रश्नों के उत्तर देने में संकोच करती हैं क्योंकि उनके परिवार का शैक्षिक स्तर निम्न होता है।

10. इस वर्ग की कुछ छात्राओं ने इस समस्या की ओर भी संकेत किया है कि उनके पिता नशा करते हैं और अपनी दिनभर की मजदूरी उसमें बरबाद कर देते हैं। इससे घर का वातावरण भी बिगड़ता है और परिवार में तनाव भी बढ़ता है।

11. इस वर्ग की छात्राओं के साथ सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भूमिका देने के मामले में भी भेदभाव बरता जाता है।

12. इस वर्ग की कुछ छात्राओं ने अंग्रेजी भाषा, गणित और विज्ञान जैसे कठिन विषयों में कमजोर होने की बात भी स्वीकारी है, जिसके कारण छात्राएं पढ़ाई से जी चुराती हैं।

13. इस वर्ग की छात्राओं ने शैक्षिक और व्यावसायिक मार्गदर्शन के अभाव की ओर भी संकेत किया है।

14. कुछ विद्यालयों में मूलभूत सुविधाओं के अभाव की शिकायत भी इन्होंने की है।

15. इस वर्ग की छात्राओं ने विद्यालय में तकनीकी, व्यावसायिक और कंप्यूटर जैसे पाठ्यक्रमों के न होने की भी शिकायत की है।

समाधान

अनुसूचित जाति/जनजाति की बालिकाओं के माता–पिता को परंपरागत रूढ़िवादिता से मुक्त करने के लिए उनको बालिका और नारी महत्व की शिक्षा का महत्व समझाया जाये और इसके लिए शिक्षकों और माता–पिता की बैठकें आयोजित की जा सकती हैं और इस आशय के नाटक आदि कार्यक्रम रेडियो और टेलिविजन से प्रसारित किये जा सकते हैं, जिससे उनकी रूढ़िवादिता मिट जाये।

- इन वर्गों के परिवारों की आर्थिक दशा सुधारने के लिए सरकार को ऐसी योजनाएं आरंभ करनी चाहिएं, जिससे उनके परंपरागत पेशों में आधुनिकतम सुधार आ जाये और उनकी आय भी बढ़ जाये और उनके पेशों का स्तर भी उच्च हो जाये।
- इन वर्गों की बहुतायत वाली बस्तियों में विद्यालय प्राथमिकता के आधार पर स्थापित किये जायें।
- इस वर्ग के पुरुष और महिलाओं को विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से यह समझाया जाये कि बेटों और बेटियों के बीच भेदभाव नहीं करना चाहिए, जिससे लड़कियों के मन में समता की भावना पैदा हो जाये और वे अपने को पुरुषों के समान ही योग्य और समर्थ समझने लगें। उनमें ऐसी भावना पनपने पर वे लड़कियों की शिक्षा पर भी लड़कों के समान ही खर्च कर सकेंगे।
- इस वर्ग की बालिकाओं के प्रति शिक्षकों का रवैया अनुकूल बनाने के लिए उन्हें सेवा में रहते हुए ही प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, जिससे उनका रवैया इन बालिकाओं के प्रति सहजपूर्ण और सहानुभूतिपूर्ण हो जाये। इससे बालिकाओं का शिक्षा का स्तर उच्च होने में मदद मिलेगी।
- इस वर्ग की छात्राओं की कठिन विषयों अर्थात अंग्रेजी भाषा, गणित और विज्ञान को समझने की समस्या को दूर करने के लिए विद्यालय में अतिरिक्त कक्षाओं की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- इस वर्ग की छात्राओं के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए विद्यालय में स्वास्थ्य केन्द्र भी होने चाहिए।
- इस वर्ग की छात्राओं को सौहार्दपूर्ण ढंग से यह समझाया जाना चाहिए कि वे कक्षा में अस्पष्ट बातों को समझने के लिए शिक्षकों से प्रश्न पूछें और शिक्षकों के प्रश्नों के उत्तर भी बेझिझक होकर दें। इससे इन बालिकाओं का शर्मिलापन और संकोचीपन दूर हो सकेगा।

- इस वर्ग की छात्राओं को विद्यालयों में पाठ्येतर और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित और पुरुष्कृत किया जाए।
- इन वर्गों की बहुतायत वाली बस्तियों में नशाबंदी शिविर बार-बार लगाए जाएं, जिससे इन लोगों की शराब पीने की आदत छूट जाये और उनके घरों का वातावरण सुधर जाये और परिवार में इस कारण से होनेवाला तनाव भी समाप्त हो जाए।
- विद्यालयों में इस वर्ग की छात्राओं को शैक्षिक और व्यावसायिक मार्गदर्शन देने के लिए मार्गदर्शन केन्द्र अनिवार्य रूप से खोले जाने चाहिए जिनसे इन छात्राओं की शैक्षिक समस्याओं का भी समाधान हो सकेगा और उन्हें भावी व्यवसाय के बारे में भी मार्गदर्शन मिल सकेगा।
- विद्यालयों में रेडियो, टेलिविजन और यदि हो सके तो कंप्यूटर और इंटरनेट की सुविधा भी उपलब्ध कराई जाये, जिससे इनमें रुचि रखने वाली छात्राएं लाभान्वित हो सकें।
- विद्यालयों में शिक्षिकाएं पूर्ण संख्या में होनी चाहिए, जिससे बालिकाओं की शिक्षा सुचारु रूप से चलती रहे।
- इस वर्ग की छात्राओं के माता-पिता तथा अभिभावकों को छोटे परिवार की महत्ता समझाई जाये और उन्हें परिवार नियोजन का परामर्श दिया जाये।
- इस वर्ग की छात्राओं के कुपोषण के निवारण के लिए इन्हें विद्यालय में पौष्टिक आहार देने की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- इन छात्राओं को मिलने वाली छात्रवृत्ति की राशि बढ़ाई जाये क्योंकि इस समय मिलने वाली राशि पर्याप्त नहीं होती है।
- आवासीय विद्यालय अधिक संख्या में खोले जाएं जिससे इस वर्ग की छात्राएं उनमें प्रवेश लेकर भलीभांति अपनी शिक्षा पूरी कर सकें।
- सरकार से मिलने वाली नि:शुल्क पाठ्य-पुस्तक, लेखन-सामग्री और वर्दी आदि की सुविधाएं ठीक समय पर इन तक पहुंच जानी चाहिए।
- विद्यालय में समृद्ध पुस्तकालयों की भी व्यवस्था होनी चाहिए, जिससे बालिकाएं वहां जाकर अध्ययन कर सकें।
- समाज कल्याण मंत्रालय द्वारा ऐसी योजनाएं आरंभ की जाएं जिनके अंतर्गत अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राओं को उच्च शिक्षा, तकनीकी एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए वित्तीय सहायता प्राप्त हो और वे अपना ज्ञान बढ़ाने के लिए देश-विदेश का भ्रमण भी कर सकें।

– उच्च अंक प्राप्त करने वाली इस वर्ग की छात्राओं को पुरष्कृत किया जाये और अन्य प्रोत्साहन दिये जायें जिससे बालिकाओं में उत्तम अंक प्राप्त करने के लिए उनमें परस्पर प्रतिस्पर्धा हो और वे गंभीरतापूर्वक अध्ययन करें।

संदर्भ

अम्बेडकर, डा. बाबा साहेब के ''बहिष्कृत भारत'' मराठी पत्रिका में प्रकाशित लेखों का ''*अन्याय कोई परंपरा नहीं*'' शीर्षक से अनुदित संस्करण (1998), श्योराज सिंह द्वारा अनूदित, संकलित एवं संपादित, संगीता प्रकाशन, दिल्ली–110032

अग्रवाल, तनुजा (1998) : ''*विशिष्ट समूहों की शैक्षिक उपलब्धि के मनोसामाजिक, संज्ञानात्मक तथा असंज्ञानात्मक कारक – एक विश्लेषणात्मक अधययन*'' पी–एच.डी. शोध प्रबंध, दयाल बाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, दयाल बाग, आगरा।

चमन लाल (2001) : ''*भारतीय साहित्य में दलित एवं स्त्री*'', सारांश प्रकाशन, दिल्ली–हैदराबाद।

जगजीवन राम (2001) : ''*भारत में जातिवाद और हरिजन समस्या*'' राजपाल पब्लिकेशन, दिल्ली।

मैथ्यू, पी.डी. (2001) : ''*अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग*'', भारतीय सामाजिक संस्थान, नई दिल्ली–110003

कर्दम, जयप्रकाश (1999) : ''*जाति एक विमर्श*'', मुहिम प्रकाशन, हापुड़, उत्तर प्रदेश–245101

मल, पूरन (1999) : ''*अस्पृश्यता एवं दलित चेतना*'', पोइएन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, राजस्थान।

नसरीन, तसलीमा (1998) : ''*औरत के हक में*'', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–110002

फ्रेरे, पाओलो, अनुवादक जबरीमल्ल पारख (1977) : ''*उत्पीड़ितों का शिक्षा शास्त्र*'', ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन, नई दिल्ली–110002

जोयिस, एम.आर., अनुवादक कृष्ण गोपाल रस्तोगी (1997) : ''*मानव अधिकार तथा भारतीय मूल्य*'', राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

रजा, मुनिस, अनुवादक सुजाता राय (1997) : ''*शिक्षा के विकास के सामाजिक आयाम*'', ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन, नई दिल्ली–110002

पालीवाल, कृष्ण दत्त (1996) : ''*डॉ. अम्बेडकर और समाज व्यवस्था*'' किताब घर, नई दिल्ली–110002

मेघवाल, कुसुम (1994) : ''*भारतीय नारी के उद्धारक डॉ. बी.आर.अम्बेडकर*'', राजस्थान दलित साहित्य अकादमी, उदयपुर–313001

राज, किशोर (1994) : ''*स्त्री के लिए जगह*'', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–110002

मैथ्यू, पी.डी. एवं बक्शी, पी.एम. (1993) : ''*महिलाएं व संविधान*'', भारतीय सामाजिक संस्थान, नई दिल्ली

जाटव, डी.आर. (1990) : ''*डा. बी.आर. अम्बेडकर का समाज-दर्शन*'', समता साहित्य भवन, जयपुर (राज.)

एम्बेस्ट, एन.के. (2001): ''ट्राइबल एजुकेशन : प्राब्लम एंड इश्यू'' वैंकटेश प्रकाश, दिल्ली

एन.आई.ई. पी.ए. (2001): फोकस सेकण्डरी एजुकेशन : ए रिपोर्ट आफ द नेशनल कान्फ्रेंस आन सेकण्डरी एजुकेशन हैल्ड आन 14 टू 16 फरवरी, 2001, एट नई दिल्ली

एन.सी.ई.आर.टी (2001): सिक्स्थ सर्वे आफ एजुकेशनल रिसर्च, नई दिल्ली

चटर्जी, एस.के. (2000): एजुकेशनल डवलपमेंट आफ शिड्यूल कास्ट, लूकिंग अहैड'', ग्यान पब्लिशिंग हाउस, न्यू दिल्ली-110002

नैयर, उशा (2000) ''एजुकेशनल आफ गर्ल इन इंडिया, प्रोग्रेस एंड प्रॉसपैक्ट्स'', एन.सी.ई.आर. टी., नई दिल्ली

माइकल, एस.एम. (एड.) (1999): ''दलित इन मॉडर्न इंडिया : विजन एंड वैल्यूज'', सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली

सेरवानी, अजीम (1998) : ''द गर्ल चाइल्ड इन क्राइस्ट'', इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट, नई दिल्ली

अटल, योगेस (1997): ''प्रास्पैक्टिव आन एजुकेशन द पुअर' अभिनव पब्लिकेशन, नई दिल्ली

घोष, जी.के., घोष शुक्ला (1997): ''दलित वूमन'', ए.पी.एच. पब्लिशिंग कार्पोरेशन, नई दिल्ली-110002

जगदन्द, पी.जी. (1995): ''दलित वूमन इश्यू एंड पर्सपैक्टिव'', ग्यान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली-110002

काबरा, ललित (1991): ''शिड्यूल्ड कास्ट गर्ल, एजुकेशनल बैकवर्डनैश एंड पर्सपैक्टिव'', मित्तल पब्लिकेशन, नई दिल्ली-110059

शिन्हा, एस. (1991): ''प्राब्लम्स आफ द गर्ल चाइल्ड-सम इश्यू : ए रिपोर्ट', प्रोग्रेसिव एजुकेशनल हेरार्ल्ड, 23,236

प्रेमी, कुसुम के. (1989): ''शिड्यूल कास्ट्स एंड शिड्यूल्ड ट्राइब्स इन इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग इंस्टीट्यूटस; ए स्टडी आफ फाइव स्टेट्स'' विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

सुजाता, बी.एन.; यशोधरा के. (1989): ''ए कमपरेटिव स्टडी आफ सम एजुकेशनल वेरीएबल आफ एससी/एसटी स्टूडेंट्स'', डिपार्टमेंट आफ एजुकेशन, मैसूर युनिवर्सिटी (एनसीईआरटी फाइनेंस्ड)

शोड, एम. (1986): ''एजुकेशन एंड मोबिलिटी एमंग हरिजन्स'', बोहरा पब्लिशर, वाराणसी

चिटनिश, सुमा (1981): ''ए लांग वे टू गो'', अलाइड पब्लिशर्स प्रा. लि., नई दिल्ली

अम्बेडकर, बी.आर. (1950): ''द राइज एंड फाल आफ हिन्दू वूमन'', पब्लिस्ड इन द महा बोधी आफ कलकत्ता।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

मध्याह्न भोजन योजना के प्रति शिक्षकों की मनोवृत्ति

युनुस हुसैन* और **इरशाद हुसैन***

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में मध्याहन भोजन योजना के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन किया गया है। अध्ययन हेतु शोधकर्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया। न्यादर्श चयन में बहुचरण यादृच्छिकीकरण प्रतिचयन विधि का प्रयोग किया गया। प्रदत्तों के संकलन हेतु स्वनिर्मित ''मध्यमाह्न भोजन दृष्टिकोण प्रश्नावली'' को 150 के न्यादर्श पर प्रशासित किया गया। अध्ययन के परिणामस्वरूप ज्ञात हुआ कि शहरी क्षेत्र के अध्यापकों का मध्यमाह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों की तुलना में अच्छा नहीं है। इस निष्कर्ष के पीछे यह कारण हो सकता है कि शहरी क्षेत्र के गरीब बच्चों एवं उनके अभिभावकों को बाल-श्रम से प्राप्त आय की तुलना में, विद्यालय में भोजन मिलने के बाद भी विद्यालय आकर्षक नहीं लगता है। एक अन्य निष्कर्ष में ज्ञात हुआ कि महिला शिक्षकों का पुरुष शिक्षकों की तुलना में इस योजना के प्रति दृष्टिकोण अच्छा नहीं है। इस परिणाम के पीछे कारण हो सकता है कि महिला शिक्षकों पर पुरुष शिक्षकों की भांति विद्यालय एवं ग्राम विकास की विभिन्न योजनाओं में प्रतिभाग करने के अतिरिक्त परिवार एवं बच्चों की देख-भाल का दायित्व होता है, जिससे वे इस योजना के प्रति सक्रियता प्रदर्शित नहीं करती हैं। मध्याह्न भोजन योजना के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सभी शिक्षकों को चाहिए कि वे इस योजना के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित कर इस योजना में ईमानदारी से सहभागिता करें।

---

* 670 एजाज नगर, बरेली। 243006

प्रस्तावना

प्राथमिक विद्यालयों के बच्चों को पोषाहार की व्यवस्था करने और शिक्षा के प्रति उन्हें आकर्षित करने के उद्देश्य से मध्याह्न भोजन योजना 15 अगस्त, 1995 से भारत सरकार तथा राज्य सरकारों के संयुक्त प्रयासों से चलाई जा रही है। प्रारंभ में इस योजना में प्रति विद्यार्थी 3 किग्रा गेहूं/चावल प्रतिमाह उपलब्ध कराया जाता था, किंतु इस खाद्यान का पूर्ण लाभ विद्यार्थी को न प्राप्त होकर परिवार के मध्य बंट जाता था, जिसका उनके स्वास्थ्य एवं उपस्थिति पर अपेक्षित प्रभाव नहीं पड़ा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 28.11.2001 को दिए गये निर्देश के अनुपालन में 1.9.2004 से 300 कैलोरी ऊर्जा एवं 8 ग्राम प्रोटीन युक्त पका-पकाया भोजन उपलब्ध कराया जाने लगा। योजना की सफलता की ओर दृष्टिगत रखते हुए अक्टूबर 2007 से इसे शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े ब्लाकों में संचालित उच्च प्राथमिक विद्यालयों में तथा अप्रैल 2008 से शेष ब्लाकों तथा नगर क्षेत्रों में संचालित प्राथमिक विद्यालयों में भी लागू कर दिया गया। वर्तमान में इस योजना के अंतर्गत प्राथमिक स्तर पर प्रति छात्र प्रति दिवस 100 ग्राम खाद्यान, रुपये 2.69 परिवर्तन लागत एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर 150 ग्राम खाद्यान एवं रुपये 4.03 परिवर्तन लागत उपलब्ध करायी जाती है। प्राथमिक विद्यालयों के बच्चों के लिए कम से कम 450 कैलोरी ऊर्जा और 12 ग्राम प्रोटीन एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए 700 कैलोरी ऊर्जा एवं 20 ग्राम प्रोटीन युक्त भोजन उपलब्ध कराया जाता है।

योजना का मुख्य उद्देश्य छात्र/छात्राओं के नामांकन में वृद्धि, ड्राप आउट में कमी, छात्र/छात्राओं को पौष्टिक आहार मिलना, निर्बल आय वर्ग के बच्चों में शिक्षा को ग्रहण करने की क्षमता को विकसित करना तथा समाज में सामाजिक स्वभाव, एकता एवं परस्पर भाईचारे की भावना को जागृत करना है। आधुनिक समय में देश को विकास के सोपान चढ़ पूर्ण विकसित बनाने का लक्ष्य तब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता, जब तक कि देश के सभी नागरिक साक्षर नहीं हो जाते। इस तथ्य का ज्ञान संविधान निर्माताओं को था, इसलिए संविधान की रचना करते समय उन्होंने राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों में सबके लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा को शामिल किया और स्वतंत्रता प्राप्ति के दस वर्षों के भीतर 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को नि:शुल्क शिक्षा प्रदान करने का लक्ष्य रखा। संविधान में शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों

की उन्नति के लिए भी प्रावधान किये गये। सन् 2002 में संविधान में 86वें संशोधन द्वारा 6-14 वर्ष तक के बालकों को नि:शुल्क शिक्षा ''मूल अधिकार'' बना दिया गया।

समस्या से संबंधित साहित्य का अध्ययन

शाह (2005) के अनुसार स्कूल में छात्रों को भोजन देने के पीछे यह तर्क दिया जाता है कि इससे स्कूल में बच्चों की प्रवेश संख्या बढ़ती है और उनकी स्कूल में उपस्थिति में भी सुधार आता है। व्यवहार में यह बात कितनी सही है, इसे अभी प्रमाणित होना है। लेकिन इस संबंध में जो अनौपचारिक तथ्य जुटाए गऐ हैं, वे उत्साहवर्धक हैं। जिन क्षेत्रों में स्कूल में मध्याह्न भोजन योजना चल रही है, वहां के अधिकांश अध्यापकों की राय में इससे स्कूल में छात्रों की उपस्थिति बढ़ी है। विद्यालय में नियमित हाजिरी छात्रों की उत्प्रेरणा के साथ इस बात पर भी निर्भर करती है कि उनके मां-बाप उन्हें स्कूल भेजने का किस हद तक प्रयास करते हैं। जिन छात्रों के अंदर स्कूल जाने की ललक नहीं होती, उनके मां-बाप को उन्हें समझा-बुझाकर स्कूल भेजना होता है। और अनेक अभिभावकों में इसके लिए न आस्था होती है, न समझ। स्कूली भोजन इस समस्या को हल करने में सहायक होता है। वह छात्रों को स्कूल आने की ओर आकर्षित करता है।

प्रोत्साहन के तर्क के अलावा स्कूली भोजन में ''पौष्टिकता'' तथा ''समाजीकरण'' के मुद्दे भी शामिल हैं। पौष्टिकता वाले तर्क का मतलब सिर्फ इतना ही नहीं है कि स्कूल में मिलने वाला भोजन बच्चे के स्वास्थ्य में सुधार कर सकता है। इसके साथ यह बात भी जुड़ जाती है कि भूखे बच्चे ठीक से नहीं पढ़ सकते। एक प्लेट खिचड़ी के मिलने से भी कक्षा में बच्चों की भूख शांत हो सकती है। समाजीकरण का भाव या मेलजोल बढ़ाने का मतलब यही है कि साथ बैठकर भोजन करने से वर्ग और जाति की बाधाएं टूटती हैं। यह देखा गया है कि कुछ गांवों में उच्च वर्ग के अभिभावक स्कूल में दोपहर के भोजन योजना की आलोचना करने के साथ-साथ उसमें बाधा डालने का प्रयास भी करते हैं। यह तथ्य इस बात को प्रमाणित करता है कि सामाजिक निकटता की बात कोई साधारण मुद्दा नहीं है।

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम 2005 का अनुमान है कि भारत 2020 तक एक विकसित राष्ट्र बनने की प्रक्रिया में है, परंतु अभी हमारे देश में ऐसे 30 करोड़ 50

लाख लोग हैं, जिन्हें साक्षर बनाने की जरूरत है। पिछले 50 वर्षों से प्रत्येक सरकार सर्वव्यापी शिक्षा का राष्ट्रीय लक्ष्य प्राप्त करने के प्रति कटिबद्ध रही है और शिक्षा के लिए लगातार बजटीय आवंटन में वृद्धि की गयी है। शिक्षा इस प्रकार दी जाए कि वह लोगों की सामाजिक–आर्थिक वास्तविकता, और जिन्हें दी जा रही हो, उनकी समझ पर भी पूरा ध्यान दे। बच्चों को स्कूल जाने के लिए प्रेरित करने के अतिरिक्त शिक्षा प्रणाली बच्चों को पौष्टिक आहार उपलब्ध करवाने के काबिल भी होनी चाहिए और बच्चों को सृजन समर्थ बनाने वाली भी होनी चाहिए। साथ ही शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य, चरित्र निर्माण, मानवीय मूल्य, प्रौद्योगिकी के माध्यम से ज्ञान बढ़ाना और बच्चों में विश्वास पैदा करना होना चाहिए ताकि वे भविष्य का सामना कर पाएं।

तिवारी (2006) ने लिखा है कि देश में प्राथमिक शिक्षा के प्रसार के लिए पिछले दिनों सरकार ने अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं, जिससे शिक्षा में सुधार की आशा बंधी है। स्कूलों में फर्नीचर और मदरसों सहित सभी सरकारी विद्यालयों में दोपहर के भोजन की व्यवस्था करके बालकों को स्कूल की तरफ आकर्षित करने का प्रयास किया है। अभी तक मदरसों के बच्चे को दोपहर का भोजन नहीं मिल रहा था। जबकि देखा जाये तो प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ने वाले बच्चे, चाहे उत्तर प्रदेश सरकार के परिषदीय विद्यालयों में पढ़ रहे हों या फिर मदरसों में, वे एक शिक्षार्थी ही होते हैं। देर से ही सही, सरकार ने अनुदानित मदरसों के बच्चों को दोपहर का भोजन देने की व्यवस्था कर इन शिक्षण संस्थाओं के बच्चों को भी शिक्षा के प्रति आकर्षित करने का प्रयास किया है। लेकिन इसके साथ ही एक सवाल जो दोपहर के भोजन को लेकर हमेशा उठता रहता है वह है, मध्याह्न भोजन योजना के भोजन की गुणवत्ता का। प्रदेश में अक्सर ऐसी घटनाएं होती रहती हैं, जिसमें दोपहर का भोजन खाकर बच्चे बीमार हो जाते हैं, इसके अलावा भोजन में कीड़े मिलने और अनाज की गुणवत्ता पर हमेशा सवाल उठते रहे हैं। इसलिए सरकार को दोपहर के भोजन की गुणवत्ता सुनिश्चित करनी चाहिए।

मुस्कान (2006) के अुनसार, पिछले कुछ समय में देश के विभिन्न स्थानों पर प्राथमिक विद्यालयों में मध्याह्न भोजन में गड़बड़ी के मामले जिस तरह एक के बाद एक सामने आते जा रहे हैं, उससे साफ है कि इस महत्वाकांक्षी योजना का क्रियान्वयन सही तरह से नहीं किया जा रहा है। अनेक विद्यालयों में बच्चे मध्याह्न भोजन के

तहत दिये जाने वाले खाने को खाकर बीमार हो गए। मिड-डे मील में विसंगतियों की कहानी के पीछे केंद्र और राज्य सरकार की कोई खास नकारात्मक भूमिका नहीं है। सरकार ने तो योजना बनाई और उस योजना के बेहतर क्रियान्वन और सुनहरे भविष्य की कामना के साथ उसे संबंधित व्यक्तियों के हवाले कर दिया। मिड-डे मील में विसंगति की खिचड़ी तो उन्होंने पकाई है, जिनके भरोसे पर इस योजना की सफलता अपेक्षित थी। इस योजना के क्रियान्वयन के लिए तैनात तंत्र ने अपने भ्रष्टाचार के चलते इस योजना का बंटाधार करने में कोई कोर-कसर बाकी नहीं छोड़ी। भ्रष्ट कर्मचारियों की कार्यप्रणाली में भ्रष्टाचार का ही बोलबाला रहता है। नतीजा यह है कि पूरी की पूरी 'मिड-डे मील योजना' बस आंकड़ों के खेल में उलझकर रह गई है।

संबंधित साहित्य के सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि ''मध्याहन पोषाहार योजना'' पर कुछ कार्य हुआ है। तिवारी (2006) तथा मुस्कान (2006) ने अपने अध्ययनों में मध्याह्न भोजन योजना में व्याप्त विसंगतियों की ओर ध्यान दिया है। इनके अनुसार मध्याह्न भोजन योजना का क्रियान्वन ठीक ढंग से नहीं किया जा रहा है। शाह (2005) ने अपने अध्ययन में स्वीकार किया है कि मध्याहन भोजन योजना से विद्यालयों में छात्रों की उपस्थिति बढ़ी है, परंतु शिक्षकों का इस योजना के प्रति क्या दृष्टिकोण है, इसकी चर्चा इन शोध कार्यों में नहीं की गई है। अत: मध्याह्न भोजन योजना के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण पर शोध अपेक्षित है। कुछ शोधकर्ताओं ने भोजन की गुणवत्ता के संबंध में कार्य किया है तथा कुछ शोधकर्ताओं का कार्य मध्याह्न भोजन योजना के प्रशासनिक पक्ष से संबंधित है, किंतु जहां तक शोधकर्ता द्वारा संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण किया गया है, उसके अनुसार मध्याह्न भोजन योजना के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण पर कोई शोध नहीं हुआ है। अत: शोधकर्ता ने इस विषय को अध्ययन हेतु चुना है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के शिक्षकों में मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
2. महिला एवं पुरुष शिक्षकों में मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

3. प्राथमिक शिक्षकों एवं शिक्षा मित्रों में मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

न्यादर्श का चयन

प्रस्तुत अध्ययन को पूरा करने के लिए शोधकर्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया। न्यादर्श चयन में बहुचरण यादृच्छिकीकरण प्रतिचयन विधि का प्रयोग किया गया। प्रथम चरण में बरेली जनपद के तीन ब्लाक का चयन ग्रामीण/शहरी क्षेत्र को उचित प्रतिनिधित्व देते हुए लाटरी विधि से करने के बाद द्वितीय चरण में प्रत्येक ब्लाक से पन्द्रह विद्यालयों का चयन सिस्टेमेटिक विधि से किया गया। विद्यालय चयन के उपरांत चयनित विद्यालयों में जाकर उपस्थित शिक्षकों/शिक्षामित्रों पर स्वनिर्मित ''मध्याह्न भोजन दृष्टिकोण प्रश्नावली'' को प्रशासित किया गया। इस प्रकार अध्ययन हेतु न्यादर्श का आकार 150 प्राप्त हुआ।

शोध उपकरण

प्रस्तुत मध्याह्न भोजन योजना दृष्टिकोण मापन प्रश्नावली में चार पक्षों से संबंधित कुल 36 प्रश्न हैं। प्रत्येक शैक्षिक, प्रशासनिक, सामाजिक और आर्थिक पक्ष से 9 प्रश्न लिये गये हैं। प्रश्नावली में 11 प्रश्न नकारात्मक एवं 25 प्रश्न सकारात्मक हैं। नकारात्मक प्रश्नों के लिए विकल्प 'नहीं' को '1' अंक तथा विकल्प 'हां' को 'शून्य' अंक तथा सकारात्मक प्रश्नों के लिए विकल्प 'हां' को '1' अंक तथा विकल्प 'नहीं' को 'शून्य' अंक प्रदान किया गया है।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष

तालिका 1

ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमानों का अंतर

चर	N	M	SD	'T'
ग्रामीण शिक्षक	78	25.85	4.56	3.19**
शहरी शिक्षक	72	23.46	4.71	

**.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

उपर्युक्त तालिका से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण में मध्यमानों में 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक अंतर है। अत: अध्यापकों का परिवेश (ग्रामीण/शहरी) उनके मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण को प्रभावित करता है। ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान (25.85), शहरी क्षेत्र के अध्यापकों के मध्याहन भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमान (23.46) से अधिक है। अत: स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण शहरी क्षेत्र के अध्यापकों के दृष्टिकोण की तुलना में अच्छा है।

ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों का इस योजना के प्रति अच्छा दृष्टिकोण होने का कारण संभवत: यह हो सकता है कि ग्रामीण विद्यालयों में इस योजना के चलाये जाने के फलस्वरूप छात्रों की संख्या में शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक वृद्धि हुई है और ग्रामीण क्षेत्र में जहां छात्रों को घर में भोजन भी उपलब्ध नहीं हो पाता है, वहीं वे छात्र अब इस योजना के अंतर्गत उत्तम पोषक तत्वों से युक्त भोजन प्राप्त करने में सफल हो रहे हैं जो उन्हें कुपोषण से मुक्ति दिलाने में सक्षम है जबकि शहरी क्षेत्र के गरीब बच्चे बाल मजदूरी करने के कारण विद्यालय में भोजन मिलने के बावजूद भी विद्यालय जाने में रुचि नहीं दिखाते हैं।

तालिका 2

पुरुष एवं महिला शिक्षकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमानों का अंतर

चर	N	M	SD	'T'
पुरुष शिक्षक	82	26.36	3.69	4.73
महिला शिक्षक	68	22.91	5.01	

उपर्युक्त तालिका से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि महिला एवं पुरुष अध्यापकों के मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमानों में 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक अंतर है। अत: अध्यापकों का लिंग (महिला/पुरुष)उनके मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण को प्रभावित करता है। पुरुष अध्यापकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान (26.36), महिला शिक्षकों के मध्याह्न

भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमान (22.91) से अधिक है। अत: यह स्पष्ट होता है कि पुरुष शिक्षकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण महिला शिक्षकों के दृष्टिकोण की तुलना में अच्छा है।

महिला शिक्षकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण पुरुष शिक्षकों की तुलना में अच्छा न होने का कारण यह हो सकता है कि उन पर पुरुष शिक्षकों की भांति विद्यालय एवं ग्राम विकास की विभिन्न योजनाओं में प्रतिभाग करने के अतिरिक्त परिवार एवं बच्चों की देख-भाल का भी दायित्व होता है।

तालिका 3

शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमानों का अंतर

चर	N	M	SD	'T'
शिक्षक	96	25.04	4.83	0.78
शिक्षामित्र	54	24.44	4.32	

उपर्युक्त तालिका से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों के मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अंतर नहीं है। इससे स्पष्ट होता है कि अध्यापकों का पद या श्रेणी (शिक्षक/ शिक्षामित्र) उनके मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण को प्रभावित नहीं करती है। यद्यपि शिक्षकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान (25.04), शिक्षामित्रों के मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमान (24.44) से अधिक है, परंतु यह केवल संयोगवश ही है।

शैक्षिक उपयोगिता एवं सुझाव

प्रस्तुत अध्ययन का एक निष्कर्ष है कि शहरी क्षेत्र के शिक्षकों का मध्याहन भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों की तुलना में कम है, जो मध्याह्न भोजन योजना के प्रति शहरी शिक्षकों की लापरवाही को इंगित करता है। शाह (2004) ने अपने अध्ययन के द्वारा यह स्पष्ट किया है कि जिन स्कूलों में मध्याहन भोजन योजना सुचारु रूप से चल रही है, उन स्कूलों में न सिर्फ छात्रों की प्रवेश संख्या बढ़ती है,

बल्कि छात्रों की उपस्थिति में भी सुधार आता है। अत: यदि इस योजना के कारण छात्रों की उपस्थिति बढ़ती है तो उनका अधिगम भी धनात्मक रूप से प्रभावित होना चाहिए, परंतु यदि शहरी क्षेत्र के शिक्षक अनिच्छा से मध्याह्न भोजन योजना में भागीदारी करेंगे तो यह अनिच्छा न सिर्फ शिक्षक के शिक्षण कार्य को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकती है, बल्कि इसका प्रभाव विद्यालयों में बालकों की संख्या तथा उनकी उपस्थिति पर भी पड़ सकता है। परिणाम स्वरूप छात्रों का अधिगम उत्तम प्रकार से नहीं हो सकेगा। अत: ऐसे प्रयास अपेक्षित हैं, जिनसे शहरी क्षेत्र के शिक्षकों का इस योजना के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित हो ताकि वे मध्याह्न भोजन योजना को मात्र एक सरकारी कार्य न समझकर, योजना के वास्तविक उद्देश्यों से अवगत होकर, छात्रों को उत्तम अधिगम प्रदान कर सकें।

प्रस्तुत शोध पत्र द्वारा प्राप्त परिणामों से यह भी ज्ञात होता है कि महिला शिक्षकों का मध्याह्न भोजन योजना के प्रति दृष्टिकोण पुरुष शिक्षकों की तुलना में निम्न है। इसके विभिन्न कारणों में से एक प्राथमिक शिक्षकों का गैर शैक्षणिक कार्यों में संलिप्त रहना भी है। सिंह (2005) के अध्ययन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों को मतदाता सूची, पल्स पोलियो कार्यक्रम, फाइलेरिया कार्यक्रम, विद्यालय भवन निर्माण, साक्षरता अभियान, मध्याह्न भोजन वितरण, जनगणना, बाल गणना, मतदाता पहचान पत्र, चुनाव तथा गांव के विकास से संबंधित विभिन्न कार्यों के साथ विद्यालयी अभिलेखों को तैयार करने का दायित्व सौंप दिया जाता है। इन कार्यों में बरती गयी शिथिलता उन्हें तत्काल दण्ड का भागी बना देती है। महिला शिक्षकों पर इन कार्यों के साथ-साथ अपने घर, परिवार तथा बच्चों के प्रति जिम्मेदारियों को प्राथमिकता के साथ पूर्ण करने का भी दायित्व होता है, जिसके परिणामस्वरूप उन पर पुरुष शिक्षकों की तुलना में अतिरिक्त कार्यभार आ जाता है। संभवत: यह अतिरिक्त कार्यभार ही महिला शिक्षकों में मध्याह्न भोजन जैसी योजनाओं के प्रति अनिच्छा उत्पन्न करता है। यह अनिच्छा उनके शिक्षण कार्य को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर सकती है परिणाम स्वरूप छात्रों का अधिगम भी नकारात्मक रूप से प्रभावित हो सकता है। अत: महिला शिक्षकों से उन बाधाओं को जानकर, उन्हें दूर करने का प्रयास अत्यंत आवश्यक है, जिनके कारण महिला शिक्षक मध्याह्न भोजन योजना के प्रति अनिच्छा प्रकट करती हैं।

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि मध्याह्न भोजन योजना प्राथमिक शिक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिए ही लागू की गयी है। सभी शिक्षक, चाहे वे शिक्षक हों या शिक्षामित्र, महिला हो या पुरुष, ग्रामीण क्षेत्र के हों या शहरी क्षेत्र के, इस योजना में ईमानदारी पूर्ण सहभागिता करें, जिससे यह योजना अपने वास्तविक निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त कर सके। और प्राथमिक शिक्षा को सुदृढ़ बनाया जा सके।

संदर्भ

अब्दुल कलाम, ए.पी.जे. (2005): ''सम्मान के लिए शिक्षा'', योजना, सितंबर, पृ. 5-6

तिवारी, सुधाकर (2006) : ''सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन'', जनसत्ता, उन्नाव, 27 अप्रैल

मुस्कान, अनुराग (2006) : ''खामियों से भरी खिचड़ी'', दैनिक जागरण, बरेली, अक्टूबर

शाह, अनल (2005), ''कुछ नई पहल'', प्रोब सर्वेक्षण, पृ. 99-100

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

विद्यार्थियों का व्यक्तित्व विकास और व्यावसायिक परिपक्वता

सरिता केसरवानी* और **उमा रानी शर्मा****

व्यक्ति के द्वारा उसकी व्यावसायिक परिपक्वता के आधार पर किये गये सव्यवसाय का चयन ना केवल उसकी कुशलता में वृद्धि करता है बल्कि उसे प्रफुल्लता भी प्रदान करता है रॉस तथा रॉस (1957)। ये जीवन निर्वाह का साधन, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक पहचान का स्रोत तथा आत्मपूर्णता व आत्म उन्नयन का महत्वपूर्ण माध्यम माना गया है। विभिन्न प्रकार के व्यवसायों में सफलता के लिए विशेष प्रकार के गुणों की आवश्यकता होती है। हॉलैण्ड ने अपने व्यावसायिक चयन सिद्धान्त में स्पष्ट किया कि व्यवसाय के चयन में व्यक्तित्व मुख्य भूमिका निभाता है तथा व्यक्ति उसी व्यवसाय का चयन करता है जो कि उसके व्यक्तित्व के अनुरूप होता है। स्पष्ट है व्यक्ति अपनी व्यावसायिक परिपक्वता के आधार पर अपने व्यक्तित्व को ध्यान में रखते हुए ही व्यवसाय का ही चयन करता है।

उद्देश्य

(1) छात्रों के व्यक्तित्व गुणों व उनकी व्यावसायिक परिपक्वता के बीच सम्बन्धों का अध्ययन करना।

(2) छात्राओं के व्यक्तित्व गुणों व उनकी व्यावसायिक परिपक्वता के बीच सम्बन्धों का अध्ययन करना।

परिकल्पना

(1) छात्रों के विभिन्न व्यक्तित्व गुणों व उनकी व्यावसायिक परिपक्वता के बीच

* शोध छात्रा, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
* रीडर शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

(2) छात्राओं के विभिन्न व्यक्तित्व गुणों व उनकी व्यावसायिक परिपक्वता के बीच कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में इलाहाबाद नगर के उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित 6 विद्यालयों से कक्षा–11 में 320 विद्यार्थियों (160 छात्र तथा 160 छात्राओं) को यादृच्छिक विधि (लाटरी विधि) द्वारा शामिल किया गया है। व्यावसायिक परिपक्वता के मापन हेतु क्राइट्स द्वारा निर्मित व निर्मला गुप्ता द्वारा हिन्दी अनुवादित कैरियर मेच्यूरिटी इन्वेन्ट्री (1989) का प्रयोग किया गया। व्यक्तित्व के मापन हेतु आर. बी. कैटेल द्वारा निर्मित व डा. एस.डी. कपूर द्वारा हिन्दी अनुवादित हाईस्कूल व्यक्तित्व प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। आंकड़ों के विश्लेषण हेतु गुणनफल आघूर्ण सहसम्बन्ध विधि का प्रयोग किया गया है।

निष्कर्ष

(1) छात्रों की व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यक्तित्व गुण A, C, H तथा Q_3 से सार्थक धनात्मक तथा J, तथा O से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। व्यावसायिक चयन दक्षता में आत्म मूल्यांकन विमा, व्यक्तित्व गुण B, Q_2 तथा Q_3 से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। व्यावसायिक सूचना विमा, व्यक्तित्व गुण H, से सार्थक धनात्मक तथा D, F, तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। लक्ष्य चयन विमा, व्यक्तित्व गुण G तथा H से सार्थक धनात्मक तथा E, I तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। योजना निर्माण विमा, व्यक्तित्व गुण D, E, J तथा O से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। समस्या समाधान विमा, व्यक्तित्व गुण B से सार्थक धनात्मक तथा O व Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है।

(2) छात्राओं की व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यक्तित्व गुण B तथा G से सार्थक धनात्मक तथा F, J, O तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। व्यावसायिक चयन दक्षता में, आत्म–मूल्यांकन विमा, व्यक्तित्व गुण B, Q_2, तथा Q_3 से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। व्यावसायिक सूचना विमा, व्यक्तित्व गुण

H से सार्थक धनात्मक तथा D, F तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। लक्ष्य चयन विमा, व्यक्तित्व गुण G तथा H से सार्थक धनात्मक रूप से तथा E, I तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। योजना निर्माण विमा, व्यक्तित्व गुण B से सार्थक धनात्मक तथा E, J व O से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। समस्या समाधान विमा, व्यक्तित्व गुण A व B से सार्थक धनात्मक तथा O तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है।

व्यक्ति के द्वारा उसकी व्यावसायिक परिपक्वता के आधार पर किये गये सही व्यवसाय का चयन ना केवल उसकी कुशलता में वृद्धि करता है बल्कि उसे प्रफुल्लता भी प्रदान करता है रॉस तथा रॉस (1957)। सभ्यता के प्रारम्भ से ही सभी प्रकार की मानसिक क्रियाओं का मुख्य बिन्दु व्यवसाय को माना गया है। ये जीवन निर्वाह का साधन, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक पहचान का स्रोत तथा आत्मपूर्णता व आत्म उन्नयन का महत्वपूर्ण माध्यम माना गया है। आधुनिक समाज में जहाँ व्यक्ति के समक्ष अपने गुणों तथा योग्यताओं के अनरूप व्यवसाय के चयन करने के अनेकों अवसर हैं, ऐसी स्थिति में निर्णय लेने की क्षमता की गतिशील प्रक्रिया को समझना अत्यधिक महत्वपूर्ण है, जिसमें की वह विवेकपूर्ण ढंग से चयन करते हुए स्वयं के लिए उपयुक्त व्यवसाय का चयन करने में सक्षम हो सके। माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी व्यवसाय से सम्बन्धित महत्वपूर्ण निर्णय लेता है। इस स्तर पर विद्यार्थी के द्वारा लिया गया निर्णय उसके पूरे जीवनकाल को प्रभावित करता है। माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों में कार्य सम्बन्धी उचित अभिवृत्ति पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाती है, फलतः वे भ्रमित व असुरक्षित महसूस करते है। विभिन्न प्रकार के व्यवसायों में सफलता के लिए विशेष प्रकार के गुणों की आवश्यकता होती है। हॉलैण्ड ने अपने व्यावसायिक चयन सिद्धान्त में स्पष्ट किया कि व्यवसाय के चयन में व्यक्तित्व मुख्य भूमिका निभाता है तथा व्यक्ति उसी व्यवसाय का चयन करता है जो कि उसके व्यक्तित्व के अनुरूप होता है । हालैण्ड ने अधिकांश व्यक्तियों को छः श्रेणियों में विभक्त किया है– वास्तविक, बौद्धिक, सामाजिक, परम्परावादी, उद्यमशील तथा सौन्दर्यात्मक। इसी प्रकार वातावरण भी छः प्रकार का होता है–वास्तविक, बौद्धिक, सामाजिक, परम्परावादी, उद्यमशील तथा सौन्दर्यात्मक। स्पष्ट है कि व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को ध्यान में रखते हुए उसी प्रकार के व्यवसाय तथा वातावरण की खोज करता है, जहाँ वह अपनी कुशलताओं तथा योग्यताओं का अधिकतम उपयोग कर सके। सामान्यतया उभयमुखी व्यक्तित्व के

विद्यार्थी ऐसे व्यवसायों में जाना चाहते हैं जहाँ उनका सामाजिक दायरा विकसित हो तथा उन्हें नित नये लोगों से अन्तर्क्रिया करने का अवसर प्राप्त हो, जबकि शर्मीले तथा संकोची स्वभाव वाले व्यक्ति ऐसे व्यवसायों को प्राथमिकता देते हैं जहाँ उन्हे केवल, एक स्थान पर बैठकर अपना कार्य करना हो। स्पष्ट है व्यक्ति अपनी व्यावसायिक परिपक्वता के आधार पर अपने व्यक्तित्व को ध्यान में रखते हुए ही व्यवसाय का ही चयन करता है।

चन्द एच. (1979) ने शोध के द्वारा निष्कर्ष प्राप्त किया कि व्यावसायिक परिपक्वता तथा व्यक्तित्व गुण B, C, O, Q_2 तथा Q_3 के बीच सार्थक धनात्मक सहसम्बन्ध होता है। गुप्ता निर्मला (1991) ने शोध के द्वारा निष्कर्ष प्राप्त किया कि व्यावसायिक परिपक्वता तथा व्यक्तित्व गुण सामाजिकता तथा साहस के बीच सार्थक धनात्मक सहसम्बन्ध होता है। वास्ता वी. (2001) ने शोध के द्वारा निष्कर्ष प्राप्त किया कि व्यक्तित्व गुण A, B, C, H तथा Q_2 व्यावसायिक परिपक्वता को प्रभावित करते हैं। कुमार एस. (2000) ने शोध के द्वारा निष्कर्ष प्राप्त किया कि व्यक्तित्व गुण B, C, E, H, तथा Q_3, व्यावसायिक परिपक्वता की विमाओं से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित होता है।

स्पष्ट है कि प्रस्तुत अध्ययन के द्वारा बालक के व्यक्तित्व तथा व्यावसायिक परिपक्वता के बारे में स्पष्ट जानकारी प्राप्त हो सकेगी, फलतः शिक्षक बालक में निहित गुणों व विशेषताओं से परिचित होकर उसके उचित विकास के लिए प्रयासरत हो सकेंगे। बालक में निहित विशिष्ट गुण जो किसी विशिष्ट व्यवसाय के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं, के विकास के लिए शिक्षक, अभिभावक तथा परामर्शदाता प्रयास कर सकेंगे तथा बालक को संबंधित कार्य क्षेत्र में व्यवसाय चयन के लिए प्रेरित कर सकेंगे।

उद्देश्य

(1) छात्रों के व्यक्तित्व गुणों व उनकी व्यावसायिक परिपक्वता के बीच सम्बन्धों का अध्ययन करना।

(2) छात्राओं के व्यक्तित्व गुणों व उनकी व्यावसायिक परिपक्वता के बीच सम्बन्धों का अध्ययन करना।

परिकल्पना

(1) छात्रों के विभिन्न व्यक्तित्व गुणों व उनकी व्यवसायिक परिपक्वता के बीच कोई

सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

(2) छात्राओं के विभिन्न व्यक्तित्व गुणों व उनकी व्यावसायिक परिपक्वता के बीच कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

तकनीकी पदों की परिभाषा

व्यावसायक परिपक्वता: क्राइट्स (1978) के अनुसार व्यावसायिक परिपक्वता से तात्पर्य उन क्षमताओं व दक्षताओं से है जो कि उचित व्यावसायिक निर्णय लेने के लिए आवश्यक होती है तथा जिसमें योजना बनाने, सूचनाओं के अन्वेषण, लक्ष्य के चयन, आत्म-मूल्यांकन तथा समस्या समाधान की क्षमता शामिल होती है। इसके अतिरिक्त इसके अन्तर्गत व्यावसायिक निर्णय लेने सम्बन्धी अभिवृत्ति को सम्मिलित किया गया है।

व्यक्तित्व: मिशेल (1981) के अनुसार, ''व्यक्तित्व से तात्पर्य व्यक्ति के व्यवहार, के उन विशिष्ट प्रतिमानों से है, जिसमें विचार और संवेग शामिल होते है तथा जो प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की परिस्थतियों के साथ होने वाले समायोजन को निर्धारित करते है।''

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध अध्ययन में इलाहाबाद नगर के उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित 6 विद्यालयों से कक्षा-11 में 320 विद्यार्थियों (160 छात्र तथा 160 छात्राएं) को यादृच्छिक विधि (लाटरी विधि) द्वारा शामिल किया गया है।

प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत अध्ययन में निम्न उपकरणों का प्रयोग किया गया है–

(1) व्यावसायिक परिपक्वता के मापन हेतु क्राइट्स द्वारा निर्मित व निर्मला गुप्ता द्वारा हिन्दी अनुवादित कैरियर मेच्यूरिटी इन्वेन्ट्री (1989) का प्रयोग किया गया। इस उपकरण के मुख्यत: दो भाग हैं–

(1) व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति मापनी

(2) व्यावसायिक चयन दक्षता परीक्षण

व्यावसायिक चयन दक्षता परीक्षण में पाँच भाग हैं–

(i) आत्म-मूल्यांकन
(ii) व्यावसायिक सूचना
(iii) लक्ष्य का चयन
(iv) योजना निर्माण
(v) समस्या समाधान

(2) व्यक्तित्व के मापन हेतु आर. बी. कैटेल द्वारा निर्मित व डा. एस.डी. कपूर द्वारा हिन्दी अनुवादित हाईस्कूल व्यक्तित्व प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। ये प्रश्नावली निम्न 14 द्विध्रुवीय व्यक्तित्व गुणों का मापन करती है–

(A)	गम्भीर	मैत्रीपूर्ण
(B)	कम बुद्धिमान	अधिक बुद्धिमान
(C)	संवेगों से प्रभावित	संवेगात्मक रूप से स्थिर
(D)	अप्रदर्शनात्मक	उत्तेजनशील
(E)	आज्ञाकारी	आक्रामक
(F)	सौम्य	उत्साही
(G)	नियमों की उपेक्षा करने वाला	कर्तव्यनिष्ठ
(H)	संकोची	सामाजिक
(I)	निष्ठुर	संवेदनशील
(J)	समूहवादी	संचेत व्यक्तित्व
(O)	आत्मविश्वासी	संदेही
(Q_2)	सामाजिक समूह आधारित	आत्मनिर्भर
(Q_3)	अनियंत्रित	नियंत्रित
(Q_4)	तनावमुक्त	तनावयुक्त

सांख्यिकीय विधि

प्रस्तुत अध्ययन में आंकड़ों के विश्लेषण हेतु गुणनफल आघूर्ण सहसम्बन्ध विधि का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं विवेचन

तालिका-1

छात्रों के व्यक्तित्व तथा व्यावसायिक परिपक्वता के बीच सहसम्बन्ध

व्यक्तित्व गुण	सहसम्बन्ध गुणांक					
	व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति	आत्म-मूल्यांकन	व्यावसायिक सूचना	लक्ष्य का चयन	योजना निर्माण	समस्या समाधान
A	.15*	.05	.09	.11	–.06	.08
B	.12	.14*	.10	.09	.08	.26**
C	.28**	.09	.06	.10	.11	.08
D	.12	.11	–.15*	.09	–.33**	.06
E	–.11	–.10	–.12	–.24**	–.13*	–.10
F	–.10	–.09	–.13*	–.12	.11	.10
G	.03	.08	.11	.13*	.10	.06
H	.31**	.11	.26**	.13*	.10	.06
I	–.09	.06	–.11	–.21**	.10	–.07
J	–.29**	–.11	.03	–.12	–.19*	–.11
O	–.19**	.08	–.09	–.11	–.14*	–.13*
Q_2	–.10	.23**	.11	.12	.10	.09
Q_3	.18**	.13*	.11	.10	.09	.10
Q_4	–.10	–.11	–.19**	–.18**	–10	–.29**

*/** .05/.01 पर सार्थक

तालिका-1 से स्पष्ट है कि छात्रों की व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यक्तित्व गुण A, C, H तथा Q_3 से सार्थक धनात्मक तथा J, तथा O से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। व्यावसायिक चयन दक्षता में आत्म मूल्यांकन विमा, व्यक्तित्व गुण B, Q_2 तथा Q_3 से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। व्यावसायिक सूचना विमा, व्यक्तित्व गुण H, से सार्थक धनात्मक तथा D, F, तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। लक्ष्य चयन विमा, व्यक्तित्व गुण G, तथा H से सार्थक धनात्मक तथा E, I तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। योजना निर्माण विमा, व्यक्तित्व गुण D, E, J तथा O से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। समस्या समाधान विमा, व्यक्तित्व गुण B से सार्थक धनात्मक O तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है।

तालिका–2

छात्राओं के व्यक्तित्व तथा व्यावसायिक परिपक्वता के बीच सहसम्बन्ध

व्यक्तित्व गुण	सहसम्बन्ध गुणांक					
	व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति	आत्म–मूल्यांकन	व्यावसायिक सूचना	लक्ष्य का चयन	योजना निर्माण	समस्या समाधान
A	.10	.11	.09	.11	.09	.14*
B	.27**	.20**	.06	.07	.17*	.19*
C	–.16	–.12	.11	.10	.11	.12
D	–.10	–.09	–.18**	.12	–.10	.06
E	–.11	–.04	–.11	–.31**	–.17*	–.11
F	–.32**	–.12	–.16*	.06	.06	–.09
G	.13*	.06	–.11	.21**	.11	.11
H	.10	.07	.22**	.24**	.10	.10
I	–.11	–.06	–.06	–.17*	–.12	–.10
J	–.18**	–.11	–.12	–.11	–.32**	–.06
O	–.39**	–.06	.05	–.06	–.30**	–.17*
Q_2	.11	.16*	–.06	.03	–.07	.09
Q_3	.11	.17*	–.11	.10	.09	.10
Q_4	–.35**	–.06	–.13*	–.26**	–.06	–.23**

*/** .05/.01 पर सार्थक

तालिका–2 से स्पष्ट है छात्राओं की व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति व्यक्तित्व गुण B तथा G से सार्थक धनात्मक तथा F, J, O तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। व्यावसायिक चयन दक्षता में, आत्म–मूल्यांकन विमा, व्यक्तित्व गुण B, Q_2, तथा Q_3 से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। व्यावसायिक सूचना विमा, व्यक्तित्व गुण H से सार्थक धनात्मक तथा D, F तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। लक्ष्य चयन विमा, व्यक्तित्व गुण G तथा H से सार्थक धनात्मक रूप से तथा E, I तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। योजना निर्माण विमा, व्यक्तित्व गुण B से सार्थक धनात्मक तथा E, J व O से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। समस्या समाधान विमा, व्यक्तित्व गुण A व B से सार्थक धनात्मक तथा O तथा Q_4 से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है।

विवेचना-

- व्यक्तिव गुण A–गम्भीर/मैत्रीपूर्ण, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यावसायिक चयन दक्षता में समस्या समाधान विमा से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। इससे स्पष्ट है कि वे विद्यार्थी जो समाज में मैत्रीपूर्ण व्यवहार करते हैं, सहयोगी तथा विभिन्न क्रियाओं में भाग लेने वाले हैं, उनमें सकारात्मक व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति पाई जाती है तथा वे प्रभावपूर्ण ढंग से समस्या का समाधान करने में सक्षम होते हैं।
- व्यक्तिव गुण B–कम बुद्धिमान/अधिक बुद्धिमान, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यावसायिक चयन दक्षता में आत्म-मूल्यांकन, योजना निर्माण तथा समस्या समाधान विमा से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। इससे स्पष्ट है कि वे विद्यार्थी जो अधिक बुद्धिमान होते हैं, उनमें सकारात्मक व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति पाई गयी तथा उनमें अपनी क्षमताओं के उचित मूल्यांकन, योजना निर्माण व समस्या समाधान की क्षमता भी पर्याप्त रूप से विकसित हो जाती है।
- व्यक्तिव गुण C–संवेगों से प्रभावित/संवेगात्मक रूप से स्थिर, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। स्पष्ट है ऐसे विद्यार्थी जो संवेगों से प्रभावित नहीं होते, वे उनमें सकारात्मक व्यावसायिक अभिवृत्ति पाई गयी।
- व्यक्तिव गुण D–अप्रदर्शनात्मक/उत्तेजनशील, व्यावसायिक परिपक्वता की विभिन्न विमाओं जैसे– व्यावसायिक सूचना तथा योजना निर्माण विमा से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। स्पष्ट है कि ऐसे विद्यार्थी जो अधीर, जल्दी निराश होने वाले तथा अधिक उत्तेजित होने वाले होते हैं; उनमें व्यावसायिक जगत के बारे में समुचित जानकारी का आभाव होता है तथा समस्याओं का सामना करने में भी कुशल नहीं होते।
- व्यक्तिव गुण E– आज्ञाकारी/दृढ़, व्यावसायिक परिपक्वता की विभिन्न विमाओं जैसे- लक्ष्य का चयन तथा योजना निर्माण विमा से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। इससे स्पष्ट है कि– ऐसे विद्यार्थी जो अक्रामक तथा जिद्दी होते हैं– वे लक्ष्य का चयन करने में, लक्ष्य सम्बन्धी योजनाओं के निर्माण में सक्षम नहीं होते।
- व्यक्तिव गुण F– सौम्य/उत्साही, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यावसायिक चयन दक्षता की व्यावसायिक सूचना विमा से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित

है। इससे स्पष्ट है कि ऐसे विद्यार्थी जो आराम पसन्द, उदासीन व सुस्त होते हैं, उनमें व्यवसाय के सम्बन्ध में सकारात्मक अभिवृत्ति का अभाव पाया जाता है तथा वे व्यवसाय से सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्रित करने मे निम्न होते हैं।

- व्यक्तिव गुण G– नियमों की उपेक्षा करने वाले/कर्तव्यनिष्ठ, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यावसायिक चयन दक्षता में लक्ष्य का चयन विमा से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। इससे स्पष्ट है कि ऐसे विद्यार्थी जो अनुशासित, कर्तव्यनिष्ठ तथा नियमों को मानने वाले हैं, उनमें सकारात्मक व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति पाई जाती है तथा वे लक्ष्य का चयन करने मे बेहतर होते हैं।
- व्यक्तिव गुण H– संकोची/सामाजिक, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यवसायिक चयन दक्षता में, व्यावसायिक सूचना तथा लक्ष्य का चयन विमा से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। इससे स्पष्ट है कि ऐसे विद्यार्थी जो सामाजिक, उत्साही, क्रियाशील व मित्रतापूर्ण व्यक्तिव वाले होते हैं, उनमें व्यवसाय सम्बन्ध में सकारात्मक अभिवृत्ति पाई जाती है। क्रियाशील व सामाजिक होने के कारण वे व्यवसाय सम्बन्धी सूचनाओं की जानकारी प्राप्त करने, लक्ष्य का चयन करने में बेहतर होते हैं।
- व्यक्तिव गुण I– निष्ठुर/संवेदनशील, व्यावसायिक परिपक्वता की लक्ष्य चयन विमा से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है, जिससे स्पष्ट है कि ऐसे विद्यार्थी जो बहुत अधिक संवेदनशील तथा संवेगी होते हैं, वे अपने व्यवसाय सम्बन्धी लक्ष्य के चयन में निम्न पाये जाते हैं।
- व्यक्तिव गुण J– समूहवादी/सचेत व्यक्तिव, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यावसायिक चयन दक्षता में योजना निर्माण से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। इससे स्पष्ट होता है कि ऐसे विद्यार्थी जो समूह के आधार पर ही चलते हैं, शंकालू व उदासीन होते हैं। उनमें नकारात्मक व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति पाई जाती है तथा वे व्यवसाय सम्बन्धी योजनाओ के निर्माण में सक्षम नहीं होते।
- व्यक्तिव गुण O– आत्मविश्वासी/संदेही, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यावसायिक चयन दक्षता में योजना निर्माण विमा से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। इससे स्पष्ट होता है कि ऐसे विद्यार्थी जो संदेही, चिन्ति तथा शंकालू होते हैं। उनमें नकारात्मक व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति पाई जाती है तथा वे व्यवसाय सम्बन्धी योजनाओं के निर्माण में भी कुशल नहीं होते।

- व्यक्तिव गुण Q_2- सामाजिक समूह आधारित/आत्मनिर्भर, व्यावसायिक परिपक्वता की आत्म मूल्यांकन विमा से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है, जिससे स्पष्ट है कि ऐसे विद्यार्थी जो आत्मनिर्भर होते हैं, वे अपनी क्षमताओं, गुणों तथा दोषों के बारे में पर्याप्त जानकारी रखते हैं तथा जानते हैं कि वे क्या कर सकते हैं तथा क्या नहीं।
- व्यक्तिव गुण Q_3- अनियंत्रित/नियंत्रित, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति तथा व्यावसायिक चयन दक्षता में आत्म-मूल्यांकन विमा से सार्थक धनात्मक रूप से सहसम्बन्धित है, जिससे स्पष्ट है कि ऐसे विद्यार्थी जो नियंत्रित व अनुशासित होते हैं, उनमें सकारात्मक व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति पाई जाती है तथा अपनी क्षमताओं के उचित मूल्यांकन में सक्षम होते हैं।
- व्यक्तिव गुण Q_4- तनावमुक्त/तनावयुक्त, व्यावसायिक चयन अभिवृत्ति, व्यावसायिक चयन दक्षता में व्यावसायिक सूचना , लक्ष्य चयन तथा समस्या समाधान विमा से सार्थक नकारात्मक रूप से सहसम्बन्धित है। इससे स्पष्ट है कि ऐसे विद्यार्थी जो चिन्ति, तनावयुक्त तथा कुण्ठित होते हैं, उनमे नकारात्मक व्यावसायिक अभिवृत्ति पाई जाती है, वे व्यावसायिक सूचनाओं की जानकारी निम्न मात्रा में एकत्र कर पाते हैं, तथा व्यवसाय सम्बन्धी लक्ष्य का चयन तथा समस्याओं के समाधान में भी बेहतर नहीं होते हैं।

अत: सार रूप से कहा जा सकता है कि व्यक्तिव गुण A, B, C, G, H, Q_2 तथा Q_3 व्यावसायिक परिपक्वता से धनात्मक रूप से सम्बन्धित होते हैं जबकि व्यक्तिव गुण D, E, F, I, J, O, तथा Q_4 व्यावसायिक परिपक्वता के साथ नकारात्मक रूप से सम्बन्धित है।

अध्ययन का शैक्षिक महत्व एवं सुझाव

प्रस्तुत अध्ययन के द्वारा माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तिव तथा व्यावसायिक परिपक्वता के बारे में जानकारी प्राप्त होती है, जिससे ये स्पष्ट हो सकेगा कि इस स्तर पर उनमें कौन-कौन से व्यक्तिव गुण पाये जाते हैं तथा उनमें किस स्तर की व्यावसायिक परिपक्वता का विकास हो जाता है। इस अध्ययन के द्वारा इस बात की जानकारी हो सकेगी कि वे कौन से व्यक्तिव गुण है जो व्यावसायिक परिपक्वता के विकास में सहायक हैं तथा कौन से व्यक्तिव गुण व्यावसायिक परिपक्वता के विकास में बाधक बनते हैं। इस आधार पर शिक्षक, अभिभावक तथा परामर्शदाता विद्यार्थियों को सहायता

प्रदान कर सकेंगे। इस आधार पर शिक्षक विद्यार्थियों को दिन-प्रतिदिन होने वाली विभिन्न प्रकार के क्रियाओं में स्वतंत्र निर्णय लेने के लिए प्रेरित कर सकेंगे, जिससे उनमें व्यवसाय सम्बन्धी स्वतन्त्र चिन्तन के कौशल का विकास होगा। शिक्षक विद्यार्थियों को स्व के बारे में सूचनाओं के आदान-प्रदान करने के लिए प्रेरित करके उनको अपनी क्षमताओं व योग्यताओं से परिचित करा सकेंगे। समाचार पत्रों, पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने तथा परामर्शदाताओं से बातचीत के आधार पर शिक्षक व अभिभावक, बालकों को व्यावसायिक जगत के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रेरित कर सकेंगे। परामर्शदाता विद्यार्थियों से साक्षात्कार के द्वारा उनके अभिवृत्ति, रुचियों एवं कौशलों को जानकर उन्हें लक्ष्य के चयन में सहायता प्रदान कर सकेंगे। इसके अतिरिक्त परामर्शदाता उन्हे विभिन्न प्रकार के कौशलों के विकास के द्वारा व्यवसाय सम्बन्धी योजनाओं के निर्माण तथा व्यवसाय सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु भी सक्षम बना सकेंगे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर विद्यार्थियों को उनके व्यक्तिव के आधार पर सही व्यवसाय के चयन तथा यथार्थ के धरातल पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में सहायता प्रदान की जा सकेगी।

सन्दर्भ

क्राइट्स, जे.ओ., (1978) : ''थ्योरी एण्ड रिसर्च हैण्डबुक फॉर द कैरियर मेच्यूरिटी'', (सेकेण्ड एडीशन), मोन्टेरी, कैलीफोर्निया सी.टी.बी./मैकग्रा हिल

कुमार, एस. (2000) : ''वोकेशनल मेच्यूरिटी ऑफ 10+2 स्टूडेन्ट्स ऑफ द एकेडमिक एण्ड वोकेशनल स्ट्रीम्स इन रिलेशन टू द पर्सनालिटी, एचीवमेन्ट मोटीवेशन एण्ड सोशियो इकोनामिक स्टेट्स'', पी-एच.डी. (एजूकेशन) पंजाब यूनिवर्सिटी

गुप्ता, निर्मला (1991) : ''कैरियर मेच्यूरिटी ऑफ इण्डियन स्कूल स्टूडेन्ट्स'', अनुपमा पब्लिकेशन, नई दिल्ली

चन्द एच. (1979) : ''कोरिलेट्स ऑफ वोकेशनल मेच्यूरिटी'', पी-एच.डी. (एजूकेशन) पी.यू.

रॉस, डब्ल्यू.एफ. एण्ड रॉस, जी. (1957): बैकग्राउन्ड ऑफ वोकेशनल च्वाइस : ए स्टडी, पर्सोनेल एण्ड गाइडेन्स जर्नल वाल्यूम-35 (5) 270-275

वास्ता, वी. (2001) : ''सोशियो साइकोलॉजिकल डिफरेशिंयल ऑफ वोकेशनल मेच्यूरिटी विटवीन एडोलेसेन्ट्स ऑफ एकेडमिक एण्ड वोकेशनल स्ट्रीम्स'', पी-एच.डी. (एजूकेशन) पी.यू.

सुपुर, डी.ई. (1957) : ''द साइकोलॉजी ऑफ कैरियर'', न्यूयार्क हार्पर

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

शैक्षिक एवं आर्थिक स्तरानुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति

राजकुमारी कालरा * और **रेनू** **

सारांश

शिक्षा प्राप्त करके व्यक्ति अक स्वाबलंबी एवं गुणवान सामाजिक नागरिक बनकर राष्ट्रीय प्रगति में अपना योगदान देता है। वर्तमान समय में शिक्षा की प्रथम सीढ़ी के रूप में पूर्व प्राथमिक शिक्षा को महत्व प्राप्त है क्योंकि पूर्व प्राथमिक स्तर पर बालक विद्यालय जाने के लिए तैयार किये जाते हैं, जिससे प्रारंभिक स्तर पर होने वाले अपव्यय व अवरोधन को रोका जा सकता है। पूर्व प्राथमिक शिक्षा के विषय में अभिभावकों की अभिवृत्ति शिक्षा को प्रभावित करती है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य आर्थिक एवं शैक्षिक स्तरानुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना है। अध्ययन में न्यादर्श के रूप में आगरा शहर के दयालबाग क्षेत्र के पूर्व प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले 100 बालकों के अभिभावकों को लिया गया। अध्ययन उपकरण के रूप में पी.एस.वैंकटसन द्वारा निर्मित पैरेंटल एटीट्यूड टूवार्ड्स प्री-स्कूल एजूकेशन (2002) बिंदु मापनी का प्रयोग किया गया। प्रदत्त विश्लेषण के परिणाम स्वरूप पाया गया कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अधिकांश अभिभावकों ने सकारात्मक अभिवृत्ति प्रकट की। आर्थिक एवं शैक्षिक स्तरानुसार तुलनात्मक अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि अधिकांश अभिभावक पूर्व प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता को समझते हैं और अपने बालकों को इस स्तर की शिक्षा उपलब्ध कराना चाहते हैं।

शिक्षा का प्रभाव हमें अपने चारों ओर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। आदि काल

* रीडर, शिक्षा संकाय, दयालबाग एजूकेशनल इन्स्टीट्यूड
** एम.फिल.विद्यार्थी, शिक्षा संकाय, दयालबाग एजूकेशनल इन्स्टीट्यूड

से ही मनुष्य जो कुछ सीखता और ग्रहण करता चला आ रहा है, वह शिक्षा ही है। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति के विचार तथा व्यवहार में परिवर्तन एवं परिवर्द्धन होता है, उससे व्यक्ति तथा समाज को लाभ होता है। शिक्षा के समय अभाव में मानव समाज की सारी प्रगति रुक सकती है। जन्म के समय एक असहाय और दीन बालक धीरे-धीरे शिक्षा के प्रभाव से ही एक समुन्नत सामाजिक प्राणी बन सकता है।

शैशवावस्था का बालक के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार इस अवस्था में बालक का विकास तीव्र गति से होता है। जन्म के समय बच्चा कोरी स्लेट के समान होता है, इस पर जो अंकित किया जाता है बालक वैसा ही बन जाता है। यह अवयस्क जीव शिक्षा के माध्यम से ही वयस्क सामाजिक जीव में परिणित होता है। हमारे देश का भविष्य इन्हीं नन्हें बच्चों के हाथों में है। ये नन्हें बच्चे ही भविष्य के लिए राष्ट्रीय खजाना हैं। बच्चों को राष्ट्र का भविष्य मानते हुए ही राष्ट्र का कर्त्तव्य है कि बच्चों के विकास हेतु शैक्षिक वातावरण उपलब्ध कराये।

अनुसंधानों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि बच्चे के शारीरिक, भावात्मक तथा बौद्धिक विकास की दृष्टि से उसके प्रारंभिक 10 वर्ष सर्वाधिक महत्व के हैं। **राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)** ने भी बच्चों से संबंधित इस बात पर बल दिया है कि बच्चों के विकास पर पर्याप्त विनियोग किया जाये।

फोजिया, कादिर एवं सारिका (2009) ने पूर्व-प्राथमिक शिक्षा केंद्रों की शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन किया। इस अध्ययन का उद्देश्य पूर्व-प्राथमिक शिक्षा केंद्रों में शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना था। अध्ययन में 200 अभिभावकों का चयन किया गया, जिसमें 100 माताएं तथा 100 पिता थे, जिनके बालक 3-6 वर्ष के बालक थे। इन बालकों में आधे आंगनबाड़ी जाने वाले बच्चों के अभिभावक तथा आधे पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों में जाने वाले बालकों के अभिभावक थे। इस अध्ययन के परिणाम स्वरूप पाया गया कि माता तथा पिता दोनों का समान मत यह था कि पूर्व-प्राथमिक शिक्षा केंद्र प्राथमिक शिक्षा की तैयारी कराते हैं।

भारत में पहले पूर्व-प्राथमिक शिक्षा जैसी कोई अवधारणा नहीं थी। यह पाश्चात्य प्रत्यय है। इसके जन्मदाता फ्रॉबैल को स्वीकार किया जाता है। भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का सूत्रपात करने और शिशु विद्यालयों को लोकप्रिय बनाने का श्रेय ईसाई

मिशनरियों को है, किंतु वर्तमान समय में भारत में स्थान-स्थान पर पूर्व-प्राथमिक विद्यालय खोले जा रहे हैं, जिससे स्पष्ट है कि पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का महत्व हमारे देश में भी स्वीकार किया जाने लगा है। सरकार द्वारा एवं गैर सरकारी संगठनों व निजी तौर पर भी पूर्व-प्राथमिक विद्यालय खोले जाने लगे हैं। पूर्व-प्राथमिक विद्यालय खुल जाने मात्र से ही उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती। बच्चों के अभिभावकों की अभिवृत्ति पर ही पूर्व-प्राथमिक शिक्षा की सफलता निर्भर करती है। अभिभावक अपने बालकों को विद्यालय भेजेंगे, तभी वे शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति जानने हेतु यह शोध पत्र लिखा गया है।

यह सर्वविदित सत्य है कि शिक्षा किसी भी व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र के विकास की धुरी होती है। अशिक्षित नागरिकों के साथ कोई भी राष्ट्र विकसित देशों की कतार में खड़े होने की कल्पना भी नहीं कर सकता है। भारत में शिक्षा की समस्या आज भी ज्वलन्त रूप में विद्यमान है। 1950 में संविधान निर्माण के समय घोषणा की गयी थी कि धारा 45 में उल्लिखित 6-14 वर्ष तक के बालकों की नि:शुल्क व अनिवार्य शिक्षा के लक्ष्य को 10 वर्षों के अंदर ही प्राप्त कर लिया जायेगा। किंतु स्थिति यह है कि इस लक्ष्य की प्राप्ति आज तक नहीं हो सकी है। इस लक्ष्य के पूर्ण न होने का एक कारण कक्षा एक व दो में होने वाला अपव्यय व अवरोधन भी हो सकता है, जिसे रोकने के लिए पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का प्रत्यय सामने आया। भारत में प्रत्येक स्थान पर विशेष रूप से शहरी क्षेत्र में नर्सरी स्कूलों की आवश्यकता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। शिक्षा की इस आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए बहुत बड़ी मात्रा में पूर्व-प्राथमिक विद्यालय खुल रहे हैं।

वैसे तो परिवार बालक की प्रथम पाठशाला कहलाता है, किंतु बालक को औपचारिक एवं विधिवत् शिक्षा प्राप्त करने हेतु विद्यालय ही जाना पड़ता है। पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों में 3-6 आयु वर्ग के बालक शिक्षा ग्रहण करते हैं, लेकिन उन्हें विद्यालय भेजने का दायित्व उनके अभिभावकों का होता है। पूर्व-प्राथमिक स्तर पर बालक अपने-आप निर्णय नहीं ले सकता, उसके भविष्य के विषय में उनके अभिभावक ही सोचते हैं। उनके लिए क्या सही है, क्या गलत, इसका निर्णय अभिभावक ही करते हैं। अत: पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति को जानने के लिए यह शोध अध्ययन किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
2. पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति शैक्षिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति आर्थिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन का सीमांकन

अध्ययन में केवल आगरा शहर के दयालबाग क्षेत्र के पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले बालकों के अभिभावकों को ही लिया गया है।

अध्ययन की परिकल्पना

1. पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति शैक्षिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।
2. पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति आर्थिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

शोध अध्ययन विधि

अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण शोध विधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन उपकरण

अध्ययन उपकरण के रूप में पी.एस. वैकटेसन द्वारा निर्मित 'पैरेन्टल एटीच्यूट स्केल टूवार्ड्स प्री प्राइमरी' (2002) एजुकेशन बिंदु मापनी का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन हेतु न्यादर्श चयन

अध्ययन में केवल आगरा शहर के दयालबाग क्षेत्र के पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले 100 बालकों के अभिभावकों को उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सोद्देश्य विधि द्वारा चयनित किया गया है। आर्थिक एवं शैक्षिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करने हेतु आर्थिक एवं शैक्षिक स्तर का विभाजन तीन-तीन वर्गों में किया है। आर्थिक स्तर का वर्गीकरण उच्च, औसत एवं निम्न आर्थिक स्तर में चतुर्थांश

विचलन के द्वारा किया गया है। शैक्षिक स्तर का विभाजन भी तीन स्तरों परास्नातक, स्नातक एवं अन्त:स्नातक में करके अध्ययन किया गया।

अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियाँ

अध्ययन के परिणामों को व्यावहारिक रूप में सार्थक दृष्टि से प्राप्त करने हेतु निम्न सांख्यिकीय का प्रयोग किया गया है।

1. प्रतिशत
2. काई वर्ग

परिणाम एवं व्याख्या

उपकल्पनाओं के परीक्षण हेतु काई वर्ग परीक्षण का प्रयोग किया गया है। जिससे पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का शैक्षिक व आर्थिक स्तरानुसार अध्ययन किया जा सके।

1. पूर्व-प्राथमिक शिखा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन

प्रस्तुत उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सकारात्मक एवं नकारात्मक अभिवृत्ति के लिए प्रतिशत की गणना की गयी।

तालिका-1

पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन

अभिवृत्ति	संख्या	प्रतिशत
सकारात्मक	56	56 प्रतिशत
नकारात्मक	44	44 प्रतिशत
योग	**100**	**100 प्रतिशत**

तालिका-1 का आलोचनात्मक दृष्टि से अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि पूर्व-प्राथमिक शिखा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति सकारात्मक व नकारात्मक दृष्टिगत होती है। 100 में से 56 बालकों के अभिभावकों ने पूर्व प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता पर सकारात्मक अभिवृत्ति दर्शायी तथा 44 ने नकारात्मक अभिवृत्ति दिखायी।

2. पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति शैक्षिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति शैक्षिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु काई वर्ग परीक्षण का प्रयोग किया गया है। उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु शैक्षिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति को तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका-2

पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति शैक्षिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

अभिवृत्ति	परास्नातक	स्नातक	अन्त:स्नातक	योग
सकारात्मक	26 (23.52)	21 (18.48)	9 (14)	56
नाकारात्मक	16 (18.48)	12 (14.52)	16 (11)	44
योग	42	33	25	100
X^2=5.42			.05 स्तर पर सार्थक अंतर नहीं	

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की शैक्षिक स्तरानुसार अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु शैक्षिक स्तर को तीन स्तरों में बांटा गया है। परास्नातक, स्नातक, अन्त:स्नातक। परास्नातक अभिभावकों की संख्या सर्वाधिक 42 है। स्नातक अभिभावकों की संख्या परास्नातक से कम अर्थात् 33 है तथा अन्त:स्नातक की संख्या सबसे कम है। परास्नातक अभिभावकों की सकारात्मक अभिवृत्ति संख्या में सर्वाधिक 26 है। अन्त: स्नातक अभिभावकों की सकारात्मक अभिवृत्ति संख्या में सबसे कम 9 है, जिससे स्पष्ट होता है कि अधिक पढ़े-लिखे अभिभावकों की अभिवृत्ति पूर्व प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता के प्रति अधिक सकारात्मक है। वे शिक्षा के महत्व को भली-प्रकार से समझते और महत्व देते हैं। शैक्षिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का काई वर्ग की गणना करने पर काई वर्ग का मान 5.42 प्राप्त हुआ जो स्वतंत्रता के अंश 2 पर .05 सार्थकता स्तर पर तालिका मान से कम है। अत: शून्य परिकल्पना स्वीकार की जाती है और कहा

जा सकता है कि शैक्षिक स्तरानुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति में .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

3. पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति आर्थिक स्तरानुसार अभिावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति आर्थिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु काई-वर्ग परीक्षण का प्रयोग किया गया है। उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु अभिभावकों की अभिवृत्ति को निम्न तालिका में प्रस्तुत किया गया है-

तालिका-3

पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति आर्थिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

अभिवृत्ति	उच्च आर्थिक स्तर	औसत आर्थिक स्तर	निम्न आर्थिक स्तर	योग
सकारात्मक	17 (13.44)	28 (28)	11 (14.56)	56
नाकारात्मक	7 (10.56)	22 (22)	15 (11.44)	44
योग	24	50	26	100
X^2=4.54		.05 स्तर पर सार्थक अंतर नहीं		

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि आर्थिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति को तीन स्तरों उच्च, औसत और निम्न स्तर पर अध्ययन किया गया। उच्च आर्थिक स्तर के अभिभावकों में 17 ने सकारात्मक अभिवृत्ति प्रकट की तथा 7 की नकारात्मक अभिवृत्ति देखी गयी। औसत आर्थिक स्तर के अभिभावकों की कुल संख्या 50 पायी गयी, जिनमें से 28 की सकारात्मक तथा 22 की नकारात्मक अभिवृत्ति पाई गयी। निम्न आर्थिक स्तर के बालकों के अभिभावकों में से 11 ने सकारात्मक तथा 15 ने नकारात्मक अभिवृत्ति दर्शायी। औसत आर्थिक स्तर के अभिभावकों की सकारात्मक अभिवृत्ति संख्या सर्वाधिक 28 परिलक्षित होती है तथा उच्च आर्थिक स्तर के अभिभावकों की नकारात्मक अभिवृत्ति संख्या 7 पाई गयी, जो कि सबसे न्यूनतम थी।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति आर्थिक स्तरानुसार अभिभावकों की अभिवृत्ति पर काई-वर्ग की गणना करने पर मान 4.54 प्राप्त हुआ, जो तालिका में स्वतंत्रता के अंश 2 तथा .05 सार्थकता स्तर पर तालिका मान से कम है। अत: शून्य परिकल्पना स्वीकार की जाती है तथा कहा जा सकता है कि आर्थिक स्तरानुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति में .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

संदर्भ

भावे, कमला (1983) : पूर्व प्राथमिक शिक्षा की समस्याएं और प्रवृत्तियां, दि मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड।

मिलर, (1992) : पैरेन्टल एटीट्यूडस टूवार्डस इन्टीग्रेसन, टॉपिक इन अर्ली चाइल्डहुड स्पेशल एजूकेशन, वाल्युम-12, नम्बर-2 ।

मुरलीधरन, आर. तथा बनर्जी, उमा (1961) : ए गाइड बुक फॉर नर्सरी स्कूल टीचर्स, न्यू देहली।

यबान्सी, दिलेर एवं एजीटिमी बोलुमु (2009) : पैरेन्टल एटीट्यूड टूवार्ड्स इंग्लिश एजूकेशन फॉर किण्डरगार्डन स्टूडेन्ट्स इन तुर्की, कस्तामोनू एजूकेशन जनरल, वॉल्यूम-7, नम्बर-1।

वेल्स एवं वो (2008) : अन्डरस्टैन्डिंग द पर्सपेस्टिव ऑफ नार्थन अरापाहो प्री स्कूल पैरेन्टल एटीट्यूडस एण्ड बिलीपस रिगार्डिंग लेन्गुएज रिवाइटलाइजेशन एण्ड कल्चर मेन्टीनेंस, डजरटेशन एब्स्टेक्ट इण्टरनेशनल, वाल्यूम-61, नंबर-37।

वैंकटेशन पी एस (2002) : मैन्युअल फॉर पैरेन्टल एटीट्यूड्स स्केल टूवार्ड्स प्री स्कूल एजूकेशन, वेदांत पब्लिकेशन, लखनऊ।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

उच्च प्राथमिक स्तर की हिन्दी पाठ्यपुस्तकों में निहित जीवन कौशल

रंजना वर्मा* और **सुबोध कुमार****

सार संक्षेप

शिक्षा का प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। शिक्षा के माध्यम से ही हम बालकों को संस्कारवान बनाते है तथा वर्तमान समय में जीवन में आने वाली समस्याओं का सामना करने लायक बनाने का कार्य भी शिक्षा ही करती है। आज हम जिस वैश्विक परिवेश में निवास कर रहे हैं, उसके लिए जीवन कौशलों की महती आवश्यकता है, क्योंकि आज हम बालक को सम्पूर्ण विश्व के लिए तैयार कर रहे हैं। इसमें हमारी पाठ्य पुस्तकें अहम भूमिका निभाती हैं।

इस शोध-पत्र में कक्षा 6, 7, 8 की हिन्दी भाषा की पुस्तकों में निहित जीवन कौशलों का अध्ययन किया गया है तथा प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ है कि बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित हिन्दी भाषा की पाठ्य पुस्तकों में जीवन कौशलों का परावर्तन अधिक संतोषजनक नहीं है, जबकि विद्यार्थियों का यह स्तर जीवन कौशलों के विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी है। अत: इस स्तर पर और अधिक जीवन कौशल समाहित किये जाने की आवश्यकता है।

शिक्षा मानव जीवन का सबसे आवश्यक संस्कार है। बालक की शिक्षा सामान्यत: उसके घर से प्रारम्भ हो जाती है। तत्पश्चात् बालक को शिक्षा प्रदान करने के लिए विद्यालय भेजा जाता है, जहां बालक को शैक्षिक गतिविधियों के अतिरिक्त सामाजिक गतिविधियों को भी कराया जाता है, जिससे बालक समाज में बेहतर समायोजन स्थापित

* शोध छात्रा, शिक्षा संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
* वर्तमान डीन, शिक्षा संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

कर सके तथा स्वयं का व समाज का विकास कर सके।

बालक प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों ही साधनों से ज्ञान प्राप्त करता है। प्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा प्राप्त ज्ञान सीमित होता है, क्योंकि इसके लिए कुछ विशेष प्रकार की परिस्थितियों तथा सुविधाओं की अवश्यकता होती है। इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए मानव सम्पर्क तथा उचित वातावरण की आवश्यकता होती है, जो समाज द्वारा प्राप्त होता है। जबकि अप्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करने की लिए अन्य व्यक्तियों के अनुभव, संस्कृति, भाषा, पुस्तकों आदि की आवश्यकता पड़ती है। ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम कुछ भी हो, लेकिन उद्देश्य मनुष्य का सर्वांगीण विकास होना चाहिए, जिससे वह समाज के साथ समायोजन कर सके व बेहतर जीवन यापन कर सके।

जीवन कौशल

जीवन कौशल वे गुण हैं जिनके द्वारा व्यक्ति समाज के साथ, अनुकूल तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के साथ समायोजन कर सके तथा स्वयं का व समाज का विकास कर सके और एक आदर्श जीवन व्यतीत कर सके, जो पूर्णतः दूसरों पर निर्भर न हो।

Life skills are those abilities or living skill for adoptive positive behaviours that enables individual to deal effectively with demand and challenges of every day life.

(W.H.O. – 1997)

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 10 महत्वपूर्ण जीवन कौशलों को परिमाणित किया है तथा इस दिशा में जन शाला का भी योगदान रहा है। ये निम्न हैं–

1. क्रान्तिक सोच
2. रचनात्मक सोच
3. निर्णय लेना
4. समस्या समाधान
5. अन्तर्जातीय सम्बन्ध
6. प्रभावशाली सम्प्रेषण
7. तनावों के साथ समायोजन
8. भावनाओं के साथ समायोजन
9. स्वयं जागरुकता
10. सहृदयता।

समस्या कथन: उच्चप्राथमिक स्तर की हिन्दी भाषा की पाठ्य पुस्तकों में निहित जीवन कौशलों का अध्ययन।

उद्देश्य

1. उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी जीवन कौशलों की पहचान करना।
2. उच्च प्राथमिक स्तर (की कक्षा 6, 7, 8 की हिन्दी) भाषा की पुस्तकों का जीवन कौशल के सन्दर्भ में विश्लेषण करना।
3. जीवन कौशलों का पाठ्य पुस्तकों के सन्दर्भ में सुझाव देना।

परिसीमन

1. इस अध्ययन हेतु केवल कक्षा 6, 7, 8 की हिन्दी भाषा की पाठ्य पुस्तकों का जीवन कौशल के सन्दर्भ में विश्लेषण किया गया है।
2. विश्लेषण की जाने वाली पुस्तकें उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा अनुमोदित हैं।
3. हिन्दी की पाठ्य पुस्तकों में निहित संस्कृत के अध्यायों का विश्लेषण नही किया गया है।

न्यादर्श

चुने गये जीवन कौशलों को ढूंढने के लिए निम्न पाठ्य पुस्तकों को न्यादर्श चुना गया–

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	विषय	कक्षा	परिषद
1.	भाषा किरण	हिन्दी	6	उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद
2.	भाषा किरण	हिन्दी	7	उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद
3.	भाषा किरण	हिन्दी	8	उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध कार्य हेतु विवराणात्मक शोध प्रविधि को अपनाया गया है।

विषय वस्तु विश्लेषण

हिन्दी भाषा की पाठ्य पुस्तकों का संकेतीकरण निम्न चरणों में पूरा किया गया है।

1. चयनित पुस्तक को लिया।
2. प्रत्येक पुस्तक में शब्द, वाक्य तथा पैराग्राफ जिसमें चिन्हित जीवन कौशल परावर्तित हो रहा था, उसके नीचे रेखा खीचीं।

3. चिन्हित जीवन कौशलों को शब्द, वाक्य, पैराग्राफ के ऊपर लिखा।
4. चिन्हित जीवन कौशल प्रत्यक्ष हैं या अप्रत्यक्ष हैं, यह भी नोट किया। जीवन कौशल जब विषय वस्तु में स्वयं परावर्तित होता है तो इसे प्रत्यक्ष तथा जब उसकी व्याख्या अध्यापक द्वारा की जाती है तो उसे अप्रत्यक्ष जीवन कौशल कहते हैं।

प्रदत्तों का विश्लेषण: प्रस्तुत शोध का प्रपत्र का शीर्षक ''उच्च प्राथमिक स्तर की हिन्दी भाषा की पाठ्य पुस्तकों में निहित जीवन कौशलों का अध्ययन है'' जिसमें उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए आवश्यक चिन्हित कौशलों को पाठ्य पुस्तकों में खोजना है। ये जीवन कौशल निम्न हैं– क्रान्तिक सोच, स्थापनात्मक सोच निर्णय लेना, समस्या समाधान, अर्न्तजातीय सम्बन्ध, प्रभावशाली सम्प्रेषण, तनावों के साथ समायोजन, संवेगों के साथ समायोजन, स्वयं जागरुकता व सहृदयता।

विषय वस्तु के विभिन्न अध्यायों से परावर्तित होने वाले जीवन कौशलों को पहचानकर उनकी आवृत्ति निकाली तथा सारणी बनायी।

तालिका-1

हिन्दी भाषा की कक्षा 6 की पाठ्य पुस्तक के लिए

क्रमांक	जीवन कौशल	आवृत्ति	परावर्तन प्रतिशत		
			प्रत्यक्ष	अप्रत्यक्ष	
1.	क्रान्तिक सोच	6	6	0	9.3
2.	रचनात्मक सोच	5	5	0	7.8
3.	निर्णय लेना	7	4	3	10.9
4.	समस्या समाधान	0	0	0	
5.	प्रभावशाली सम्प्रेषण	11	11	0	17.1
6.	अन्तर्जातीय संबंध	4	4	0	6.2
7.	तनावों के साथ समायोजन	7	7	0	10.9
8.	संवेगों के साथ समायोजन	13	11	2	20.3
9.	स्वयं जागरुकता	7	6	1	10.9
10.	सहृदयता	4	3	1	6.2
	योग	64			

कक्षा 6 की हिन्दी की पाठ्य पुस्तक में जीवन कौशलों का परावर्तन 64 बार हुआ है, जिसमें क्रान्तिक सोच 6 बार, रचनात्मक सोच 5 बार, निर्णय लेना 7 बार, समस्या समाधान कहीं पर भी नही है, प्रभावशाली सम्प्रेषण 11 बार, अन्तर्जातीय संबंध 4 बार, तनावों के साथ समायोजन 7 बार, संवेगों के साथ समायोजन 13 बार, स्वयं जागरुकता 7 बार तथा सहृदयता 4 बार परावर्तित हुई है तथा प्राप्त आंकड़ों का प्रतिशत निकालने पर क्रान्तिक सोच 9.3 प्रतिशत, रचनात्मक सोच 9.8 प्रतिशत, निर्णय लेन 10.9 प्रतिशत, प्रभावशाली सम्प्रेषण 17.1 प्रतिशत, अन्तर्जातीय संबंध 6.2 प्रतिशत, तनावों के साथ समायोजन 10.9 प्रतिशत, संवेगों के साथ समायोजन 20.3 प्रतिशत, स्वयं जागरुकता 10. 9 प्रतिशत एवं सहृदयता 6.2 प्रतिशत है।

हिन्दी भाषा की कक्षा 7 की पाठ्य पुस्तक में जीवन कौशलों का परावर्तन 98 बार हुआ है, जिसमें क्रान्तिक सोच 18 बार, रचनात्मक सोच 14 बार, निर्णय लेना 13 बार, समस्या समाधान 4 बार, प्रभावशाली सम्प्रेषण 7 बार, अन्तर्जातीय सम्बन्ध 3 बार, तनावों

तालिका-2

हिन्दी भाषा की कक्षा 7 की पाठ्य पुस्तक के लिए

क्रमांक	जीवन कौशल	आवृत्ति	परावर्तन प्रतिशत		
			प्रत्यक्ष	अप्रत्यक्ष	
1.	क्रान्तिक सोच	18	18	0	18.3
2.	रचनात्मक सोच	14	13	1	14.2
3.	निर्णय लेना	13	10	3	13.2
4.	समस्या समाधान	4	4	0	4.08
5.	प्रभावशाली सम्प्रेशण	7	7	0	7.1
6.	अन्तर्जातीय संबंध	3	2	1	3.06
7.	तनावों के साथ समायोजन	7	6	1	7.14
8.	संवेगों के साथ समायोजन	8	7	1	8.16
9.	स्वयं जागरुकता	18	16	2	18.6
10.	सहृदयता	6	6	0	6.12
	योग	98			

के साथ समायोजन 7 बार, संवेगों के साथ समायोजन 8 बार, स्वयं जागरुकता 18 बार, सहृदयता 6 बार परावर्तित हुई है। प्राप्त आंकड़ों का प्रतिशत निकालने पर क्रान्तिक सोच 18.3 प्रतिशत, रचनात्मक सोच 14.2 प्रतिशत, निर्णय लेना 13.2 प्रतिशत, समस्या समाधान 4.08 प्रतिशत, प्रभावशाली सम्प्रेषण 7.1 प्रतिशत, अन्तर्जातीय संबंध 3.06 प्रतिशत, तनावों के साथ समायोजन 7.14 प्रतिशत, संवेगों के साथ समायोजन 8.16 प्रतिशत, स्वयं जागरुकता 18.6 प्रतिशत तथा सहृदयता 6.12 प्रतिशत है।

हिन्दी भाषा की कक्षा 8 की पाठ्य पुस्तक में जीवन कौशलों का परावर्तन 71 बार हुआ है, जिसमें क्रान्तिक सोच 8 बार, रचनात्मक सोच 15 बार, निर्णय लेना 6 बार, समस्या समाधान 3 बार, प्रभावशाली सम्प्रेषण 7 बार, अन्तर्जातीय संबंध 7 बार, तनावों के साथ समायोजन 10 बार, संवेंगों के साथ समायोजन 5 बार, स्वयं जागरूकता 7 बार, सहृदयता 3 बार परावर्तित हुयी है। प्राप्त आंकड़ों का प्रतिशत निकालने पर क्रान्तिक सोच 11.2 प्रतिशत, रचनात्मक सोच 21.1 प्रतिशत, निर्णय लेना 8.4 प्रतिशत, समस्या समाधान

तालिका–3

हिन्दी भाषा की कक्षा 8 की पाठ्य पुस्तक के लिए

क्रमांक	जीवन कौशल	आवृत्ति	परावर्तन		प्रतिशत
			प्रत्यक्ष	अप्रत्यक्ष	
1.	क्रान्तिक सोच	8	7	1	11.2
2.	रचनात्मक सोच	15	13	2	21.1
3.	निर्णय लेना	6	6	0	8.4
4.	समस्या समाधान	3	3	0	4.2
5.	प्रभावशाली सम्प्रेषण	7	7	0	9.8
6.	अन्तर्जातीय संबंध	7	5	2	9.8
7.	तनावों के साथ समायोजन	10	7	3	14.08
8.	संवेगों के साथ समायोजन	5	5	0	7.04
9.	स्वयं जागरूकता	7	6	1	9.8
10.	सहृदयता	3	3	0	4.2
	योग	71			

4.2 प्रतिशत, प्रभावशाली सम्प्रेषण 9.8 प्रतिशत, अन्तर्जातीय संबंध 9.8 प्रतिशत, तनावों के साथ समायोजन 14.08 प्रतिशत, संवेगों के साथ समायोजन 7.04 प्रतिशत, स्वयं जागरूकता 9.8 प्रतिशत सहृदयता 4.2 प्रतिशत है।

निष्कर्ष

किसी भी शोध समस्या से संबंधित अनुमान तथा निष्कर्ष निकालना आसान नहीं होता है, इस कार्य को करने के लिए विशेष कौशल की आवश्यकता होती है। परिणामों का विश्लेषण करने में शोधकर्त्ता का गहन प्रयत्न व स्पश्ट दृष्टिकोण आवश्यक है। इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर प्रस्तुत शोध समस्या से सम्बन्धित निम्नांकित निष्कर्ष निकाले गये हैं–

1. आंकड़ों के विश्लेषण करने से प्राप्त परिणामों से यह प्रदर्शित होता है कि चिन्हित 10 जीवन कौशल इन पुस्तकों में वांछनीय स्तर के नही हैं, किन्तु विषय वस्तु में निहित कुछ जीवन कौशल संतोषजनक स्तर के हैं।
2. हिन्दी भाषा की कक्षा 6 की पाठ्य पुस्तक में 20 अध्यायों तथा 88 पृष्ठों में सभी जीवन कौशलों का परावर्तन 64 बार हुआ है, जिसमें संवेगों के साथ समायोजन, प्रभावशाली सम्प्रेषण, तनावों के साथ समायोजन, निर्णय लेना स्वयं जागरुकता आदि का परावर्तन अन्य कौशलों की तुलना में संतोषजनक है, किन्तु समस्या समाधान अन्तर्जातीय संबंध तथा सहृदयता का परावर्तन असंतोष जनक है।
3. हिन्दी भाषा की कक्षा 7 की पाठ्य पुस्तक का स्तर इन जीवन कौशलों के सन्दर्भ में कक्षा 6 की अपेक्षा उत्तम है, क्योंकि सम्पूर्ण पुस्तक के 26 अध्यायों व 116 पृष्ठों में सम्पूर्ण परावर्तन 98 बार हुआ, जो काफी अधिक है, जो अन्य सभी कौशलों की अपेक्षा अधिक है।
4. हिन्दी भाषा की कक्षा 8 की पाठ्य पुस्तक में 28 अध्यायों व 106 पृष्ठों में कुल 71 बार जीवन कौशलों का परावर्तन हुआ, जो तुलनात्मक रूप में कक्षा 6 की अपेक्षा अधिक व कक्षा 7 की अपेक्षा कम है। इसमें क्रान्तिक सोच व तनावों के साथ समायोजन का परावर्तन क्रमशः 15 व 10 बार है, जो संतोषजनक है किन्तु सहृदयता व समस्या समाधान का परावर्तन असंतोषजनक है।
5. तीनों पुस्तकों में सयुक्त रूप से देखने पर अध्यायों की कुल संख्या 74 तथा पृष्ठों की कुल संख्या 310 प्राप्त हुई, जिसमें जीवन कौशलों का परावर्तन 233 बार ही हुआ, जो अपेक्षाकृत कम है।

अधिकांश जीवन कौशलों का परावर्तन प्रत्यक्ष रूप में ही हुआ, कुछ ही जीवन कौशल अप्रत्यक्ष रूप से परावर्तित हुए हैं अर्थात सामान्य बुद्धि का बालक स्वयं पुस्तक को पढ़कर उसमें निहित जीवन कौशल समझ सकता है।

उपर्युक्त परिणामों के आधार पर शोधकर्त्ता ने यह निष्कर्ष निकाला है कि उच्च प्राथमिक स्तर की बेसिक शिक्षा परिषद उ.प्र. द्वारा संचालित हिन्दी भाषा की पाठ्य पुस्तकों में जीवन कौशलों का परावर्तन अधिक संतोषजनक नहीं है, जबकि विद्यार्थियों का यह स्तर जीवन कौशलों की शिक्षा के लिए अत्यन्त उपयोगी है। अतः इस स्तर पर पाठ्यक्रम में अधिक जीवन कौशलों को समहित किया जाना चाहिए।

शैक्षिक महत्व

शिक्षा के द्वारा ही बालकों के मन मष्तिस्क तथा आत्मा को सुदृढ़ बनाया जा सकता है और उनके व्यक्तित्व का बहुमुखी विकास किया जा सकता है। शिक्षा प्रदान करने का सरल व सीधा माध्यम अधिकांशतः पुस्तकें ही हैं, अतः पाठ्य पुस्तकों में निहित विषय वस्तु में उन समस्त कौशलों एवं गुणों को समाहित किया जाना अत्यन्त आवश्यक है जो बालकों के सम्पूर्ण विकास के लिए महत्वपूर्ण है। जीवन कौशलों को यदि उचित स्थान प्रदान किया जाय व अध्यापकों द्वारा उनकी सही व्याख्या की जाए तो बालकों का वर्तमान समय के अनुसार उत्तम जीवन जीने योग्य बनाया जा सकता है।

संदर्भ

कपिल, एच.के. अनुसंधान विधियाँ, एच.पी. भार्गव बुक हाउस, पृष्ठ सं.-113-123, 320-322

जनशाला दर्पण, उ.प्र. लखनऊ मार्च 2004

भाषा किरण, कक्षा-6 पाठ्य पुस्तक विभाग, शिक्षा निदेशालय (बेसिक), उ.प्र. लखनऊ, वर्ष 2007-08

भाषा किरण, कक्षा-7 पाठ्य पुस्तक विभाग, शिक्षा निदेशालय (बेसिक), उ.प्र. लखनऊ, वर्ष 2006-07

भाषा किरण, कक्षा-8 पाठ्य पुस्तक विभाग, शिक्षा निदेशालय (बेसिक), उ.प्र. लखनऊ, वर्ष 2007-08

मूलेन डेना (1981), ए कनसेप्चुअल फ्रेमवर्क फॉर द लाइफ स्किल प्रोग्राम www.eric.gov

सिंह, अरूण कुमार, मनोविज्ञान, समाशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ मोतीलाल, नई दिल्ली, बनारसीदास, बंगलों रोड, पृष्ठ सं0-195-196

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता और अधिगम क्षमता

कमलेश कुमार चौधरी*

सारांश

व्यक्ति के व्यवहार के प्रदर्शन में संवेग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संवेग के उदय होने पर व्यक्ति में अतिरिक्त शक्ति का संचार होता है। फलतः वह ऐसे-ऐसे कार्य कर दिखाता है, सामान्य स्थिति में जो इसके लिए सम्भव नहीं होते हैं, साथ ही संवेगों के कारण ही कभी-कभी व्यक्ति सामान्य क्रियाएं भी नहीं कर पाता है। इस प्रकार के परस्पर विरोधी परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि संवेग एक जटिल भावनात्मक मानसिक क्रिया है। अतः शिक्षा द्वारा इनका समुचित विकास किया जाना वांछनीय है। जो किशोर संवेगात्मक रूप से परिपक्व होते हैं, उनका अपनी भावनाओं के प्रदर्शन पर पूर्ण नियंत्रण होता है। इसके विपरीत जो किशोर संवेगात्मक रूप से अपरिपक्व होते हैं, वे इसके इतर व्यवहार करते हैं। अतः माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थी, जो उत्तर किशोरा अवस्था में हैं, उनकी संवेगात्मक परिपक्वता कैसी है? क्या इन विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता में लिंगभेद, निवास स्थान एवं शैक्षिक संधारा के आधार पर कोई अन्तर है अथवा नहीं? यह जानने का प्रयास इस अध्ययन में किया गया है।

शिक्षा मानव जीवन के विकास की आधारशिला है। शिक्षा से ही व्यक्ति की पहचान एक बौद्धिक एवं सुसंस्कृत मानव के रूप में होती है। मनुष्य में सामाजिक गुणों को विकसित करने एवं उसके दृष्टिकोण को विस्तृत बनाने से शिक्षा की महती भूमिका को अस्वीकार नही किया जा सकता। शिक्षा एक ऐसा आधार है, जिस पर समाज या राष्ट्र की प्रगति निर्भर

* उपाचार्य, शिक्षा विभाग, एम.जे.पी. रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली, (उ.प्र.)

करती है। राष्ट्रीय विकास में शिक्षा की महती भूमिका को स्वीकार करते हुए शिक्षा आयोग ने कहा है कि ''भारत के भाग्य का निर्माण इस समय उसके अध्ययन कक्षों में हो रहा है। स्कूल से निकलने वाले विद्यार्थियों की योग्यता और संख्या पर ही राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के इस महत्वपूर्ण कार्य की सफलता निर्भर करेगी, जिसका प्रमुख लक्ष्य हमारे रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाना है।''

नि:संदेह किसी भी सभ्य समाज के लिए शिक्षा प्राण है। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। शिक्षा द्वारा ही व्यक्ति का समुचित शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, सांवेगिक, चारित्रिक एवं आर्थिक विकास होता है। व्यक्ति के व्यवहार के प्रदर्शन में संवेग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संवेगों के उदय होने पर व्यक्ति में अतिरिक्त शक्ति का संचार होता है तथा वह ऐसे-ऐसे कार्य कर दिखाता है, जो सामान्य स्थिति में उसके लिए संभव प्रतीत नहीं होते हैं। साथ ही संवेग के कारण कभी-कभी व्यक्ति सामान्य क्रियाएं भी नहीं कर पाता। इस प्रकार के परस्पर विरोधी परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि संवेग एक जटिल भावनात्मक मानसिक क्रिया है। अत: शिक्षा द्वारा इनका समुचित विकास किया जाना वांछनीय है। संवेगों के उत्पन्न होने पर व्यक्ति की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति में परिवर्तन आ जाता है। गुप्ता एवं गुप्ता (2008) के अनुसार ''संवेग वांव्तव में मानव उपद्रव की अवस्था होती है, जिसमें व्यक्ति अपनी सामान्य स्थिति में नहीं रहता है।''

सभी संवेग जन्मजात नहीं होते हैं, अपितु इनका सतत् विकास एवं स्थिरीकरण मानव अभिवृद्धि एवं विकास के साथ-साथ होता रहता है। किशोरावस्था में सांवेगिक तनाव अपनी चरम सीमा पर होता है। इस अवस्था में विरोधी मनोदशाएं दिखाई देती हैं। किसी परिस्थिति विशेष में किशोर अत्याधिक प्रसन्न तथा दूसरे अवसर पर वह अवसादपूर्ण दिखायी देता है। परंतु जो किशोर संवेगात्मक रूप से परिपक्व होते हैं, उनका अपनी भावनाओं के प्रदर्शन पर पूर्ण नियंत्रण होता है। इसके विपरीत जो किशोर सांवेगिक रूप से अपरिपक्व होते हैं, वे इसके इतर व्यवहार करते हैं। वंशानुक्रम, स्वास्थ्य, मानसिक योग्यता, पारिवारिक वातावरण आदि कारण व्यक्ति के संवेगात्मक विकास को प्रभावित करते हैं। व्यक्ति जैसे-जैसे परिपक्वता की तरफ बढ़ता है, उसमें सांवेगिक स्थिरता, सामाजिक समायोजन, व्यावसायिक अभिरुचि तथा आकांक्षाओं का विकास भी होता रहता है। किशोरावस्था में संवेगों की अभिव्यक्ति तीव्र होती है। अत: यह आवश्यक है कि इस अवस्था में संवेगात्मक विकास भली भांति हो। संवेगात्मक परिपक्वता के अभाव में व्यक्ति छोटी-छोटी समस्याओं से घबरा जाता है, हताशा एवं कुंठा से ग्रसित हो जाता है, साथ ही साथ कभी-कभी हताशा एवं निराशा में ऐसा कार्य कर देता है, जिससे उसका पूरा का पूरा

जीवन तबाह हो जाता है। इसके विपरीत यदि किसी व्यक्ति का संवेगात्मक विकास तुलनात्मक रूप से पूर्ण होता है, तो उसकी ग्रहण करने की क्षमता अधिक होती है, उसमें दमनकारी प्रवृत्तियां कम होंगी तथा चोट खाने की प्रवृत्ति अत्याधिक कम होगी। इन्हीं सब तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि उत्तर किशोरावस्था के माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों में संवेगात्मक परिपक्वता की स्थिति कैसी है? क्या इन विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता इनके लिंगभेद, निवास स्थान तथा शैक्षिक संधारा इत्यादि से प्रभावित है अथवा नही? एतद् निमित्त उपलब्ध संबंधित साहित्य का अवलोकन किया गया। जिसका विवरण निम्नवत है। यथा- सिद्दीकी (1976) ने अपने अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला कि अनुशासनहीन विद्यार्थियों की अपेक्षा अनुशासित विद्यार्थी सांवेगिक एवं सामाजिक रूप से अधिक परिपक्व थे। पाण्डेय (1982) ने निष्कर्ष निकाला कि संवेगात्मक परिपक्वता एक विकासात्मक प्रक्रिया है। यह आयु एवं अनुभव के आधार पर विकसित होती है। विद्यार्थियों की अपेक्षा शिक्षकों में संवेगात्मक परिपक्वता सार्थक रूप से अधिक थी। धामी (1974) ने अपने अध्ययन में पाया कि संवेगात्मक परपिक्वता विद्यालयी उपलब्धि को स्थायित्व प्रदान करता है। आर्या (1987) ने निष्कर्ष निकाला कि सुपीरियर बालक एवं बालिकाएं सांवेगिक रूप से अधिक परिपक्व थे। सबापथी (1986) ने अपने अध्ययन में पाया कि गणित, विज्ञान, सामान्य अध्ययन तथा कुल शैक्षिक उपलब्धि पर संवेगात्मक परिक्वता का धनात्मक प्रभाव पड़ता है। सिंह (1993) ने बालक एवं बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता का उच्च एवं निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के आधार पर अध्ययन किया। चौहान एवं भटनागर (2003) ने अपने अध्ययन में पाया कि उच्च किशोरावस्था के बालक बालिकाओं की अपेक्षा संवेगात्मक रूप से अधिक परपिक्व थे। Sudhir and Khiangte (1997) ने अपने अध्ययन में पाया कि ग्रामीण लड़कियों की अपेक्षा शहरी लड़कियां उच्च सृजनशील एवं सांवेगिक रूप से अधिक स्थिरता वाली थीं।

उपर्युक्त अध्ययनों के अवलोकन से विदित होता है कि कोई भी ऐसा अध्ययन प्राप्त नहीं हुआ, जिसमें माध्यमिक स्तरीय (उत्तर किशोरावस्था) विद्यार्थियों की लिंगभेद, निवास स्थान तथा शैक्षिक संधारा के आधार पर संवेगात्मक परपिक्वता को जानने का सम्यक् प्रयास एक साथ किया गया हो, इसी कमी की पूर्ति हेतु प्रस्तुत अध्ययन किया गया है।

पदों की परिभाषा-

प्रस्तुत अध्ययन में **'माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों'** से तात्पर्य सत्र 2008-09 में 12वीं कक्षा में अध्ययनरत (उत्तर किशोरावस्था) विद्यार्थियों से है तथा **'संवेगात्मक परिपक्वता'** से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है, जिसमें व्यक्तित्व अंतर्मन एवं अन्त:व्यक्ति दोनों प्रकार के

संवेगात्मक स्वास्थ्य को प्राप्त करने के लिए, व्यक्ति लगातार प्रयत्नशील रहता है। जिसके फलस्वरूप वह अपने संवेगों पर नियंत्रण रखते हुए अपना व्यवहार प्रदर्शित करता है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता की जानकारी प्राप्त करना।
2. लिंगभेद, निवास स्थान तथा शैक्षिक संधारा (कला एवं विज्ञान) के आधार पर माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता का अध्ययन करना।

परिकल्पना

लिंगभेद, निवास स्थान (शहरी/ग्रामीण) तथा शैक्षिक संधारा (विज्ञान/कला) के आधार पर माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता में सार्थक अंतर नहीं है।

शोध विधि

प्रस्तुत अध्ययन में शोध की वर्णनात्मक विधि को अपनाया गया है। दत्त संकलन अम्बेडकर नगर जनपद के 7 माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत 266 विद्यार्थियों, जिनमें 143 पुरुष तथा 123 महिला विद्यार्थी हैं, से किया गया है। विद्यालयों का चयन सप्रयोजन न्यादर्श विधि से किया गया है। दत्त संकलन हेतु उपकरण के रूप में सिंह एवं भार्गव द्वारा निर्मित ''इमोशनल मैटचुर्आटी स्केल'' को प्रयोग में लाया गया है। इस मापनी की विश्वसनीयता परीक्षण पुनः परीक्षण विधि द्वारा 6 माह के अंतराल पर 0.75 ज्ञात की गयी है। इस उपकरण की वैधता वाह्य कसौटी (external criteria) के आधार पर सिन्हा एवं सिन्हा के समायोजन मापनी के संवेगात्मक समायोजन संबंधी आयाम के साथ ज्ञात की गयी है और इसे वैध पाया गया। प्रदत्तों से निष्कर्ष निकालने हेतु मध्यमान, मानक विचलन तथा टी-मान की गणना की गयी है।

विश्लेषण व्याख्या एवं परिणाम

तालिका-1 के अवलोकन से विदित होता है कि माध्यमिक स्तरीय कुल विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता का मध्यमान 86.13 तथा मानक विचलन 19.57 पाया गया। यह मध्यमान इन विद्यार्थियों के सामान्य स्तर के संवेगात्मक स्थिरता का द्योतक है। माध्यमिक स्तरीय पुरुष एवं महिला विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता का मध्यमान एवं मानक विचलन क्रमशः 83.59 एवं 18.03 तथा 89.08 एवं 20.90 पाया गया। माध्यमिक स्तरीय पुरुष विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता का प्राप्त यह मध्यमान, इन विद्यार्थियों के सामान्य संवेगात्मक स्थिरता का सूचक है, जबकि महिला विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता का मध्यमान इनके अस्थिर संवेगात्मक स्थिरता को व्यक्त करता है। मानक

तालिका-1
माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता का विवरण

क्र.स.	समूह का नाम	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मान
1.	पुरुष विद्यार्थी	143	83.59	18.03	
2.	महिला विद्यार्थी	123	89.08	20.90	2.29*
3.	कुल विद्यार्थी	266	86.13	19.57	

* संकेत = 0.05 स्तर पर सार्थक।

विचलन से स्पष्ट होता है कि पुरुष विद्यार्थियों की तुलना में महिला विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता में अधिक असमानता थी। माध्यमिक स्तरीय पुरुष एवं महिला विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता के मध्य टी-मान 2.29 पाया गया। यह टी.मान, 264 df पर 0.05 स्तर पर सार्थक है। अत: इस संबंध में शून्य परिकल्पना अस्वीकार की गयी। इससे यह निष्कर्ष निकला कि माध्यमिक स्तरीय पुरुष विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता महिला विद्यार्थियों की अपेक्षा सार्थक रूप से अधिक थी। अत: कहा जा सकता है कि माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता उनके लिंगभेद से प्रभावित थी। अध्ययन का यह परिणाम चौहान एवं भटनागर (2003) के परिणाम के अनुरूप है।

तालिका-2 पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तरीय ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता का मध्यमान एवं मानक विचलन क्रमश: 88. 41 एवं 18.98 तथा 84.25 एवं 19.90 पाया गया। शहरी एवं ग्रामीण दोनों समूहों के विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता का यह मध्यमान, इन दोनों समूह के विद्यार्थियों के सामान्य संवेगात्मक स्थिरता का द्योतक है। मानक विचलन से स्पष्ट है कि ग्रामीण विद्यार्थियों की अपेक्षा शहरी विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता में अधिक असमानता थी। इन दोनों समूहों के मध्य टी-मान 1.73 पाया गया। यह टी-मान, 264 df पर 0.05 स्तर

तालिका-2
निवास स्थान के आधार पर माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता का विवरण

क्र.स.	समूह का नाम	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मान
1.	विद्यार्थी ग्रामीण	120	88.41	18.98	
2.	विद्यार्थी शहरी	146	84.25	19.90	1.73

पर सार्थक नहीं है। अत: इस संबंध में शून्य परिकल्पना अस्वीकार नहीं की गयी। इससे यह निष्कर्ष निकला कि माध्यमिक स्तरीय ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के संवेगात्मक परिपक्वता में सार्थक अंतर नहीं था। अत: कहा जा सकता है कि माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता उनके निवास स्थान से प्रभावित नहीं थी।

तालिका-3

शैक्षिक संधारा (कला एवं विज्ञान वर्ग) के आधार पर माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता का विवरण

क्र.स.	समूह का नाम	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मान
1.	विद्यार्थी -कला वर्ग	129	86.62	19.56	0.42
2.	विद्यार्थी - विज्ञान वर्ग	137	85.66	19.64	

तालिका-3 में प्रदर्शित माध्यमिक स्तरीय कला एवं विज्ञान वर्ग के विद्यार्थियों के मध्यमान एवं मानक विचलन पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि दोनों समूहों के मध्यमान एवं मानक विचलन क्रमश: 86.62 एवं 19.56 तथा 85.66 एवं 19.64 लगभग एक समान पाये गये। ये दोनों मध्यमान कला एवं विज्ञान वर्ग के विद्यार्थियों के समान्य स्तर के संवेगात्मक स्थिरता के द्योतक हैं। दोनों समूहों के मध्य संवेगात्मक परिपक्वता का टी-मान 0.40 पाया गया। यह टी-मान (264df पर) 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है। अत: शून्य परिकल्पना अस्वीकार नहीं की गयी। इससे यह निष्कर्ष निकला की माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता में शैक्षिक संधारा (कला एवं विज्ञान वर्ग) के आधार पर अंतर नहीं था।

निष्कर्ष

1. माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता सामान्य स्तर की थी।
2. माध्यमिक स्तरीय पुरुष विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता सामान्य स्तर, जबकि महिला विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता अस्थिर स्तर की पायी गयी। लिंग के आधार पर दोनों समूहों में सार्थक अंतर पाया गया। पुरुष विद्यार्थी, महिला विद्यार्थियों की अपेक्षा सार्थक रूप में अधिक परिपक्व पाये गये। महिला विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता में पुरुष विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक असमानता पायी गयी।
3. निवास स्थान के आधार पर माध्यमिक स्तरीय ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के

संवेगात्मक परिपक्वता में अंतर नहीं था। दोनों समूहों के विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता सामान्य स्तर की पायी गयी।

4. शैक्षिक संधारा (कला एवं विज्ञान वर्ग) के आधार पर माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता में सार्थक अंतर नहीं था। दोनों समूहों के विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता सामान्य स्तर की थी।

शैक्षिक निहितार्थ

इस अध्ययन के निष्कर्षों से विदित होता है कि माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की संवेगात्मक परिपक्वता, सामान्य स्थिर श्रेणी की थी। इससे स्पष्ट है कि इनका संवेगात्मक विकास सम्यक् रूप नहीं हो पा रहा है। यद्यपि कि संवेग व्यक्ति के व्यवहार प्रदर्शन को नियंत्रित एवं निर्देशित करते हैं। अतः परिवार, समाज एवं विद्यालय तीनों को ही किशोरों के संवेगात्मक विकास हेतु जिन बातों पर ध्यान देना वांछनीय है, उनका विवरण निम्नवत है:

- माता-पिता को चाहिए कि वे न तो किशोरों की उपेक्षा करें और न ही आवश्यकता से अधिक संरक्षण देकर, उनके संवेगात्मक विकास में अवरोधक बनें। उनकी भूमिका उचित दिशा-निर्देश प्रदान करना तथा परिवार के वातावरण को सुरक्षायुक्त आनन्ददायक एवं शांतिपूर्ण बनाए रखना होना चाहिए, जिससे बिना भय एवं असुरक्षा के किशोर विभिन्न कार्यों में भागीदार बनकर संवेगात्मक रूप से परिपक्व होने का अवसर प्राप्त कर सकें।
- विद्यालय में शिक्षण के साथ-साथ खेल-कूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम, निबंध, पोस्टर वाद-विवाद एवं प्रश्नोत्तर प्रतियोगिताओं का आयोजन इत्यादि ऐसे क्रिया-कलापों का आयोजन किया जाये, जो किशोरों के अनुकूल हों तथा जिससे अधिकांश विद्यार्थी उसमें सहभाग का अवसर प्राप्त कर सकेंगे। फलतः अपनी सफलता से उन्हें हर्ष होगा। इसके साथ ही साथ विद्यालय का वातावरण शांत, सौहार्दपूर्ण एवं लोकतांत्रिक बनाया जाना चाहिए, जिससे बिना किसी भय, अवरोध एवं भेदभाव के सभी छात्रों को पाठ्य-सहगामी क्रियाओं में सम्मिलित होकर अपने संवेगों के समुचित विकास का अवसर उपलब्ध हो सके। शिक्षकों को विद्यार्थियों की भावनाओं एवं समस्याओं पर ध्यान देना चाहिए, इससे उनमें स्वस्थ संवेगों के विकास का मार्ग प्रशस्त होगा।
- पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों, प्रिंट सामग्री तथा इलेक्ट्रानिक मीडिया के माध्यम से ऐसे लेखों, कहानियों, घटनाओं का चित्रण एवं प्रसारण तथा प्रदर्शन किया जाना चाहिए, जो बालकों के संवेगों का विकास कर, उन्हें सांवेगिक रूप से स्थिर बनने में मदद करें।

संदर्भ

आर्य, ए. (1987), इमोशनल मैच्युरिटी एंड वैल्यू ऑफ सुपिरियर चिल्ड्रन इन फैमिली, इन बुच, एम. बी. (एड) फोर्थ सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, एनसीईआरटी, नई दिल्ली, 1991, वाल्यूम–II, पृ.–1327

चौहान वी.एल. एंड भटनागर, टी. (2003), एसैसिंग इमोशनल मैच्युरिटी एक्सप्रैस एंड इमोशनल कोटैंट आफ अडोलेसेंट मेल एंड फिमेल स्टूडेंट इंडियन एजुकेशल अबस्ट्रैक्ट इन फैमिली, इन बुच, एम.बी. (एड) फोर्थ सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, एनसीईआरटी, नई दिल्ली, 1991, वाल्यूम–IV, जुलाई 2004, पृ.–33

धामी जी.एस. (1974), इंटलीजेंस, इमोशनल मैच्युरिटी एंड सोशियो–इकोनोमिक स्टेट्स एज फैक्टर इंडिकेटिव आफ सक्सस इन स्कोलास्टिक अचिवमेंट इन बुच, एम.बी. (एड) फोर्थ सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, एनसीईआरटी, नई दिल्ली, 1986

गुप्ता, एस.पी. एवं गुप्ता ए. (2008) उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. –160

पांडेय, पी.एन. (1982) डवलपमेंट आफ एन इमोशनल मैच्युरिटी स्केल, इन बुच, एम.बी. (एड) फोर्थ सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, एनसीईआरटी, नई दिल्ली, 1986, पृ.–947

सबपथी, टी. (1986), ए स्टडी आफ द रिलेशनशिप आफ मैनीफेस्ट, एंग्जिटी, इमोशनल एंड सोशियल मैच्युरिटी आफ स्टेण्डर्ड X स्टूडेंट टू देयर एकेडमिक अचीवमेंट, इन बुच, एम.बी. (एड) फोर्थ सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, एनसीईआरटी, नई दिल्ली, 1991, वाल्यूम–I, पृ.–847

सिद्दकी, एम.एम. (1976), सोशियल साइकोलॉजी स्टडी आफ स्टूडेंट बिहेवियर विद स्पेशल रिफ्रेंस टू इन्डिसिप्लीन, इन बुच, एम.बी. (एड) फोर्थ सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, एनसीईआरटी, नई दिल्ली, 1986, पृ.–212

सिंह, आर.पी. (1993), ए स्टडी आफ इमोशनल मैच्युरिटी आफ मेल एंड फिमेल स्टूडैंट आफ अपर एंड लोअर एसईएस, इन सिक्स्थ सर्वे आफ एजुकेशनल रिसर्च, एनसीईआरटी, नई दिल्ली, 2007, वाल्यूम–II, पृ.–334

शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1964–66), शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1966, पृ.–1

सुधीर एंड खिंगते (1997) इन सिक्स्थ सर्वे आफ एजुकेशनल रिसर्च, एनसीईआरटी, नई दिल्ली, 2007, वाल्यूम–II, पृ.–313

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 2, अगस्त 2010

चिंतक और चिंतन

एवरेट रेमर का शैक्षिक चिन्तन

देवेन्द्र सिंह*

सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि

निरन्तर गरिमापूर्ण चिन्तन ही भारतीय शैक्षिक संदर्भ की परिभाषित है, क्योंकि चिन्तक विश्व के किसी कोने में रहकर चिन्तन कर सकता है, जिसकी सार्वभौमिक उपादेयता अन्य संदर्भ में भी हो सकती है। वर्तमान वैश्विक सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक संरचना में कोई भी राष्ट्र अपनी शैक्षिक प्रणाली को सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन की आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं की पूर्ति के सशक्त माध्यम एवं उसके प्रति संवेदनशील होना चाहिए। शिक्षा में निरन्तर सुधार उसमें न लाना उसे रूढ़ियों एवं परम्पराओं में बाँध देना है। इस दृष्टकोण से शिक्षा को गत्यात्मक व उपादेय बनाये रखने हेतु इसके उद्देश्य को पुनर्परिभाषित कर स्थापित किया जाना चाहिए, जिससे शिक्षा जीवन की गुणत्मकता को कायम रखने वाली एक प्रक्रिया के रूप में सक्रिय बनी रह सके, क्यांकि विचार तथा विचानधाराएं चाहे किसी भी देश एवं किसी भी भाषा की हो हमें उन्हें उन्मुक्त भाव से ग्रहण करना चाहिए। इसीलिए सभी चिन्तक रहे हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में शोधकर्ता द्वारा उनके चिन्तन का विश्लेषणात्मक अध्ययन भारतीय शैक्षिक संदर्भ में किया गया है।

एवरेट रेमर का चिन्तन

निर्विद्यालयीकरण की अवधारणा का अंकुरण बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में उस समय हुआ, जब विश्व के दो विप्लवकारी शैक्षिक चिन्तक इवान इलिच व एवरेटर रेमर इस विषय में विचारमंथन करने हेतु अमेरिका के प्यूरटोरिको नगर में सन् 1958 में प्रथम बार मिले। अपने क्रान्तिकारी विचारों का प्रतिपादन इवान इलिच ने अपनी पुस्तक–

* एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, सतीश चन्द्र कालेज, बलिया (उ.प्र.)

'डी स्कूलिंग सोसाइटी' और एवरेटर रेमर ने 'स्कूल इज डेड' में किया है। सन् 1960 के उपरान्त संस्थागत शिक्षा के दोषों से सम्बन्धित कई चिन्तकों ने अपना ध्यान केन्द्रित किया। पाल गुडमैन ने 'कम्पलसरी मिस-एजूकेशन (1964), जोनाथन काजोल ने 'डेथ ऐट ऐन अर्ली एज', पीटर बकमैन ने 'एजूकेशन विदाउट्स स्कूल्स' आदि कृतियों की रचना की। इसके अतिरिक्त पावलो फ्रेरे ने पेडागाजी ऑफ आप्रेस्ड (1968) चर्चित कृति की रचना की। सभी चिन्तकों ने संस्थागत शिक्षा को नकारात्मक शिक्षा से सम्बोधित किया एवं सकारात्मक शिक्षा की कल्पना को साकार करने का सुझाव दिया। एवरेटर रेमर की मृत्यु 1998 में हुई।

एवरेट रेमर के शैक्षिक विचारों का उल्लेख उनकी अधोलिखित कृतियों के अन्तर्गत स्थापित है–

1. पावर फार आल फार नान (1998)
2. स्कूल एज डेड : आल्टर्नेटिव्स इन एजूकेशन (1971)
3. अनयूजूअल आइडियाज इन एजूकेशन (1971)
4. सोशल प्राब्लम्स एसोसिएटेड विथ द डेवलपमेंट ऑफ प्यूरटोरिको ड्यूरिंग लास्ट टू डिकेड्स (1960)
5. वेनेजुवेला ह्यूमन रिसोर्सेज (1964)
6. प्राब्लम्स ऑफ मेथडोलाजी इन द इनवेस्टिगेशन ऐंड प्लानिंग ऑफ एजूकेशन ऐंड ट्रेनिंग इन वेनेजुएला (1964)
7. थ्री वीक्स इन दि लाइफ आफ यूटोपिया (1976)
8. फ्यूचर ऑफ आल्टरनेटिव्स (1976)
9. सोशल प्लानिंग : कलैक्टेड पेपर्स (1968)
10. कम्प्रिहेन्सिव प्लानिंग इन स्टेट एजूकेशन एजेन्सीज (1968)

(डब्लूडब्लूडब्लू.एवरेटरेमर.काम)

उपर्युक्त कृतियों में 'स्कूल इन डेड : आल्टर्नेटिव्स इन एजूकेशन' एवरेट रेमर के शैक्षिक चिन्तन का आइना है, जिसमें रेमर ने संस्थागत शिक्षा के दोषों, निर्विद्यालयीकरण एवं वैकल्पिक शिक्षा पर विश्लेषणात्मक ढंग से प्रकाश डाला है।

विद्यालय की अवधारणा

एवरेट रेमर के अनुसार विद्यालय वह संस्था है, जहां शिक्षक द्वारा पर्यवेक्षित कक्षा में क्रमिक पाठ्यक्रम के अध्ययन हेतु विशिष्ट आयु तक के बालकों की पूर्णकालिक

उपस्थिति आवश्यक होती है। विद्यालय बाल्यावस्था को संस्थागत बना देते हैं। (रेमर–1971)

यद्यपि स्कूलों के पक्ष में यह कहा जाता है कि वे बाल्यावस्था व प्रौढ़ावस्था के मध्य में आवश्यक पुल का काम करते हैं और इस प्रकार वे एक अपरिपक्त बालकों को क्रमिक रूप से जिम्मेदार प्रौढ़ के रूप में परिवर्तित कर देते हैं। इस पर टिप्पणी करते हुए रेमर का मानना है कि स्कूल बालक को उसके बगीचे से ले जाते हैं और धीर–धीरे उसे भौतिक जगत के विशिष्ट नमूने बना देते हैं। स्कूल सम्पूर्ण बालक को प्रवेश देते हैं और सम्पूर्ण व्यक्ति को स्नातक बनाते हैं। विद्यालय बालकों तक ही सीमित ही नहीं होते हैं वे शिक्षकों की भी रचना करते हैं। विद्यालयी शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक का कार्य त्रिमुखी होता है:

1. खेल निर्णायक
2. न्यायाधीश
3. परामर्शदाता

खेल निर्णायक के रूप में वह बालकों के उत्तरों को सही या गलत निर्धारित करता है, उन्हें अंक देकर श्रेणीबद्ध करता है और उन्हें कक्षोन्नति देने का निर्णय करता है।

न्यायाधीश के रूप में वह उन बालकों को दोषी सिद्ध करता है जो दिये गये गृह कार्य को पूरा नहीं करते, धोखा देते हैं अथवा स्कूल द्वारा निर्धारित मूल्यों एवं मादण्डों के अनुरूप जीवन व्यतीत करने में असफल रहते हैं।

परामर्शदाता के रूप में शिक्षक यह निर्धारित करता है कि बालकों को स्कूल के अन्दर और बाहर किन नैतिक मूल्यों के अनुरूप व्यवहार करना चाहिए। इस सम्बन्ध में शिक्षक उन्हें परामर्श देता है। (रेमर–1971)

विद्यालय की भूमिका

विद्यालय चार प्रकार के सामाजिक कार्य करते हैं:

1. संरक्षक के रूप में विद्यालय बालकों की देखभाल का कर्त्तव्य पूरा करते हैं, परन्तु यह व्यवस्था अधिक व्यय साध्य है। रेमर का मानना है कि विद्यालय के कार्यों में परस्पर विरोधाभास है, जिसके कारण वे प्रभावहीन हो गये हैं। आधुनिक विद्यालय सामाजिक नियंत्रण का एक प्रभावशाली साधन बनते जा रहे हैं।
2. सामाजिक भूमिका के चयन में सहायता करना विद्यालय का दूसरा कार्य है। यह कार्य शैक्षिक उद्देश्य से मेल नहीं खाता है, क्योंकि उच्चतर माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त विद्यार्थी जब किसी व्यवसाय का चयन करते हैं तो उन्हें

व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम का अध्ययन करना पड़ता है। इस प्रकार सामाजिक भूमिका के चयन में विद्यालयों की उपादेयता निरर्थक सिद्ध होती है। वास्तविकता तो यह है कि स्कूली जीवन में सीखा गया व्यासायिक ज्ञान का मौलिक व्यावसायिक जगत से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। अत: सामाजिक भूमिका के चयन हेतु बालकों में जो व्यासायिक ज्ञान प्राप्त किया जाता है, वह समय व धन की बर्बादी होता है।

3. विद्यालयों का तीसरा कार्य सिद्धान्त बोधन है। लेकिन रेमर का मानना है कि बुरे स्कूल ही सिद्धान्त बोधन का कार्य करते हैं, अच्छे स्कूलों का कार्य तो आधारभूत मूल्यों का ज्ञान देना है। प्राय: सभी विद्यालय बालकों को जीवन मूल्यों की शिक्षा देते हैं। इससे बालक यह नहीं समझ पाते कि अच्छा या बुरा क्या है? सत्य तो यह है कि बालक जिस आयु में प्रवेश लेते हैं, तब तक वह बहुत सारी बातें सीख लेते हैं। परन्तु स्कूल में उन सभी मूल्यों को दबा दिया जाता है य उन्हें दूसरी शिक्षा दे दी जाती है। बालक केवल इतना सीख पाते हैं कि सीखने के लिए उन्हें दूसरों पर आश्रित रहना है।

(रेमर–1971)

4. बालाकों में ज्ञान एवं कौशल के प्रशिक्षण के लिए शिक्षित करना अन्तिम कार्य है। विद्यालय बालकों को विभिन्न तरह का ज्ञान प्राप्त कराते हैं। क्या इन बातों विद्यालय अन्य स्थानों या साधनों की अपेक्षा बेहतर ढंग से सीखते हैं। रेमर का मानना है कि– कभी नहीं। बालकों के बौद्धिक ज्ञान पर स्कूलों का घातक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि वे निम्न स्तरीय व मृत ज्ञान देते हैं।

दूसरी तरफ इवान इलिच भी विद्यालयों के वातावरण को कृत्रिम व भ्रामक मानते हैं। विद्यालय अपने ही लोगों को वास्तविक जीवन से तथा अपने आप से पृथक करते हैं। वह उन्हें उससे वंचित करता है जो किसी पाठ्यक्रम या सृजनात्मक कार्य के मूल में निहित होता है। आधुनिक स्कूल व उसके पाठ्यक्रम एक सामाजिक समस्या बन गये हैं। पाठ्यक्रम संशोधन तथा शिक्षण के पुनर्निर्माण के सभी प्रयास असफल हो रहे हैं। जब तक समाज इस विश्वास का परित्याग नहीं कर देता कि अधिगम अध्यापन का परिणाम होता है अथवा अधिक धन व्यय करके ही शिक्षा उपलब्ध की जा सकती है, तब तक शैक्षिक पुनर्निर्माण की कल्पना करना व्यर्थ होगा। व्यक्ति में इस विश्वास को जागृत करना होगा कि अपनी संस्कृति के साथ समग्र प्रतिभागिता रखने के परिणाम स्वरूप ही अधिगम सम्भव होता है।

(इलिच–1971)

रेमर की मान्यता है कि मानव जाति की उन्नति के लिए संस्थागत स्कूलों को बन्द कर देना चाहिए। आधुनिक स्कूल बालक, समाज तथा राष्ट्र का हित साधन करने के बजाय अहित कर रहे हैं, भेद वर्ग भेद तथा असमानता को बढ़ा रहे हैं। स्कूलों से दिये गये प्रमाण-पत्र उपाधियाँ तथा डिप्लोमा व्यावसायिक कुशलता की दृष्टि से निरर्थक हैं। औद्योगिक समाज में संस्थागत विद्यालयीकरण द्वारा वास्तविक अधिगम का न सिर्फ गला घोंटा जा रहा है वरन् वर्गभेद एवं सामाजिक आर्थिक असमानता का एक पदक्रम स्थापित होता जा रहा है। ऐसे में शिक्षा को बचाये रखने हेतु संस्था से अनिवार्यतः सम्बन्ध-विच्छेद होना चाहिए एवं समुदाय व वैकल्पिक शिक्षा (शिक्षा की मुक्त पद्धति) की तरफ वापस आना होगा।

(एजूकेशन वर्सेज स्कूलिंग, 3 फरवरी 2004)

विद्यालय के बारे में एवरेट रेमर से समन्वय प्रसिद्ध चिन्तक पावलो फ्रेरे से भी मिलता है। पावलो फ्रेरे की मान्यता थी कि स्कूल या विद्यालय के बाहर भी शिक्षा जैसी कोई चीज हो सकती है। विद्यालय में प्रचलित शिक्षा वर्णनात्मक ही है। यदि विद्यालय के अन्दर या बाहर किसी भी स्तर के शिक्षक-छात्र सम्बन्ध का विश्लेषण किया जाय तो इसकी प्रकृति वर्णनात्मक है अर्थात् विद्यालय में प्रचलित शिक्षा भी वर्णन के रोग से पीड़ित है। शैक्षिक भूमिका का निर्वाह करने में विद्यालय अनुपयुक्त हैं, क्योंकि विद्यालयी शिक्षा अमानुषीकरण को बढ़ाया दे रही है। इसलिए विद्यालय से बाहर भी शिक्षा जैसी कोई चीज हो सकती है।

(फ्रेरे-1970)

निर्विद्यालयीकरण

रेमर के निर्विद्यालयीकरण (स्कूल इज डेड) की धारणा में अन्तर्निहित मान्यताएं अधोलिखित हैं–

1. विद्यालयीकरण अर्थात् विद्यालयों में प्रवेश कराने मात्र से ही सार्वभौमिक शिक्षा सम्भव नहीं है।
2. यह न तो शिक्षकों की अपने छात्रों के प्रति परिवर्तित अभिवृत्ति और न ही शैक्षिक हार्डवेयर या साफ्टवेयर के विस्तार या शिक्षक के दायित्व में अभिवृद्धि द्वारा उपलब्ध हो सकती है।
3. इसे सम्भव बनाने के लिए रेमर की दृष्टि में यह आवश्यक है कि वर्तमान विद्यालयों की भांति कोई अन्य विकल्प अपनाये जाएं।
4. डी स्कूलिंग की धारणा में विद्यालयों के कृत्रिम एवं अतिशय प्रभाव तथा प्रभुत्व

पर अंकुश या निषेध लगाना प्रमुख मान्यता है। एक बार प्रभुत्व को समाप्त कर देने पर हमें नये सिरे से प्रभावी विकल्पों के द्वारा शिक्षा, शिक्षण एवं अधिगम के लिए सर्वसुलभ संकुल गठित करने होंगे। इन विकल्पात्मक शिक्षा अभिकरणों को 'री स्कूलिंग' (पुनः विद्यालयीकरण) कहा जा सकता है।

(गजराडो 1993, पाण्डेय–1997)

रेमर ने बहुत से तथ्य एकत्र किए और उनके आधार पर यह प्रतिपादित किया कि वर्तमान शिक्षा समाप्त कर दी जाए तथा नए सिरे से पुनः नई पद्धति के द्वारा वैकल्पिक शिक्षा की व्याख्या की जाए।

एवरेट रेमर एवं भारतीय शैक्षिक संदर्भ

भारत में शिक्षा परीक्षा आधारित है और यही वजह है कि परीक्षा में अच्छा प्रदर्शन नहीं करने को बच्चा जिन्दगी और मौत का कारण मान लेता है। शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास करना है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति में सही मूल्यों का समावेश कराना है ताकि समाज को वह नई दिशा दे सके। न कि शिक्षा के दबाव में आकर आत्म हत्या करे। प्रसिद्ध चिन्तक जान हाल्ट ने ''बच्चे कैसे असफल होते हैं'' अपनी कृति में उल्लेख किया है कि विद्यालय के वातावरण में उन्हें जिस तरह का माहौल मिलता है, उससे खौफ है, भ्रम है, दुविधा है और साथ में है सैकड़ों निर्देश, जिनका अनुकरण करना ही उनकी नियति है। यह वातावरण यथार्थ की उस अनगढ़ छवि से पूरी सरह कट्य होता है, जो बच्चों के मन में होती है। इस वातावरण में अर्थहीन शब्दों की बौछार भी होती है, जिससे बच्चे भ्रमित रहते हैं और ऐसे ज्ञान को पैदा करते हैं जो खण्डित, विकृत और अल्पकालिक तो होता ही है, साथ ही उनकी वास्तविक जरूरतों की पूर्ति तक नहीं कर पाता है।

(शारदा–2007)

भारतीय शैक्षिक संदर्भ के आलोक में यह स्पष्ट होता है जो शिक्षा लोगों में नैतिक मूल्यों के बीज नहीं बो सकती, वह अज्ञानता व निरक्षता से भी बुरी है। परीक्षा उन्मुख शिक्षा प्रणाली के कारण एक छोट्य सा बच्चा भी प्रमाणीकरण के दबाव में होता है। यह सिर्फ एशियाई देशों में है क्योंकि पाश्चात्य देशों में बच्चे कभी फेल होने पर आत्म हत्या नहीं करते। सिर्फ भारत में पिछले वर्ष 4000 बच्चों ने फेल होने पर आत्म हत्या की।

(राजन–2010)

भारतीय शैक्षिक संदर्भ में बालमनोविज्ञान की दृष्टि से फिल्म 'तारे जमी पर' शिक्षा प्रणाली को दर्पण दिखाने का कार्य कर रही है। फिल्म यह प्रदर्शित करती है कि तनावग्रस्त

बच्चों की वास्तविक मनोदशा को यदि समय रहते समझा जाए तो उनमें स्वस्थ, संगतपूर्ण एवं रचनात्मक प्रवृत्तियों का संचार किया जा सकता है। आज बच्चों को परिवार में मिलने वाली अनौपचारिक शिक्षा बच्चों में व्यवहार प्रतिमान, संस्कार, मूल्य एवं आदतों का निर्माण जैसी सामाजिक जिम्मेदारियां भी हमने स्कूलों पर ही डाल दी हैं। स्कूलों की वर्तमान स्थिति यह है कि वहां भारी-भरकम बोझिल पाठ्यक्रम के सामने प्ले वे लर्निंग, शिक्षक के स्वस्थ व्यक्ति की अभिव्यक्ति, कक्षा का प्रत्यक्ष संवाद, छात्रों की वास्तविक समस्याओं से रूबरू होकर उनके निदान के तंत्र का विकास जैसे शिक्षण बिन्दु पृष्ठभूमि में चले गये हैं। वर्तमान शैक्षिक परिदृश्य एवं उनका क्रियात्मक पहलू कोर्स रटाने, परीक्षा सम्पन्न कराने और परीक्षा परिणाम तक ही सीमित होकर रह गया है।

(गुप्ता-2008)

भारतीय शैक्षिक प्रणाली में शिक्षक का स्थान मात्र वेतनभोगी व्यक्ति तथा शिक्षार्थी की स्थिति तोता रटन्त जैसे संवेदना शून्य छात्र की बनकर रह गयी है। निष्कर्षत: भारतीय शिक्षा प्रणाली पुलिसिंग तथा टीचिंग तक ही सीमित होकर रह गयी है। शिक्षा व्यवस्था के साथ समस्या यह है कि पाठ्यक्रम के सामने विद्यार्थी का रचनात्मक व्यक्तित्व कहीं खो गया है। शिक्षा का यह ढांचा व्यक्तित्व विकास को नकारकर बाजारवादी बनाता जा रहा है, जहाँ पूंजी की भूमिका महत्वपूर्ण है। नौकरी और उपाधि के बीच का सहसम्बन्ध भी इस शिक्षा प्रणाली को पाठ्यक्रमोन्मुख बनाने को मजबूर कर रहा है। इस पाठ्यक्रम में भले ही सैद्धान्तिक कौशल है, परन्तु छात्र की क्रियात्मक शक्ति लुप्त होती जा रही है। सुप्रसिद्ध भारतीय चिन्तक जे.कृष्णमूर्ति का मानना है कि विद्यालय को केवल शैक्षिक दृष्टि से ही श्रेष्ठ नहीं होना चाहिए, बल्कि उन्हें समग्र मानव के निर्माण से जुड़ना चाहिए। एक स्कूल का अर्थ है, वह जगह, जहाँ विद्यार्थी मूल रूप से प्रसन्न और आनन्दित है, जहां उसे डराया, धमकाया नहीं जाता। वह परीक्षाओं से भयभीत नहीं है तथा जहां उसे एक ढांचा या पद्धति के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य नहीं किया जाय। विद्यालय को 'अवकाश' का ऐसा स्थान होना चाहिए जहां विद्यार्थी का आन्तरिक रूपान्तरण हो। उन्हें ऐसी गुणात्मक जीवन शैली सिखायी जाय जिसका महत्व व उपयोगिता परम्परागत शिक्षा से प्राप्त ज्ञान के संग्रह से बहुत अधिक हो। व्यक्ति व समाज की अन्तर्क्रिया के परिणामस्वरूप विद्यालय को सामाजिक रूपान्तरण का कार्य करना चाहिए।

(अग्रवाल-2008)

भारतीय शैक्षिक संदर्भ में शैक्षिक एवं आध्यात्मिक चिन्तक श्री सत्य साई बाबा भी संस्थागत विद्यालयी शिक्षा पर अपना दृष्टिकोण व्यक्त करते हैं। लेकिन रेमर, इलिच, पावलो फ्रेरे, जान हाल्ट व पाल गुडमैन जैसे अति कठोर स्थिति नहीं अपनायी जिस प्रकार

एवरेट रेमर ने ''स्कूल इज डेड'' में अपनायी है। सत्य साई बाबा नहीं चाहते कि भारत में शिक्षा का वर्तमान ढांचा बिल्कुल तोड़ डाला जाये और पुनः प्रारम्भ से बनाया जाये, क्योंकि न तो यह सम्भव है और न ही बुद्धिसंगत। वे चाहते हैं कि पूर्वविचारों की जड़वत् अभ्यास मालाएं निकाल दी जाएं तथा उनके स्थान पर रचनात्मक व आध्यात्मिकता का प्रवेश कराया जाय, जिससे जीवन मूल्यों और गुणात्मकता की शिक्षा प्रणाली में पदार्पण हो सके और विद्यालय उच्चस्तरीय ज्ञान, न कि मृत ज्ञान (Dead Knowledge) के माध्यम से सामाजिक रूपान्तरण का कार्य कर सकें।

(सिंह–2002)

भारतीय संदर्भ में रेमर का चिंतन टैगोर, गांधी, जे. कृष्णमूर्ति एवं श्री सत्य साईबाबा के शैक्षिक विचारों से मेल खाते हैं। रेमर की यह अवधारणा प्रासंगिक लगती है कि विद्यालय से बाहर भी शिक्षा जैसी चीज हो सकती है एवं अधिगम, शिक्षण का परिणाम होता है। क्योंकि संस्थागत विद्यालय से प्राप्त ज्ञान मृत नहीं होता है। भारतीय संदर्भ में भारतीय लोकतांत्रिक सामाजिक व्यवस्था के कल्याण के लिए सर्वसामान्य एक रूप में विद्यालयी शिक्षा प्रणाली विकसित की जानी चाहिए। क्योंकि भारत में संस्थागत विषमतायें सामाजिक एकीकरण एवं सद्भाव को नष्ट कर रही हैं साथ ही समतामूल समाज को हानि पहुंचाने वाले सम्पन्न वर्ग को निर्मित करने में प्रोत्साहित कर रही है। परिणामस्वरूप कुछ के लिए गुणात्मक शिक्षा का तर्क सर्वजन के लिए शैक्षिक अवसर असमानता की संभावना को निरंतर क्षीणतर बनाती जा रही है।

निष्कर्षतः एवरेट रेमर के 'स्कूल इज डेड' की अवधारणा का अभिप्राय यह कदापि नहीं है कि स्कूलों का अस्तित्व ही समाप्त कर दिया जाय वरन् स्कूलों के शैक्षिक एकाधिकार को समाप्त किया जाय, समाज के गरीब और वंचित तबके के लोगों को शिक्षा का पूरा लाभ मिले, साथ ही लगातार बढ़ते हुए शिक्षा व्यय को नियंत्रित किया जाय एवं बालकों को अधिगम के मुक्त अवसर प्रदान किए जाएं। इस प्रकार भारतीय संदर्भ में निर्विद्यालयीकरण पूर्णतः अव्यावहारिक है।

शैक्षिक निहितार्थ

किसी भी शोध का लक्ष्य उसकी उपादेयता से परिभाषित होता है। प्रस्तुत शोध पत्र का लक्ष्य केवल ज्ञानात्मक विश्लेषण ही नहीं था अपितु इस संभावना का अनुमान करना भी था कि विवेचनात्मक रूप से एवरेट रेमर के शैक्षिक विचार भारतीय संदर्भ में कितने प्रासंगिक हैं। भारत की शैक्षिक समस्यायें निश्चित रूप से विश्व के किसी भी राष्ट्र से पूर्णतया भिन्न है। साक्षरता की प्रगति की गति इतनी धीमी है कि अब भी विश्व

के सर्वाधिक निरक्षर भारत में ही हैं। सर्व शिक्षा अभियान एवं शिक्षा का अधिकार अधिनियम प्रभावी होने के बावजूद उच्च विद्यालय त्याग एवं विद्यालयों में अनामांकित छात्र आज भी भारतीय विद्यालयी शिक्षा को मुंह चिढ़ा रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में विद्यालय भारतीय संदर्भ में अपने जर्जर स्वरूप में भी सांदर्भिक रूप से प्रासंगिक है। यहाँ रेमर का ''स्कूल इज डेड'' चर्चित कृति की अवधारणा पश्चिमी विकसित राष्ट्रों के औद्योगीकृत एवं व्यावसायीकृत विद्यालयों के संदर्भ में प्रासंगिक प्रतीत होता है। परन्तु भारतीय शैक्षिक संदर्भ एवं संरचना में कुछ अंशों में अप्रासंगिक प्रतीत होता है।

एवरेट रेमर के चिंतन कर सार भारतीय मनीषी परंपरा के अनुरूप है। मनुष्य को शिक्षा के द्वारा श्रेष्ठ, संवेदनशील एवं सभ्य बनाने का प्रयास ही शिक्षा के उच्चतम लक्ष्यों में माना जाता है। यहाँ पर रेमर का शैक्षिक चिंतन भारतीय संदर्भ के समतुल्य प्रतीत होता है क्योंकि रेमर भी निम्नलिखित ज्ञान Alienatted knowledge को मृत ज्ञान डेड नोलेज से संबोधित करते हैं। इसलिए मृत ज्ञान के द्वारा शैक्षिक प्रणाली जीवन की प्रयोगशाला नहीं बन सकती एवं शिक्षा व्यक्ति व समाज को विशिष्ट दिशा नहीं दे सकती।

एवरेट रेमर के चिंतन के आलोक में भारतीय संदर्भ की पुनर्विवेचना की जा सकती है। एवं इसके आधार पर भारतीय शिक्षा के लक्ष्य, विद्यालयों का स्वरूप, उनकी प्रासंगिकता, उनका नवाभिकल्पन, शिक्षण प्रविधियों एवं प्रणालियों में मनोवैज्ञानिकता के समावेश की संभावनाओं को विकसित किया जा सकता है। रेमर द्वारा दिये गये वैकल्पिक शिक्षा को गुणात्मक शिक्षा का रूप दिया जा सकता है। कुछ शैक्षिक संकटों को जो अपनी शैशवावस्था में ही है, एवरेट रेमर के स्पष्ट चिंतन का सहारा लेकर भारत में और अधिक असाध्य होने से पहले ही दूर किया जा सकता है। एवरेट रेमर के विचारों के आलोक में वैकल्पिक शिक्षा के अन्य साधनों को प्रयोग में लाया जा रहा हैं। जैसे- राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय, मुक्त विश्वविद्यालय, दूरवर्ती शिक्षा एवं ई-एजुकेशन का प्रयोग इत्यादि। इसप्रकार शिक्षा की प्रकृति सिर्फ संस्थागत एवं औपचारिक से जीवन प्रयत्न शिक्षा एवं अनौपचारिक शिक्षा के तरफ प्रतिमान परिवर्तन हो रहा है।

(वालिया-2005)

भावी शोध हेतु सुझाव

कोई शोध सिर्फ सैद्धांतिक अवधारणाओं का संयोजन एवं प्रस्तुतिकरण मात्र नहीं होता है, वरन् अपनी पूर्णता के पश्चात् वह नवीन समस्याओं की तरफ इंगित भी करता है। इसप्रकार दृष्टिकोण से भावी शोधकर्ता अधोलिखित शोध समस्याओं पर अपना ध्यान केंद्रित कर सकते हैं-

1. वैश्विक संदर्भ में निर्विद्यालयीकरण का आलोचनात्मक अध्ययन करना।
2. इवान इलिच एवं एवरेट रेमर के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. एवरेट रेमर के शैक्षिक चिंतन का भारतीय शिक्षा की समस्याओं के विशेष संदर्भ में अध्ययन करना।
4. एवरेट रेमर के विचारों का अन्य पाश्चात्य शिक्षाशास्त्री (इनवा इलिच, पाल गुडमैन, पावलो फ्रेरे) के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
5. एवरेट रेमर के चिंतन भारतीय चिंतकों (गिजुभाई, सत्य साई बाबा) के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
6. एवरेट रेमर के चिन्तक के आलोक में विर्विद्यालयीकरण एवं भारतीय शिक्षा प्रणाली में वैकल्पिक सुधार की प्रभावपूर्णता का अध्ययन करना।
7. एवरेट रेमर के शैक्षिक विचारों में विद्यालय एवं समाज के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन करना।

उपरोक्त कुछ बिन्दुओं के अतिरिक्त अन्य शोध बिन्दु शोध कर्ताओं के बौद्धिक पटल पर आ कसते हैं जो इस अध्ययन के भी विभिन्न अवयवों से सम्बन्धित हो सकते हैं।

संदर्भ

अग्रवाल, सरस्वती (2008) जे. कृष्णमूर्ति का चिन्तन, परिप्रेक्ष्य, न्यूपा नई दिल्ली वर्ष 15, अंक-2, अगस्त 2008, पृ-130

इलिच, इवान (1971): डी स्कूलिंग सोसाइटी, न्यूयार्क: हार्पर ऐंड रो।

कुमारी, शारदा (2007) बच्चे असफल कैसे होते हैं? प्राथमिक शिक्षक, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान व प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली वर्ष 32, अंक-1, जनवरी 2007, पृ.-58

गुडमैन, पाल (1964) कम्पल्सरी मिस-एजूकेशन, न्यूयार्क: होरिजन प्रेस।

फ्रेरे, पावलो (1970) पेडागाजी ऑफ आप्रेस्ड, पेनगुइन बुक्स एजूकेशन सीरीज।

राजन, जानकारी (2010) फेल बच्चे नहीं, स्कूल होते हैं, अमर उजाला-12 फरवरी 2010

रेमर, ई. (1971): द स्कूल इज डेड: आल्टर्नेटिव्स इन एजूकेशन, लन्दन: पेनगुइन।

वालिया, शेली (2005): पेडागाजी ऑफ सोशल लिबरेशन, दि हिन्दू, 2 जनवरी।

सिंह, देवेन्द्र (1998) : इवान इलिच के शैक्षिक विचार, भारतीय आधुनिक शिक्षा, अक्टूबर 1998, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली

सिंह, के.एन. (1992): श्री सत्य साईबाबा का शिक्षा-दर्शन : सिद्धान्त एवं व्यवहार में : अप्रकाशित शोध ग्रन्थ, शिक्षा संकाय, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।